विप्लव प्रकाशन संख्या—३१

# अमिता

यशपाल

प्रकाशक

विप्लव कार्यालय, लखनऊ

मार्च १९५६ ] मूल्य ५)

प्रकाशक :—

विप्लव कार्यालय

लखनऊ



मुद्रक

साथी प्रेस

लखनऊ

## समर्पण

भावी युद्धों की आशंका से त्रस्त और विश्व शान्ति की इच्छुक मानवता की ओर से भारत के प्रधान मंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू द्वारा विश्व-शांति के लिये किये गये प्रयत्नों के प्रति सराहना में समर्पित

यशपाल

# प्राक्कथन

इस समय अपने जीवन की अवस्था सुधारने के लिये हमारे समाज की प्रमुख भावना निर्माण की है। इस उद्देश्य के लिए युद्ध के विध्वंस से बचे रहने और विश्व-शांति की आवश्यकता अनिवार्य है। विश्व-शांति के प्रयत्नों को सफल बना सकने में सहयोग देने के लिये मुझे भी तीन वर्ष में दो बार योरुप जाना पड़ा है। स्वभावत: मेरे इस उपन्यास में युद्धों द्वारा लक्ष्यों को प्राप्त करने की अथवा समस्याओं को सुलझाने की नीति की विफलता कहानी का मेरुदण्ड बन गई है।

युद्धों की सम्भावना समाप्त कर देने और चिरस्थायी विश्व-शांति के लिये केवल हमारे देश की ही नहीं बल्कि संसार के सभी राष्ट्रों की जनता व्याकुल है। जिन देशों ने युद्ध के विध्वंस को अपनी छाती पर सहा है, निश्चय ही वे विश्व-शांति के लिये हमारे देश से भी अधिक उत्सुक हैं।

आज मानव-समाज युद्धों की सम्भावना को समाप्त कर देना अपने बस के बाहर की बात नहीं समझता। आज मानव-समाज अंतरराष्ट्रीय शांति की रक्षा के लिये राष्ट्रों की सशस्त्र शक्ति के संतुलन के उपाय की व्यर्थता को भी समझ चुका है। मानव-समाज यह भी देख रहा है कि विध्वंस की शक्ति को बढ़ा सकने की कोई सीमा नहीं है और कोई भी राष्ट्र उस विध्वंस से अक्षुण्ण रह सकने का अहंकार नहीं कर सकता। परलोक की चिंता में इस संसार को भुलाकर अभाव में भी संतोष अनुभव करके शांति बनाये रखने के उपदेश भी निरर्थक प्रमाणित हो चुके हैं।

इन सब भ्रमों से मुक्त होकर मनुष्य ने शांति की रक्षा का अधिक विश्वास योग्य उपाय खोज लिया है। वह है कि मनुष्य अन्तरराष्ट्रीय रूप में दूसरों की भावना और इच्छा पर विश्वास रख कर दूसरों के लिये भी अपने समान ही जीवित रहने और आत्म-निर्णय के अधिकार को स्वीकार करे। सभी राष्ट्र और समाज अपनी राष्ट्र की सीमाओं में, अपने सिद्धान्तों और विश्वास के अनुसार व्यवस्था स्थापित करने और कायम रखने में स्वतंत्र हों। जीवन में समृद्धि और संतोष पाने का मार्ग अपनी शक्ति को उत्पादन में लगाना है, दूसरों को डराकर और मार कर छीन लेने में लगा देना नहीं।

इस प्रमुख समस्या के साथ मौजूद दूसरी आनुशांगिक समस्याओं की भी पूर्णतः उपेक्षा नहीं कर दी जा सकती। हम अपने भौतिक अभावों को पूरा करने के प्रयत्नों के साथ ही अपने समाज के नैतिक स्तर को भी ऊँचा उठाने के लिये चिंतित हैं। व्यक्ति और समाज की नैतिकता का प्रयोजन अपने उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये अधिक समर्थ हो सकना ही है। अनैतिक विचार और व्यवहार व्यक्ति और समाज के शरीर को घुन और क्षय रोग के समान क्षीण कर देते हैं। व्यक्ति और समाज के विकास के लिये नैतिक बल की अनिवार्य आवश्यकता है परन्तु नैतिकता को विचार और तर्क द्वारा मनुष्य के सहज स्वभाव का अंग बनाने का यत्न न कर, भय और दमन द्वारा अपने विचार तथा नैतिक व्यवहार स्वीकार करने के लिये जनता को विवश करना अपनी शक्ति अनुभव करने की इच्छा है और जन-साधारण को दमन की अनुभूति देना और अपराध के लिये प्रेरणा देना है। हिंसा के उपयोग से अहिंसा की स्थापना सब से बड़ी हिंसा है। जन-साधारण को लाठी या तलवार के जोर से मोक्ष के मार्ग पर हांकना उन की मुक्ति नहीं है।

दिव्या के कथानक की भांति अमिता की कहानी भी इतिहास नहीं, कल्पना ही है। इतिहास की प्रमाणित घटना केवल अशोक का कलिंग विजय करने के लिये युद्ध करना और इस युद्ध के परिणाम में भविष्य में युद्ध न करने की प्रतिज्ञा कर लेना ही है। अपनी इस प्रतिज्ञा को अशोक ने शिलालेखों द्वारा चिरस्थायी कर दिया था। इस काल्पनिक कहानी का इतना अंश ही इतिहास है।

यह उपन्यास मेरे दो बार विश्व-शांति सम्मेलनों में योरुप जाने के व्यवधान में लिखा गया है। विश्व-शांति के प्रयत्नों में हमारे देश की जनता, हमारी सरकार की अन्तरराष्ट्रीय नीति और हमारे प्रधान मंत्री पं० जवाहर लाल नेहरू ने जो सक्रिय सहयोग दिया है, वह हमारे लिये गर्व की वस्तु है। पं० नेहरू की सरकार की राष्ट्रीय नीति के कुछ पहलुओं का समर्थन न कर सकने पर भी विश्व-शांति के लिये उनके प्रयत्नों के प्रति आभार प्रकट करने का संतोष पाने के लिये यह उपन्यास पं० नेहरू को प्रतीक रूप मान कर अपने पाठकों को समर्पित कर रहा हूँ।

२२-३-५६ यशपाल

# माता का उपदेश

चैत्य में अष्टधात के विशाल घंटे से टंकोर की मंद गर्जना उठी। नवोदित सूर्य की किरणें घोल कर उजला बना हुआ प्रभात का कुहासा कांप उठा। टंकोर की गूंज कई क्षण तक चैत्य के ऊपर आकाश में मंडराती रही। शेष कलिंग नगर अब भी सोने के तारों से खिंची मसहरी से ढकी शैय्या पर नींद में शिथिल जान पड़ता था। केवल नगर के कुछ भागों में देव स्थानों से आरती के शंख, घड़ियाल और भेरियों के शब्द ही कुहासे भरी स्तब्धता को भंग कर रहे थे।

चैत्य नगर के पश्चिम भाग में प्राचीर के समीप था। उजले कुहासे भरे आकाश में, नये चैत्य की श्वेत पत्थर की बनी प्रशस्त ड्योढ़ी स्वप्न जगत के प्रासाद के द्वार के समान जान पड़ रही थी। ड्योढ़ी के भीतर से उठती, तथागत के वचनों के पाठ की गूंज घने कोहरे में दूर तक न जा पाती थी। समीप आने पर ड्योढ़ी के दोनों ओर अलिन्दों में पीत चीवरधारी, कुशासन पर बैठे कुछ भिक्षु भी दिखाई दे जाते थे। ड्योढ़ी की काले पत्थर की सीढ़ियों के समीप खड़ा राजदंडधारी चारण घंटे की गूंज से सतर्क हो गया। चैत्य की ड्योढ़ी के सामने चार ही कदम पर स्वर्ण-खचित वस्त्रों से ढकी एक पालकी रखी हुई थी। पालकी के डांडों के साथ-साथ पीली पगड़ियों और लाल कुर्तियों पर पीले कमरपट्ट बांधे आठ वाहक बैठे थे। वाहकों ने शीत के कारण सिकुड़ कर अपने घुटनों को बाहों में समेटकर ठुड्डी से लगा लिया था। घंटे की टंकोर से उनका शीत भाग गया। पालकी के दायें-बायें द्वारों

के समीप, दुपट्टों से वक्षस्थल को और धोती से कमर को कसे यवनियाँ खड़ी थीं। टंकोर की गूंज से उनके हाथ में थमे खड्ग सीधे हो गये। पालकी के चारों ओर खड़े सशस्त्र राजपुरुष भी चौकस हो गये। सब आँखें ड्योढ़ी की ओर हो गईं।

चैत्य की ड्योढ़ी से प्राय: पच्चीस कदम की दूरी पर दरिद्र नर-नारियों की छोटी-सी भीड़ खड़ी थी। चार राज पुरुष भीड़ के सामने खड़े होकर उन्हें आगे बढ़ने से रोके हुए थे। भीड़ के लोगों के शरीर पर इस शीत में भी वस्त्र कम ही थे। सिरों पर फटी पुरानी पगड़ियाँ, कमर तक अंगरखे और घुटनों तक कपड़े का छोटा टुकड़ा लिपटा हुआ। कुछ लोग केवल एक धोती में ही कंधे से घुटनों तक शरीर को किसी तरह छिपाये थे। वे लोग कुछ तो शीत से और कुछ राजपुरुषों के भय से सिकुड़े हुए थे। घंटे की गूंज से भीड़ की भयातुर आँखें भी ड्योढ़ी की ओर लग गईं।

चैत्य की ड्योढ़ी में स्वर्ण का कलसा कंधे पर लिये एक राजदासी दिखाई दी। दासी ने ही ड्योढ़ी की छत से लटके घंटे के नीचे से आते हुए बाँह उठाकर घंटे की जिह्वा को हिला दिया था। राजदासी को देखकर राज-दंडधारी चारण ने दंड उठाकर ऊँचे स्वर में घोषणा की—"परमभगवती की जय हो ! प्रजा और पौरजन ससम्मान सावधान ! महामहिमामयी, प्रजापालक, धर्मरक्षक कलिंग की राजेश्वरी के लिये मार्ग दें !"

सोने का कलसा लिये दासी के पीछे ड्योढ़ी में कलिंग की राजेश्वरी राजहंसिनी के समान मंद गति से आती हुई दिखाई दीं। महारानी का शरीर रूखे काले केशों से कमर तक हिम के समान श्वेत दुशाले से ढंका हुआ था। कमर से पाँव के नखों तक भी श्वेत रेशमी वस्त्र का अन्तरवासक लिपटा हुआ था। महारानी माथे को तनिक झुकाये, हाथ जोड़े, मंत्र पाठ करती हुई चल रही थीं। शरीर पर कोई आभूषण नहीं था। उनका सौम्य रूप भक्ति और बौद्ध श्रमणों के लिये निश्चित विनय और शील के नियमों तथा संयम का प्रतीक था। महरानी के पीछे दो दासियाँ बड़े-बड़े थालों में पूजा का प्रासाद लिये आ रही थीं।

चैत्य के सामने राजपुरुषों द्वारा रोकी हुई भीड़ में से कांपती हुई पुकारें सुनाई दीं—

"राजेश्वरी की जय हो।"
"अन्नदाता की जय हो !"
"अभयदान हो ! रक्षा हो !"

पाठ में मग्न महारानी ने भीड़ की अस्पष्ट पुकार सुनी। उन्होंने अनुमान किया, भिक्षार्थियों की भीड़ भिक्षा चाहती है। महारानी ने प्रसाद का थाल लिये एक दासी को भीड़ में प्रसाद बांट देने का संकेत कर दिया और पालकी पर बैठ गईं।

दूर खड़ी भीड़ की ओर से कोलाहल और चीत्कार का और भी ऊंचा स्वर सुनाई दिया—

"भगवती राजेश्वरी की जय हो !"
"अभयदान हो ! रक्षा हो !"
"न्याय की भिक्षा मिले !"

महारानी का ध्यान भीड़ की ओर गया। कुहासे से फूटती किरणों से नेत्रों को ओट देने के लिये भवों पर हाथ से छाया कर उन्होंने भीड़ की ओर देखा और चंवरधारिणी यवनी को सम्बोधन किया—"प्रजा क्या चाहती है ? निवेदन करे।"

यवनी तुरन्त दौड़कर भीड़ को रोके हुए राजपुरुषों के समीप पहुंची। राजपुरुषों ने भीड़ को पालकी की ओर जाने का मार्ग दे दिया। दरिद्र लोग पालकी से कुछ अंतर पर ही रुक गये। उन्होंने पृथ्वी पर माथा रख कर, दण्डवत कर, अभयदान मांग कर न्याय के लिये दुहाई दी।

एक सशस्त्र यवनी ने महारानी का भाव जानकर आगे बढ़कर पुकारा—"परम भगवती, प्रजापालक, कलिंग की राजेश्वरी अभयदान देती हैं ! प्रजा न्याय के लिये प्रार्थना करे !"

भीड़ में से एक वृद्ध ने कांपते हुए आगे बढ़कर,, धरती को छूकर दुहाई दी—"परम भगवती माता, दीनों को न्याय की भिक्षा मिले। अनाथों पर अन्याय हो रहा है। भगवती की प्रजा की बाप-दादा की धरती छीनी जा रही है। प्रजा की झोंपड़ियां उजाड़ी जा रही हैं। अन्नदाता रक्षा हो !"

महारानी के सौम्य, गौर मुख पर चिंता की छाया आ गयी । उन्होंने पालकी के समीप खड़े राजपुरुषों के नायक को सम्बोधन किया—"क्या ऐसा हो रहा है ? ऐसा क्यों हो रहा है ? ऐसा किसके आदेश से हो रहा है ?"

राजपुरुष ने भीड़ को सम्बोधन किया—"परम भगवती, धर्म रक्षक राजेश्वरी जानना चाहती हैं, क्या ऐसा हो रहा है ? ऐसा क्यों हो रहा है ? ऐसा किसके आदेश से हो रहा है ?"

भीड़ में से कई पुकारें एक साथ सुनाई दीं—"राजपुरुष और सैनिक हमारा गांव उजाड़ने का आदेश देते हैं । वे कहते हैं महासेनापति की ऐसी आज्ञा है । हमारी धरती पर एक महादुर्ग बनाया जायगा, एक बड़ा प्रासाद बनाया जायगा ।"

दीन प्रजा की गुहार सुनकर महारानी खिन्नता से सिर उठा कर बोलीं—"नहीं-नहीं ऐसा नहीं होगा । हमें दुर्ग नहीं चाहिये, दूसरा राजप्रासाद नहीं चाहिये । परिग्रह में संतोष और शांति नही है । नायक, प्रजा को आश्वासन दो, ऐसा अन्याय नहीं होगा । किसी का स्थान और धरती नहीं छीनी जायगी । हम आज्ञा देते हैं ऐसा नहीं होगा ।"—नायक ने प्रजा की ओर बढ़कर महरानी का संदेश सुना दिया ।

प्रजा के आर्त और कातर कंठ सबल हो उठे । प्रजा ने ऊँचे स्वर में कलिंग की राजेश्वरी का जय-जयकार किया—

"परम भगवती महरानी कीजय हो ।"
"राजेश्वरी माता का प्रताप अखंड हो ।"
"अन्नदाता माता की जय हो ।"
"दयासागर भगवती की जय हो ।"

चारण ने पालकी के सामने जाकर फिर पुकारा—"परम भगवती महारानी की जय हो ! प्रजा और पौरजन, ससम्मान सावधान ! कलिंग की महामहिमामयी राजेश्वरी के लिये मार्ग दें !"

महारानी की पालकी चैत्य के द्वार से राजप्रासाद की ओर प्रस्थान कर गई ।

× × ×

कलिंग के राजप्रासाद के अन्तःपुर के आँगन में अलिंद और प्रमद-उद्यान के बीच, चिकने श्वेत पत्थर की चौड़ी-चिकनी सीढ़ियों पर, नवयुवती राजदासी हिता युवराज्ञी की प्रतीक्षा में खड़ी थी। हिता का सिर, कंधे और नाभी तक शरीर मोटे पीले वस्त्र से ढंका था। आंचल में कोई हलका बोझ लिये रहने से वस्त्र उसके उभरे हुए वक्ष की गोलाइयों से नाभी की ओर झुका हुआ था। उसकी डमरू जैसी कमर पर कसी लाल धोती में उसके नितम्बों, जांघों और खरादे हुए पलंग के पावों के समान पिंडलियों की गोलाइयाँ छिप नहीं पा रही थीं। हिता शरीर के भार को सम्भालने के लिये बाँया हाथ कमर पर रखे कंधों को तनिक पीछे झुकाये थी। उसके दांयें हाथ में ताजी कुत्ते बभ्रु की साँकल का सिरा था। बभ्रु प्रातः प्रथम मिलन के समय, मन का स्नेह वश न कर पाने के कारण बार-बार अपनी गुलाबी लपलपाती जीभ से हिता का हाथ छू देता था। हिता उसे स्नेह से डाँट देती थी—"हट पागल!" बभ्रु के गले की सांकल व्यर्थ ही धरती पर पड़ी थी। वह स्नेह की साँकल में बंधा स्वयं ही हिता से चिपटा जा रहा था।

हिता और बभ्रु भिन्न जाति के जीव थे परन्तु दोनों के शरीरों की गठन में अनुपात का बहुत कुछ साम्य था। उभरे हुए सुडौल वक्षस्थल, दो हाथों के अर्ध चन्द्रों में समा सकने योग्य कमर। जाँघें भी गठी हुई और गोल। नेत्रों में भी एक जैसी तीक्ष्णता। हेमन्त की कुहासा भरी वायु से दोनों को ही रोमांच हो रहा था परन्तु दोनों में ही तत्परता का भाव था। दोनों प्रतीक्षा में पल-पल अलिंद में खुलने वाली गली जैसी दीर्घिका की ओर देख लेते थे। दीर्घिका की ओर देखते समय बभ्रु का कभी दायां कान खड़ा हो जाता कभी दायां गिर कर बायां कान उठ जाता।

अलिंद की ओर छलाँग मार कर सहसा बभ्रु का शरीर गले में बँधी साँकल पर तुल गया। साँकल तन गई और साँकल को थामे हिता की बांह भी तन गई। अपने स्थान से खिंच न जाने के प्रयत्न में हिता का शरीर भी साँकल पर दूसरी दिशा में तुल गया। उसने आँचल में सम्भले अन्न को गिरने से बचाने के लिए वक्ष पर दबा लिया। बभ्रु की व्याकुलता से हिता ने अनुमान कर लिया कि कुत्ते के तीखे नाक और कानों ने दीर्घिका में युवराज्ञी की आहट पा ली है। पल भर में ही युवराज्ञी दीर्घिका से अलिंद में आ गई।

राजकुमारी अमिता के मोतियों की लड़ियों से बांधे हुए चिकने काले केशों के कुंडल उछल-कूद के कारण उसके गोल, गोरे चेहरे पर बिखर गये थे। राजकुमारी के शरीर पर सोने के तारों से कढ़े लाल दुशाले के कपड़े की बंडी थी। बालिका के फूले हुए शरीर में उदर और कटि का भेद नहीं था। पीले रेशम का छोटा-सा शाटक उस के उदर पर सोने की मेखला से अटका हुआ था। कोमल कलाइयों पर रत्न-जटित छोटे-छोटे कंगन थे। गले में पहनाया गया चन्द्रहार बचपन की उछल-कूद के कारण कन्धे पर अटक गया था।

बालिका महाराज कुमारी प्रति दो पग दौड़ कर तीसरे पग पर उछलती आ रही थी। उसके पीछे-पीछे आता राजकीय कंचुकी वृद्ध उद्दाल, लम्बे चोगे पर राजकीय चिन्ह बांधे, द्रुतगति के कारण हांफ रहा था। उद्दाल का चेहरा श्वेत होकर पीले पड़ गये दाढ़ी-मूंछ से ढका हुआ था। उसके माथे पर अनुभवों की रेखायें थीं जिन्हें उत्तरदायित्व के बोझ ने और भी गहरा कर दिया था। उद्दाल के पीछे-पीछे कुछ अधिक हांफती हुई आ रही थी प्रौढ़ा दासी वापी। वापी के हाथ में राजकुमारी के पांव के छोटे-छोटे, लाल चमड़े के सुन्दर जूते थे।

बभ्रु को स्नेह के आवेश में अपनी ओर लपकते देखकर महाराजकुमारी अमिता ने अपनी छोटी, गोल, मांसल बांह उसकी ओर बढ़ा दी। अमिता के हृदय में भी स्नेह उमड़ आया। उस के नई फूटी लाल कोंपल के समान ओंठ आगे बढ़कर गोल हो गये। उसने कुत्ते को पुचकार लिया—"आ, बभ्रु!"

बभ्रु एक बार पंजे धरती पर छुआ कर और भी वेग से राजकुमारी की ओर लपका। हिता ने सांकल को दोनों हाथों से पकड़कर कुत्ते को रोके रहने के लिये पूरी शक्ति लगा दी। हेमन्त के कुहासे से कंटकित उसका गेहुआं शरीर श्रम की ऊष्णता से चिकना हो गया और माथे पर स्वेद के महीन कण छलक आये। उसे भय था कि स्नेह से उन्मत्त पशु दौड़ कर युवराज्ञी को धक्का न दे-दे। कुंचकी ने दूर से ही तर्जनी उठा कर कुत्ते को शांत रहने के लिए धमकाया। बेचारे पशु ने विवश होकर अपना पेट धरती पर चिपका दिया और मुख धरती पर रगड़-रगड़ कर 'कूं-कूं' करने लगा। अमिता कुत्ते के समीप बैठ गई और प्यार से उसका सिर अपनी गोद में ले लिया और पुचकारने लगी। हिता तब भी बभ्रु की साँकल को सतर्कता से खींचे हुए थी

कि वह स्नेह की मूढ़ता में राजकुमारी के मुख को अपनी जीभ से न छू ले। ज्यों ही बभ्रु अधीर होकर अपनी जीभ अमिता के मुख की ओर बढ़ाता, हिता साँकल खींच लेती।

प्रौढ़ा दासी वापी ने आगे बढ़ कर अमिता के जूते उसके सन्मुख रखकर विनय की—"अम्मे महारानी, जूते पहन लें। घास में छिपा कीट-कंटक कोमल चरणों को काट लेगा। बहुत पीड़ा होगी।"

अमिता ने अपनी घुंघराली अलकें नकार में झटक कर जूते पहनने की प्रार्थना अस्वीकार कर दी और सीढ़ियों से उछलती-कूदती प्रमद-उद्यान में उतरने लगी।

कलिंग की महाराजकुमारी युवराज्ञी अमिता की आयु छः वर्ष की थी। मगध के सम्राट बिंदुसार के पुत्र अशोक ने सिंहासनारूढ़ होने के समय चार वर्ष तक अपने अंतरंग प्रतिद्वन्दियों और शत्रुओं को निर्मूल किया। राजवंश के प्रतिद्वन्दियों से निश्चिंत होकर, अशोक ने अपना राज्याभिषेक कर सम्राट की पदवी ग्रहण की और दक्षिण दिशा में, साम्राज्य प्रसार के लिए, कलिंग देश पर आक्रमण कर दिया। कलिंग के महाप्रतापी, देवरक्षित, धर्मरक्षक महाराजाधिराज करवेल ने साम्राज्य विस्तार की इच्छा करने वाले मगध के सम्राट अशोक के आक्रमण का प्रतिरोध अपने राज्य की सीमा पर स्वयं सेना लेकर किया। हाथी पर चढ़ कर रणक्षेत्र में अपनी सेना का संचालन करते समय कलिंगराज के शरीर में कई बाण लग गये थे। महाराज शरीर में लगे घावों की चिंता न कर अशोक की सेना को अपने राज्य की सीमा से पचास योजन दूर पीछे हटा कर ही राजधानी की ओर लौटे। महाराज युद्ध में तो विजयी हुए परन्तु युद्ध में लगे घावों की चिकित्सा अनेक चतुर वैद्यों और शल्य-क्रिया-दक्ष चिकित्सकों द्वारा एक वर्ष तक की जाने पर भी उन्हें स्वास्थ्य लाभ न हुआ।

जिस समय अशोक ने कलिंग को अपने साम्राज्य में समेट लेने के लिए आक्रमण किया था, कलिंगराज करवेल को राज्यसिंहासन पर आरूढ़ हुए आठ वर्ष बीत चुके थे, परन्तु पूर्ण युवा महाराज उस समय तक निःसन्तान ही थे। एक वर्ष पूर्व महारानी नन्दा ने कलिंग नगर में आये योगी बौद्ध स्थविर जीवक की चमत्कार सिद्धि की प्रशंसा सुनी थी। महारानी सन्तान के अभाव

से दुखी थीं। उन्होंने स्थविर के सन्मुख वंध्यापन का अभिशाप दूर करने के लिये प्रार्थना की थी। स्थविर जीवक के आशीर्वाद से उन्होंने गर्भ धारण किया। ज्योतिषियों द्वारा बताई जिस शुभ घड़ी में महाराज ने अशोक के आक्रमण का प्रतिरोध करने के लिए उत्तर दिशा की ओर रणयात्रा की, उसी घड़ी में महारानी नन्दा ने प्रथम संतान राजकुमारी को जन्म दिया था। राजज्योतिषी ने महाराज के विजय अभिमान के मुहूर्त में राजकुमारी के जन्म को निश्चिय विजय का प्रतीक बताया था और राजकुमारी के अमित, अक्षय वैभव और प्रतापी होने की भविष्यवाणी की थी। ज्योतिषी की गणना के अनुसार राजकुमारी के अमित वैभव और पराक्रम की स्वामिनी होने के विश्वास में राजकुमारी का नाम अमिता रखा गया था।

कलिंगराज वीर प्रकृति थे। भरे यौवन में युद्ध के घावों के कारण वीर गति से देवलोक आरोहण करते समय भी वे व्याकुल नहीं हुए। उन्होंने अपने पिता महाराज मयूक के समय के विश्वासपात्र और अनुभवी महामात्य आचार्य सुकंठ शर्मा, महा सेनापति आर्य भद्रकीर्ति और धर्मस्थ आर्य प्रजित के हाथों में अपने वंश और राज्य की रक्षा का भार सौंपते हुए ही आदेश दिया था कि वे कलिंग के राज्य के उत्तराधिकारी के रूप में एक असहाय शिशु बालिका को छोड़े जा रहे हैं। कलिंग के राजवंश और राज्य मर्यादा का भार राज्य-परिषद के कंधों पर ही होगा।

महामात्य आर्य सुकंठ, महासेनापति भद्रकीर्ति और धर्मस्थ आर्य प्रजित ने महाराज की रोग शैया के समीप घुटने टेक कर शपथ ली थी कि जब तक उन लोगों के शरीर में श्वास रहेगा, वे कलिंग के वंशधरों और कलिंग राज्य की रक्षा करेंगे। महाराज के अन्तिम श्वास लेने से पूर्व ही राजकुमारी अमिता को कलिंग के राज्य सिंहासन की उत्तराधिकारिणी युवराज्ञी घोषित कर दिया गया।

महाराज के देहान्त से महारानी नन्दा का मन उदासी और वैराग्य से भर गया। वे बालिका युवराज्ञी और राज्य के प्रति कर्त्तव्य को निबाहने लगीं परन्तु संसार से सर्वथा विरक्त होकर। राज्य सिंहासन पाने की स्पर्धा करने वाले राजवंश के लोगों ने बालिका युवराज्ञी के हाथ से सिंहासन छीनने का भी प्रयत्न किया परन्तु आर्य सुकंठ, भद्रकीर्ति और प्रजित की सतर्कता

के कारण वे विफल ही रहे। महारानी ने संसार को दुखमय पाकर, शान्ति की कामना से संसार का त्याग कर, संसार में रहने वाले तथागत बुद्ध का मार्ग स्वीकार कर लिया था। वे निष्काम और निस्संग होकर अपना समय शांति और निर्वाण प्राप्त करने की चिंता में बिताने लगीं।

युवराज्ञी अमिता श्वेत पत्थर की सीढ़ियों पर से उछलती हुई प्रमद-उद्यान में उतर आई। हिता ने बभ्रु को सांकल से खोल दिया। कंचुकी ने अपने हाथ में थमा काठ का गेंद, महीन छंटी हुई, ओस से चमकती घास पर लुढ़का दिया। बभ्रु चौकड़ी भरकर गेंद की ओर लपका। राजकुमारी अपने कोमल फूले-फूले हाथों से ताली बजाती हुई कुत्ते के पीछे दौड़ी। दासी हिता राजकुमारी को अपनी बाहों की रक्षा से दूर न होने देने के लिए उसके पीछे-पीछे साथ-साथ दौड़ रही थी। वृद्ध कंचुकी और प्रौढ़ा दासी वापी भी उनके पीछे चल रहे थे।

बभ्रु गेंद को अपने मुंह में दबाकर तुरन्त लौटा और गेंद उसने अमिता के हाथ में दे दिया। अमिता ने अपनी छोटी बांह की सामर्थ्य भर गेंद को फिर फेंक दिया। गेंद अधिक दूर न जा सका। कुत्ता गेंद को तुरन्त उठा लाया। इस बार राजकुमारी की इच्छा से हिता ने गेंद को खूब दूर फेंका। काठ का गेंद लुढ़कता हुआ प्रमद-उद्यान के जल-कुंड में जा गिरा और तैरने लगा। बभ्रु भागते हुए गेंद को पकड़ लाने का आदेश समझ कर, जल-कुंड में कूद पड़ा और गेंद को मुख में लिये अमिता की ओर दौड़ा आ रहा था। हिता को आशंका हुई। कुत्ता अपने भीगे शरीर से राजकुमारी के वस्त्रों को भिगो न दे। उसने सामने दौड़कर कुत्ते को गले में पड़ी हंसली से थाम लिया।

हिता ने युवराज्ञी का ध्यान भीगे कुत्ते की ओर से हटाने के लिए जल-कुंड के किनारे पत्थर से बने मंडप की ओर संकेत कर निवेदन किया—"महारानी पक्षियों को अन्न खिलायेंगी ?"

"हाँ, हाँ खिलायेंगी !"—बालिका राजकुमारी प्रसन्नता से किलक उठी।

हिता ने बभ्रु को वृद्ध कंचुकी के समीप बैठा दिया और अपने आँचल की झोली में हाथ डालकर मंडप की छत और समीप खड़े कदम वृक्षों की ओर मुंह कर पुकारा—"आओ ! आओ !"

हिता की पुकार से बहुत से कबूतरों के 'घुंटर घूं-घुंटर घूं' बोल उठने का स्वर सुनाई दिया और कबूतर अधर में पर तौलते हुए उसकी ओर उड़ आये। कुछ कबूतर हिता के सिर और कंधों पर आ बठे, दो उसके हाथ पर स्थान पाने के लिये लड़ने लगे, कुछ धरती पर व्यग्रता से घूम-घूम कर दाना चुगने लगे।

"हम हम, हम, खिलायेंगे ! अपने हाथों से कपोतों को खिलायेंगे"—अमिता ने आग्रह से पुकारा, "हमारे सिर पर कपोत बैठाओ !"

हिता ने राजकुमारी की कोमल गुदगुदी हथेलियों और सिर पर अन्न के दाने रख दिये। दो कबूतर दाना चुगने के लिये राजकुमारी के शरीर पर बैठे ही थे कि बभ्रु कंचुकी के हाथ से छूट कर राजकुमारी के शरीर पर आक्रमण करने वाले पक्षियों पर झपट पड़ा। आतंकित पक्षी तुरन्त पर फड़-फड़ाते हुए उड़ गये। राजकुमारी किलककर, ताली बजाकर इस खेल पर हंस पड़ी। बभ्रु ने दुस्साहसी पक्षियों को उनकी धृष्टता के लिये भौंक-भौंक कर धमकाया।

अमिता ने अपने नन्हें-नन्हें हाथों से बभ्रु का सिर प्यार में थपथपा कर समझाया—"तू निरीह कपोतों को क्यों आतंकित करता है ? अम्मा कहती हैं, किसी से छीनो मत, किसी को डराओ मत, किसी को मारो मत ! तू भूखा है तो मैं तुझे दूध-भात खिलाऊंगी। तू कपोतों से मत छीन !"

कंचुकी का संकेत पाकर बभ्रु सिर झुकाकर उसके समीप जा बैठा। हिता ने फिर कबूतरों को राजकुमारी के समीप बुलाया। आतंकित पक्षियों ने संदेह से उस ओर देखा और सकुचाते हुए मंडप की मुंडेर और कदम्ब की टहनियों से नीचे उतरे। हिता के बहुत साहस बढ़ाने पर पक्षी फिर राजकुमारी के शरीर पर आ बैठे। बभ्रु दूने क्रोध से पक्षियों पर टूट पड़ा। पक्षी फिर भयभीत होकर उड़ गये।

युवराज्ञी अमिता बभ्रु की इस उद्दंडता से उद्विग्न हो गई। कंचुकी उद्दाल को सम्बोधन कर उसने पुकारा—"मामा, यह बभ्रु बड़ा दुष्ट है। यह निरीह कपोतों से छीनता है, उन्हें डराता है, उन्हें मारता है। अम्मा कहती हैं किसी से छीनो मत, किसी को डराओ मत, कसी को मारो मत। हम इसे दंड देंगे। इसे सांकल में बंदी बना दो !"

वृद्ध उद्दाल ने बभ्रु के गले में पड़ी हंसली में सांकल फंसा दी और अबोध पशु पर युवराज्ञी के क्रोध के लिये क्षमा प्रार्थना की—"अम्मे महरानी, इस अबोध पशु ने तो यही सीखा है। सेवक बभ्रु ने तो महारानी के शरीर की रक्षा की है। देवलोक प्राप्त, परम प्रतापी महाराज की सेवा में, आखेट में जाकर, यह सिंह और वराह के भी महाराज की ओर बढ़ने पर सदा रक्षा के लिए तत्पर रहा है। इसी भक्ति और स्नेह के कारण यह महाराज की कृपा और स्नेह का पात्र रहा। उन महाप्रतापी महाराज के धनुष की टंकार से पृथ्वी को जीतने का दर्प करने वाले चंड अशोक की वीरता कायरता में परिणित हो गई। अम्मे महारानी, बभ्रु उन्हीं कलिंग राज का सेवक है। वह अपनी स्वामिनी युवराज्ञी का अंग-स्पर्श किसी जीव को कैसे करने देगा ?"

वृद्ध उद्दाल से सदा रोचक और रोमांचक कथायें सुनते रहने के कारण युवराज्ञी को वृद्ध की बात ध्यान से सुनने का अभ्यास था। अमिता के भोले चेहरे पर खिन्नता के स्थान पर चिंता और विचार का भाव आ गया। वृद्ध के श्वेत श्मश्रु से ढके मुख की ओर मुख उठाकर उसने प्रश्न किय—"मामा, दूसरों से छीनना, दूसरों को डराना, दूसरों को मारना वीरता है ? अम्मा कहती हैं, ऐसा नहीं करना चाहिए। अम्मा कहती हैं, यह पाप है। पाप नहीं करना चाहिये।"

उद्दाल ने कुछ संकोच से स्वीकार किया—"अम्मे महारानी, परम भगवती सत्य कहती हैं। महारानी, वह धर्म, सम्पन्न स्वामी वर्ग और त्यागी संतों को शोभा देता है। राजवंश के सेवकों को स्वामी भक्ति और साहस ही शोभा देता है।'

युवराज्ञी का खेल में उत्साह जाता रहा। वह उदासी से सिर हिला कर बोली—"नहीं, बभ्रु बहुत दुष्ट है।.........अच्छा हम अम्मा के पास जायेंगे।"

युवराज्ञी की उदासी देखकर प्रौढ़ा धापी ने आगे बढ़ हिता को सम्बोधन किया—"अम्मे महारानी के लिए नये कुरंग शावक आये हैं। तूने कहां छिपा कर रखे हैं री ? महारानी उन्हें देखेंगी !"

हिता ने राजकुमारी के सम्मुख झुक कर और विनय से मुस्कराकर हाथों

के संकेत से बताया --"इतने-इतने, छोटे-छोटे, प्यारे-प्यारे कुरंग शावक बड़े जलकुंड के समीप टुक-टुक करके दूब चर रहे हैं। महारानी उन्हें देखेंगी ?"

अमिता को नये आये हिरणों के बच्चे देखने का चाव नहीं हुआ। वह नकार में सिर हिलाकर हठ करती रही—"अभी नहीं, अभी हम अम्मा के पास जायंगे।"

उद्दाल ने राजकुमारी के समीप पाँव पर बैठ कर निवेदन किया—"अम्मे स्वामिनी, परम भगवती महारानी माता की शिविका पूजा के लिए चैत्य गई है। अभी लौटी नहीं।"

वापी अमिता के बहुत समीप बैठ कर रहस्य के स्वर में बोली—"महारानी, नये कुरंग शावकों को जो पहले अपने हाथ से दूब खिलायेगा, शावक उसी के मित्र बन जायंगे।" फिर प्रौढ़ा ने स्वर ऊँचा करके वारणा की, "हितू, तू पहले शावकों को दूब मत खिलाना। पहले महारानी खिलायेंगी।"

हिता ने हिरण के बच्चों के प्रति करुणा प्रकट करने के लिये ठुड्डी पर उंगली रखकर प्रार्थना की—"महारानी, बेचारे छोटे-छोटे शावक तो बड़े भूखे हैं।"

आँगन की ओर से उद्यान में आकर एक दासी ने कंचुकी को संदेश दिया—"मामा, परम भगवती की शिविका चैत्य से लौट आई है। महारानी युवराज्ञी को अभिमंत्रित जल का आचमन कराने और आशीर्वाद देने के लिए स्मरण कर रही हैं।"

×

राजप्रासाद के अन्तःपुर के दूसरे तल्ले के एक अलिंद में बालिका युवराज्ञी अमिता लगभग अपने कंधों तक ऊंचे बभ्रु को सांकल से थामे लिए जा रही थी। कुत्ता अपनी साँकल राजकुमारी के हाथ में होने और उसके साथ चलने के गर्व में सीना फुलाये चल रहा था। अमिता बभ्रु को उपालम्ब के स्वर में धमकाती जा रही थी—"तू बहुत दुष्ट है। तू दूसरे जीवों से छीनता है, दूसरे जीवों को डराता है, दूसरे जीवों को मारता है, तुझे अम्मा से दण्ड दिलायेंगे।" अमिता के पीछे-पीछे हिता, उद्दाल और वापी चले आ रहे थे।

अमिता महारानी के द्वार पर पहुंचती तो हिता ने आगे बढ़कर बभ्रु को हंसली से रोक लिया। राजकुमारी ने द्वार के भीतर जाकर कुत्ते को साँकल से खींचते हुए आग्रह किया—"आने दो बभ्रु को ! यह बहुत दुष्ट है। हम इसे अम्मा से दण्ड दिलायेंगे।"

हिता ने नेत्रों में स्नेह और विनय का भाव ले और भय दिखाने के लिये दांतों में उंगली दबाकर राजकुमारी को याद दिलाया—"परम भगवती, माता के कक्ष में कुत्ते का जाना उचित नहीं।"

"न वत्से, बभ्रु यहाँ नहीं आयेगा। यह भगवान का स्थान है, देव स्थान है।"—महारानी का स्नेह-सिक्त स्वर सुनाई दिया, "वत्से, बेचारे बभ्रु को बांध क्यों लिया है ? बेटी, इसे बाहर खेलने दो न !"—महारानी अमिता की ओर बढ़ती हुई बोलीं।

अमिता बभ्रु की सांकल हाथ में लिये माता के घुटनों से लिपट कर और नेत्र माता के मुख की ओर उठाकर आवेश के स्वर में बोली—"अम्मा, बभ्रु बहुत दुष्ट है। अम्मा तुम कहती हो, किसी से छीनो मत, किसी को डराओ मत, किसी को मारो मत ! अम्मा, बभ्रु कपोतों से छीनता है, उन्हें डराता है, उन्हें मारने के लिये दौड़ता है इसलिये हमने इसे बांधकर दंड दिया है।"

"अच्छा मेरी चन्दा"—महारानी बेटी के कपोलों को स्नेह से पुचकार कर बोलीं, "मेरी बेटी की धर्म में ऐसी ही आस्था और प्रवृत्ति रहे। बेटी, तू क्षमाशील हो। तू इस अबोध को क्षमा कर दे। तू आ, अभिमंत्रित जल का आचमन कर ले, भगवान का आशीर्वाद ले ले।"

कंचुकी ने आगे बढ़ कर राजकुमारी के हाथ से कुत्ते की सांकल ले ली ! अमिता ने कंचुकी से अनुरोध किया—"मामा, बभ्रु को अभी मत जाने देना। हम उसे दूध भात खिलायेंगे।"

महारानी का कक्ष आकार में बड़ा और भव्य था परन्तु विलास की सामिग्री हटा दी जाने से सूना जान पड़ रहा था। सामने भित्ती के साथ बना दी गयी वेदी पर स्वर्ण-पात्र में सुदूर नालन्दा से प्राप्त भगवान तथागत का धातुशेष रखा हुआ था। स्वर्णपात्र के समीप अष्टधात के एक पात्र से सुगंधित द्रव्यों का पवित्र धूम शनैः-शनैः उठ रहा था और एक घृत दीप दिन के प्रकाश में

ज्योतिहीन होकर भी जल रहा था। वेदी के समीप ही एक चौकी पर चैत्य की पूजा से लाया गया अभिमंत्रित जल का, सोने का कलसा रखा हुआ था और दूसरी चौकी पर पूजा के प्रसाद से भरा थाल। दाहिनी ओर की भित्ती के साथ श्वेत चिकनी शिलाओं से जोड़े गये फर्श पर एक मोटा, कोमल, ऊनी कालीन महारानी के विश्राम के लिये बिछा था। कालीन के समीप चांदी की बनी घोड़ी पर एक धर्म ग्रन्थ पाठ के लिये खुला हुआ था।

महारानी ने अमिता को गोद में समेट लिया और मंत्र पाठ करते हुए उन पर अभिमंत्रित जल छिड़का और फिर दूसरे छोटे सोने के पात्र से पुत्री को आचमन करा दिया। उन्होंने अमिता के सिर पर हाथ रख, नेत्र मूंद कर प्रार्थना की—"तेरा कल्याण हो। धर्म में तेरी आस्था और प्रवृत्ति रहे। तू सदा बहुजन के लिये बहुजन के सुख के लिये, बहुजन के परित्राण के लिये यत्न करे। तू किसी से मत छीनना, तू किसी को डराना मत, तू किसी को मारना मत। धर्म, भगवान और संघ तेरे रक्षक और सहायक होंगे।"

महारानी के प्रार्थना समाप्त कर नेत्र खोलते ही अमिता उत्साह से पुकार उठी—"अम्मा सुनो, कपोत हमारे हाथ पर बैठ गया, हमारे सिर पर·······"

महारानी ने बेटी की बात की ओर ध्यान न देकर कंचुकी उद्दाल को संकेत से समीप बुलाया और बोलीं—"कंचुकी मामा, तुमने सुना है कि कोई नया दुर्ग अथवा नया राजप्रासाद बन रहा है ?"

जिस समय महारानी नन्दा राज-बधु के रूप में प्रासाद में आई थीं, कंचुकी उद्दाल के श्मश्रु श्वेत हो चुके थे। राजमाता उसे कंचुकी भाई पुकारती थीं। महारानी नन्दा ने उद्दाल को कंचुकी मामा ही सम्बोधन किया था। तब से प्रासाद में उद्दाल को सभी मामा कह कर पुकारने लगे थे।

उद्दाल ने विनय से सिर झुका कर उत्तर दिया—"परमभगवती अन्नदाता, सुना है प्राचीर के बाहर उत्तर में एक दुर्ग बनेगा और नगर प्राचीर उत्तर में फैल जायगा।

अमिता माँ का ध्यान अपनी बात की ओर न देखकर उनका ध्यान पाने के लिये सामने हो, माँ का हाथ पकड़ कर उत्तेजना से बोली—"अम्मा, कपोत हमारे सिर पर और हाथ पर बैठ गया तो·······"

महारानी बेटी को मुखके सामने से हटा कर अंक में समेटती हुई कहती गई—"परन्तु कंचुकी मामा क्यों ? क्या आवश्यकता है दुर्ग की ?"

उद्दाल ने फिर विनय से सिर झुका कर उत्तर दिया—"अन्नदाता, क्षमा हो, यह तो दास नहीं जानता ! ऐसा भी सुना है, फिर युद्ध होगा।"

अमिता अपनी बात सुनाने के आग्रह में फिर माता के सामने हो कर बोलने लगी—"अम्मा, अम्मा, सुनो ! बभ्रु ......"

महारानी ने फिर बेटी को सामने से हटाकर अंक में भर लिया और माथे पर चिंता की रेखायें डाल कर कंचुकी को सम्बोधन किया—"कंचुकी मामा, किसकी आज्ञा से दुर्ग बन रहा है ? किसके आदेश से ऐसा हो रहा है ?"

उद्दाल ने फिर सिर झुकाकर उत्तर दिया—"अन्नदाता क्षमा हो, दास यह नहीं जानता।"

अमिता फिर मां के सन्मुख होकर उन का मुख अपनी हथेलियों में ले अपनी बात सुनाने का आग्रह करने लगी—"अम्मा, अम्मा, बभ्रु बहुत जोर से भौं भौं........"

महारानी ने फिर बेटी की बात अनसुनी कर उसे स्नेह से अंक में दबा लिया और उद्दाल को अधिक समीप आने का संकेत कर बोलीं—"कंचुकी मामा, आज प्रजा ने चैत्य के द्वार पर हमसे न्याय और दया की प्रार्थना की है। दुर्ग बनाने के लिये प्रजा की धरती और निवास छीना जा रहा है। यह निर्दयता और अन्याय हम नहीं होने देंगे। तुम जाकर देखो, दुर्ग क्यों बन रहा है ? किस के आदेश से बन रहा है ? तुम महाराज के पितामह के समय से इस वंश के सेवक हो। देखो, इस वंश से कोई पाप और अन्याय नहीं होना चाहिये। इस वंश पर किसी की हाय न पड़े। बसते को उजाड़ना पाप है। यह दुर्ग नहीं बनेगा।"

कंचुकी ने आदेश स्वीकार करने के लिये सिर झुकाया और पीठ महारानी की ओर न करने के लिये सिर झुकाये, उल्टे कदमों कक्ष के द्वार की ओर चला गया।

अमिता ने कंचुकी को जाते देखा तो मां की गोद से छूट कर उद्दाल का हाथ थाम लिया और बोली—"मामा, कहाँ जा रहे हो ? हम भी जायेंगे !"

महारानी ने बेटी को समझाया—"वत्से, कंचुकी मामा कार्य से बाहर जा रहे हैं। बेटी हितू के साथ झूला झूलेगी। अमिता कंचुकी के घुटनों से लिपट गई, "हम मामा के साथ जायंगे।"

उद्दाल ने युवराज्ञी को दुलार से समझाया—"महारानी बेटी को हिता छम-छम नाचकर दिखायेगी। दास महारानी बेटी के लिये फूल लायेगा।"

अमिता ने हठ में सिर हिला कर आग्रह किया—"नहीं नहीं, हम मामा के साथ नगर विहार करेंगे। हम मामा के साथ जायंगे।"

अमिता का आग्रह देखकर महारानी बोलीं—"अच्छा अच्छा, तो बेटी भोजन कर लें! उन्होंने उद्दाल को आदेश दिया, "बेटी का भोजन-विश्राम हो जाय तभी जाना। ले जाना, बेटी का विनोद हो जाअगा। बेटी तू शिविका पर जायगी अथवा हाथी पर ?"

अमिता ने प्रसन्नता से उछल कर उत्तर दिया—"हाथी पर, बड़ी हथनी लक्ष्मी पर।"

अमिता कंचुकी की बांह छोड़ हिता की बांह से लटकती हुई चली गई।

× ×

दिन का तीसरा पहर बीत रहा था। कलिंग नगर के उत्तर में प्राचीर के साथ बांस के जंगल से घिरी टेकरी पर बसे वेणुक गांव में वृक्षों की छाया पूर्व की ओर फैलने लगी थी। छप्परों की मिट्टी की छोटी-छोटी भीतें भी पश्चिम की ओर धूप पाकर पूर्व की ओर छाया डालने लगी थीं। बस्ती के बीचोंबीच खड़े पीपल के वृक्ष के नीचे नाग पूजा के चौरे के चारों ओर चटाइयां डाले कुछ लोग दोपहर की नींद ले रहे थे। चौरे के साथ धनुष, तूणीर, खड्ग और भाले टिके हुए थे। सोये हुए लोगों के समीप पड़ी पगड़ियां और कमर पट्टे भी एक ही रंग के थे। जान पड़ता था कि सोये हुए लोग कलिंग के राजपुरुष अथवा सैनिक थे।

गाँव के दूसरे वृक्षों और झोपड़ियों की छाया में बंधे पशुओं के समीप बैठे लोग बांस चीर कर चटाई, डलिया और पिटारी बनाने में व्यस्त थे।

गांव के बच्चे बिना वस्त्र के, कुछ कौपीन बांधे और कुछ कंधों पर झगला डाले पीपल के समीप ही धरती में छिद्र अथवा नालियां बनाकर खेल रहे थे। चौरे से कुछ दूर दही-भात खाकर फेंके हुए केले के पत्तों के टुकड़े पड़े थे। तोड़ देने के लिए फेंके हुए मिट्टी के प्याले-प्यालियाँ बिखरे हुए थे। किसी-किसी छप्पर से अन्न कूटने के शब्द की गूंज भी सुनाई दे रही थी।

पीपल के नीचे चटाई पर सोये हुए सैनिकों में से एक की नींद खुली। वह उठकर घुटनों को बाहों में समेट कर बैठ गया। जम्हाई लेते हुए उसने दूसरे सैनिकों को सम्बोधन किया—"अरे तुम लोग कब तक सोते रहोगे! देखो, सूर्य पश्चिम की ओर ढलने लगा।"

सैनिक की पुकार से जाग उठे सैनिकों में से एक ने शरीर को अंगड़ाई में तानते हुए उत्तर दिया—"हमारे सो लेने में तुम्हें क्या आपत्ति है? हम उठ कर सूर्य को ढलने से रोक लेंगे?" दूसरे ने उसकी बात पूरी की, "और क्या, हम यहां नायक की आज्ञा से सैनिक कार्य के लिए ही तो आये हैं।"

एक और सैनिक करवट से कोहनी का सहारा लेकर उठा और बोला—"तथागत की भक्त दयालु महारानी ने बस्ती के लोगों को उनकी धरती पर बसे रहने का आश्वासन दे दिया है तो हमें यहां करना ही क्या है? शिविर में ही तो लौटना है। चंड अशोक अभी बहुत दूर है। घाम में शिविर में न लौट कर विश्राम के लिए लेट गये तो हानि क्या हुई?"—दूसरे सैनिक भी उठ कर बोलने लगे, "अब तो लौटना ही ठीक है।.........चलो भाई, अब चलो!"

बात करने वाले सैनिकों में से एक ने दूर बैठे अपने काम में व्यस्त लोगों को सुनाने के लिए समीप खेलते बच्चों की ओर देखकर पुकारा—"अरे तुम्हें पैदा करने वाले कहां गये? या तुम यों ही आकाश से टपक पड़े हो! दोपहर से पहले जब झोपड़ियां उजड़ जाने का त्रास था, सब हाथ बाँधे सामने खड़े थे। गुड़, दही, भात खिलाये बिना नहीं माने। अब किसी को एक लोटा जल देने की भी चिंता नहीं। यह नहीं सोचते कि आदमी अघा कर दिन में सोता है तो उठ कर उसे प्यास भी लगती है। सो कर उठने पर कुल्ला करने, मुंह धोने की आवश्यकता भी होती है।"

सब से पहले उठने वाले सैनिक ने उसे टोक दिया—"तुम तो ऐसे बिगड़ रहे हो जैसे गांव में बरात लेकर आये हो और तुम्हारा सत्कार नहीं हो

रहा। गांव के लोग भले हैं। उन्होंने भोजन से तुम्हारा सत्कार किया है तो जल भी दे ही देंगे।"—सैनिक ने स्वर ऊँचा कर दूर बैठे लोगों को सम्बोधन किया, "अरे बाबा, एक कलसा जल तो.........।"

सैनिक अपनी बात पूरी नहीं कर पाया। टेकरी पर पूर्व की ओर से चढ़ने वाले मार्ग पर अत्यन्त समीप घोड़े की टाप ने उसका ध्यान खींच लिया। तत्क्षण ही अश्वारोही की ललकार सुनाई दी—"इतना प्रमाद ?.........यह सैनिक कर्त्तव्य है ?"

पीपल के नीचे चटाइयों पर बैठ कर जम्हाइयां लेते और लेटे हुए सैनिक हड़बड़ा कर उठ खड़े हुए और अश्वारोही सेनानायक को झुक-झुक कर अभिवादन करने लगे। सेनानायक ने सैनिकों के विनय और अभिवादन की उपेक्षा कर क्रोध में प्रतारणा की—"मूर्खो, तुम्हें यहाँ कल दोपहर से उपवन-विहार करने और नाच-गान की समज्या का रंग जमाने के लिए भेजा गया था या चौबीस घड़ी में दुर्ग के लिए स्थान रिक्त कराने के लिए ? तुम यहाँ समज्या से थके विलासियों की तरह विश्राम कर रहे हो !"

सब से पहले जागने वाले सैनिक ने फिर विनय से झुक कर निवेदन किया—"स्वामी यूथप, ग्रामवासी कहते हैं, भगवती महारानी ने उन्हें अभय-दान दिया है। उन का स्थान दुर्ग के लिए रिक्त नहीं होगा। वे यहाँ ही रहेंगे। स्वामी यूथप इसलिये..........।"

सैनिक की बात सुनकर यूथप क्रोध से घोड़े की पीठ पर उछल पड़ा। उसने ऊँचे स्वर में सैनिकों की भर्त्सना की—"परम भगवती की आज्ञा हम नहीं जानते ! दुर्ग के लिए और कौन स्थान हो सकता है ? महासेनापति, महारानी की आज्ञा नहीं जानते। हमारी आज्ञा ही महारानी की आज्ञा है। चंड अशोक सिर पर चढ़ा आ रहा है। यह कायर झोपड़ियों के मोह में पागल हैं। इनके बसने के लिए राज्य में और स्थान नहीं है ? महासेनापति ने इन्हें वृकदन्त पर दूना स्थान दे दिया है। कल यहाँ शिविर का निर्माण आरम्भ होगा।"

यूथप ने झोपड़ियों की ओर बाँह उठा कर आज्ञा दी—"इसी क्षण सब लोग झोपड़ियों से बाहर हो जायें। गिरा दो झोपड़ियों को। अभी आग लगा

दो इन झोपड़ियों में। कोड़े मारकर इन्हें यहाँ से हाँक दो। जो बाधा डाल उसे बाँध लो।"

यूथप के मुख का अन्तिम शब्द पूरा होते ही पन्द्रहों सैनिक पीपल के नीचे नाग चौरे के सहारे टिकाये हुए अपने शस्त्रों की ओर लपक पड़े। वृक्षों के नीचे, झोपड़ियों में और आस-पास काम में व्यस्त गांव के सब स्त्री-पुरुष अपना काम छोड़ कर हाथ बाँधे यूथप के सन्मुख आकर, भूमि छू-छू कर दुहाई देने लगे—"स्वामी नायक की जय हो। महारानी ने हम दीनों को अभय-दान दिया है। दीन प्रजा की भूमि नहीं छीनी जायगी।"

यूथप के नेत्र क्रोध से लाल हो चुके थे वह और भी क्रोध से बोला "महारानी के आदेश से तुम्हें अभयदान और दूना भूमिदान भी हो चुका है। महारानी की आज्ञा हम नहीं जानते ? महारानी की आज्ञा महासेनापति नहीं जानते ? महारानी का आदेश है राज्य की रक्षा हो। यही महारानी की आज्ञा है। जो कुछ तुम्हारा है, वह बटोरने के लिए इसी पल जाओ नहीं तो सभी कुछ अग्नि के अर्पण होगा।"

ग्रामवासी फिर भूमि स्पर्श कर महारानी से पाये अभयदान की बात दोहराने लगे। ग्रामवासियों के इस हठ से यूथप आपे से बाहर हो गया। उसने सैनिकों को ललकारा—"मूर्खो, क्या देखते हो। लगा दो आग इन झोपड़ियों में। जो प्रतिरोध करे कोड़े मार कर हाँक दो, बाँध कर डाल दो।"

कुछ ही पल में कोहराम मच गया। दो सैनिक झोपड़ियों के भीतर घुस कर आग ले आये और जलता हुआ फूस छप्परों पर फेंकने का आतंक दिखा कर ललकारने लगे—"निकलो ! इसी क्षण भागो !"

ग्रामवासियों की गुहारें सुनाई देने लगीं और स्त्रियों और बच्चों के चीख-चीख कर रोने के स्वर भी। इस पर भी महारानी का नाम ले-ले कर दुहाई देते जाने वाले लोगों में से एक को सैनिकों ने बाँध कर यूथप के सामने डाल दिया और एक को रस्सी का कोड़ा बना कर पीटने लगे। एक छप्पर में आग भी दे दी गई।

यूथप क्रोध की अग्नि आँखों म भरे, घोड़े की पीठ पर सवार यह कांड देख रहा था। अपने सैनिकों की शिथिलता और ग्रामवासियों के कदर्य व्यवहार

से यूथप इतना उद्विग्न था कि कुछ दूर से आती और उत्तरोत्तर बढ़ती जाती हाथी के गले के घंटे की गूंज को भी उसके कान सुन नहीं पाये। मारपीट में लगे सैनिक और त्राहि-त्राहि पुकारते ग्रामवासी तो उस ओर क्या ध्यान दे पाते।

हाथी के गले के घंटे की टंकोर समीप ही बहुत ऊंचे गूंज उठी और साथ ही पुकार सुनाई दी—"परमभगवती महारानी की जय हो! ठहरो, ठहरो! महारानी की आज्ञा नहीं है।"

इस पुकार से यूथप की क्रोधाग्नि में घी पड़ गया। उसने तड़प से घूमकर पुकारने वाले की ओर देखा। पूर्व की ओर से आने वाले मार्ग से एक राजकीय हाथी उसके पीछे आ पहुंचा था। हाथी के ऊपर हौदे में खड़ा राज चिन्हधारी कंचुकी दोनों बाहें उठाकर पुकार रहा था—"ठहरो! ठहरो! परमभगवती ने प्रजा को अभयदान दिया है। महारानी का आदेश है, दीन प्रजा के साथ अन्याय न हो!"

यूथप, सैनिक और त्राहि-त्राहि चीखते-पुकारते पुरुष, स्त्रियां और बच्चे सभी स्तब्ध रह गये। हाथी बैठ गया। कंचुकी हौदे से निकल कर हाथी की पूंछ के सहारे और हाथी के साथ-साथ चलने वाले चार बल्लमधारी शरीर रक्षक सैनिकों में से एक का सहारा लेकर धरती पर आ गया। हौदे में महा-महिमामयी कलिंग की युवराज्ञी अमिता भी खड़ी थीं। उन्होंने गोद में लिये जाने के लिये बाहें फ़ैला कर कंचुकी को पुकारा—"मामा, हमें भी, हमें भी उतारो!" कंचुकी ने बाहें ऊपर उठाईं और हिता ने युवराज्ञी को हाथी से नीचे लटका कर कंचुकी की बाहों में दे दिया। अमिता भी धरती पर आ गई।"

युवराज्ञी को धरती पर खड़े देख यूथप अपने घोड़े से कूद पड़ा और विनय से सिर झुकाकर उसने राजकुमारी का अभिवादन किया—"जय हो! युवराज्ञी की जय हो!"

अमिता उस रौद्र कांड को भय और विस्मय से फैलकर गोल हो गये नेत्रों से देख रही थी। भोले कोमल गोल चेहरे पर आतंक का पीलापन आ गया था। सेनानायक का अभिवादन सुन कर अमिता ने उसकी ओर देखा और पलकें झपक कर बोली—"यह सैनिक प्रजा को डरा क्यों रहे हैं? उन्हें रुला क्यों रहे हैं? उन्हे मार क्यों रहे हैं?"

यूथप ने पुनः विनय से सिर झुकाकर और स्वर को कोमल बनाकर उत्तर दिया --"भगवती युवराज्ञी की जय हो। यह मारना और डराना नहीं है। यह युवराज्ञी के आदेश से राज्य की रक्षा का प्रबन्ध है। शत्रु से रक्षा के लिये...."

अमिता बाल सुलभ उत्तेजना से बोल उठी—"तुम इन्हें मार रहे हो, इनकी रक्षा नहीं कर रहे ?"

सेनानायक ने फिर विनय की— "भगवती युवराज्ञी, यह प्रजा को मारना नहीं, यह परम भगवती महारानी की इच्छा और महा सेनापति के आदेश से युद्ध का प्रबन्ध है।"

बालिका अमिता ने युद्ध के प्रबन्ध की बात कभी नहीं सुनी थी। वह यूथप का विश्वास न कर बोली —"ओहो यह मारना नहीं तो यह क्या खेल है ? अच्छा हम भी यह खेल देखें।"

घटना-स्थल पर युवराज्ञी के सहसा पहुँच जाने से सैनिक ग्रामीणों को ललकारना, मारना छोड़ कर मूर्तिवत खड़े हो गये थे। उनके हाथों में थमी रस्सियां और कोड़े उनके हाथों से लटक रहे थे। अमिता कोड़ा थामे एक सैनिक की ओर हाथ बढ़ा कर बोली—"यह खेल हम भी देखें।"

सैनिक विनय से धरती छूकर राजकुमारी की ओर बढ़ आया। अमिता ने कोड़ा सैनिक के हाथ से ले लिया और सेनानायक की ओर घूम गई। उसने हाथी की पीठ पर से सैनिक को कोड़ा घुमा कर ग्रामीण की पीठ पर मारते देखा था। वैसे ही अपनी छोटी कोमल बांह से कोड़े को घुमाकर उसने कोड़ा यूथप की पीठ पर मार दिया और पूछा—"अच्छा है यह खेल ?"

महासेनापति भद्रकीर्ति के छोटे भाई के पुत्र यूथप स्कन्द असह्य अपमान पाकर युवराज्ञी के सामने विवश था। उसने अपने आपको वश में रखने के लिए मौन रह कर सिर झुका लिया। शेष सैनिकों और ग्रामीणों के शरीरों में भी विस्मय और आतंक से रोमांच हो गया।

नया खेल पाकर अमिता का ध्यान खेल में ही डूब गया। वह सिर झुकाये मौन सेनानायक को सम्बोधन कर बोली—"अच्छा, अब तुम खेलो ? तुम हमारी पीठ पर लगाओ। देखें कैसे लगता है यह खेल ?"

यूथप स्कंद मौन और जड़ खड़ा रहा। अमिता ने अपना आग्रह दोहराया परन्तु स्कन्द सिर झुकाये मूर्तिवत ही खड़ा रहा। वृद्ध उद्दाल ने आगे बढ़कर अमिता को स्नेह से समझाया—"भगवती अम्मे, यह उचित नहीं। ऐसा नहीं करते। राज-पुरुष का आदर करते हैं।"

अमिता ने हठ से दोनों कंधे हिला कर आग्रह किया—"नहीं मामा, हम खेलेंगे।" और उसने सेनानायक को फिर सम्बोधन किया—"खेलो न खेल।"

यूथप ने सिर झुकाये रुंधे हुए कंठ से उत्तर दिया—"सेवक ऐसा अधर्म नहीं कर सकता।"

अमिता यूथप के उत्तर से रुठ गई और दूसरे सैनिक के समीप जा कोड़ा उसकी ओर बढ़ा कर बोली—"अच्छा तुम खेलो। तुम हमारी पीठ पर मारो।"

सैनिक कुछ उत्तर न दे सकने के कारण धरती पर बैठ गया और उसने क्षमा याचना के लिये अपना सिर भूमि पर रख दिया। अपनी बात किसी को न मानते देख और खेल में किसी को भी सहयोग न देते देख राजकुमारी कुंठित होकर बोली—"अच्छा तो हम अपने आप खेलेंगे"—और अमिना ने कोड़े को दोनों हाथों से अपनी पीठ पर मारने के लिए उठाया। कंचुकी, हिता और वापी भयभीत होकर उसे रोकने के लिए लपके परन्तु उनके रोक सकने से पहले ही अमिता ने कोड़ा अपनी पीठ पर मार लिया। वह चोट से तिल-मिला उठी। कोड़ा उसके हाथ से गिर गया।

हिता ने युवराज्ञी को तुरन्त उठा कर हृदय से लगा लिया और उसकी पीठ सहलाने लगी। उसकी आंखों से आँसू बह आय। वापी ने आँखों में आँसू भरे आगे बढ़ कर अमिता को अपनी गोद में ले लेना चाहा परन्तु बालिका हिता से चिपट गई। कंचुकी ने भी त्रास में अपना हाथ अमिता की पीठ पर रख दिया।

युवराज्ञी की आँखों में आँसू छल-छला आये थे। उसने यूथप की ओर देख कर क्रोध प्रकट किया—"यह बहुत बुरा खेल है। तुम दुष्ट हो। तुम दूसरों से छीनते हो, दूसरो को डराते हो, दूसरों को मारते हो! हम तुम्हें

बभ्रु की भांति बाँध कर दण्ड देंगे। अमिता ने हिता को आज्ञा दी—"हितू, तू बभ्रु की साँकल ला। हम इस दुष्ट को बभ्रु की तरह बांधेंगे।"

राजप्रासाद से चलते समय अमिता के आग्रह के कारण बभ्रु को भी हाथी पर हौदे में बैठाना पड़ा था। कुत्ता हौदे में उत्पात और उछल-कूद न करे, इस विचार से कंचुकी ने उसे गले की सांकल से हौदे की चौखट में बाँध दिया था। दूसरे लोगों के नीचे उतर जाने पर भी बभ्रु हौदे में ही बंधा रह जाने के कारण कनौतियाँ खड़ी किये परिस्थिति भाँपने के लिए कूं कूं कर रहा था।

पीठ पर चोट खाकर आँखों में आँसू भरे युवराज्ञी के अनुरोध की उपेक्षा नहीं की जा सकती थी। उसे बहलाने के लिए हिता के संकेत करने पर महावत ने कुत्ते के गले से साँकल खोल कर नीचे फेंक दी और हिता ने साँकल लाकर अमिता के हाथ में दे दी।

अमिता बाहें पूरी उठा लेने पर भी साँकल सेनानायक के गले में न डाल सकी। उसने यह काम करने का आदेश हिता को दिया। हिता ने भय और संकोच से अपनी माता और उद्दाल की ओर देखा। कंचुकी ने राजकुमारी के समीप झुक कर रहस्य और विनय के स्वर में समझाया—"अम्मे भगवती, ऐसा नहीं करते। सम्मानित सामंत और राजपुरुष को साँकल से नहीं बाँधते।"

अमिता हठ से मचल कर बोली—"नहीं मामा, यह दुष्ट है। देखो, इसने दूसरे लोगों को बाँधा है, दूसरे लोगों को मारा है। हम इसे दण्ड देंगे। हितू, तू इसे बाँध ले। हिता ऐसा साहस न कर सकती थी। उसने अमिता को गोद में उठा लिया, यूथप के कंधे के बराबर ऊँचा उठा कर उसके सामने कर दिया। अमिता ने कुत्ते की साँकल सेनानायक के गले में पहना दी और किल्लोल से ताली बजाकर अट्टाहास कर उठी। स्कंद क्रोध और अपमान से काँप उठा। उसने आपने आपको वश में रखने के लिये दोनों हाथ सीने पर बाँध कर ग्रीवा झुका ली।

अमिता सेनानायक को साँकल से खींचती हुई हाथी की ओर ले चली। युवक सामंत अपने सम्मान की रक्षा के लिये सौ पुरुषों का भी रक्त बहा देने में अथवा अपना सिर कटा देने में भी संकोच न करता परन्तु देवता और राजा के सम्मुख उसकी ग्रीवा नहीं उठ सकती थी। वह भाग्य की इस विडम्बना को सह जाने के लिए विवश था और मृत्यु से भी दारुण पीड़ा अनुभव

कर रहा था। बालिका युवराज्ञी उसे हाथी की ओर खींच कर ले जाती हुई पुचकार कर कह रही थी—"तू बभ्रु की तरह दुष्ट है। हम तुझे बभ्रु की तरह बाँध कर रखेंगे और खाने के लिए तुझे दूध-भात देंगे।"

कंचुकी, वापी और हिता हाथ जोड़ कर बालिका युवराज्ञी से प्रार्थना कर रहे थे—"अम्मे महारानी, यह उचित नहीं। परम भगवती राजमाता सुन कर क्रोध करेंगी। आचार्य काका सुन कर क्षुब्द होंगे।"—परन्तु अमिता ने हठ न छोड़ा। सेनानायक को गले मे साँकल पहने हाथी पर बैठ जाना पड़ा।

कंचुकी ने हाथी पर चढ़ जाने से पहले शेष सैनिकों को एक बार फिर चेवावनी दी—"परम भगवती महारानी ने प्रजा को अभयदान दिया है। महारानी का आदेश है प्रजा के साथ अन्याय न हो। प्रजा का निवास न छीना जाये। महारानी को नये दुर्ग अथवा राजप्रासाद की इच्छा नहीं है।

ग्रामवासियों के नेत्रों के आँसू पलक मारते सूख गये। वे आश्वस्त हो पुकारने लगे—

"परम भगवती की जय हो।"
"भगवती युवराज्ञी की जय हो!"

सूर्य क्षितिज से नीचे उतर गया था परन्तु पश्चिम आकाश में अभी अरुणिमा शेष थी। कलिंग के राजप्रासाद के ऊंचे कंगूरे और मुंडेरें अभी तक अंतिम किरणों से चमक रही थीं परन्तु प्रकांड भीतों और अलिंदों से घिरे महारानी के कक्ष में प्रकाश की आवश्यकता हो गई थी। दासियों ने महारानी के कक्ष के चारों कोनों में ऊंचे दीवटों पर निर्धूम और सुगंधित तेल के दीपक जला दिये।

महारानी ने वेदी पर रखे तथागत के धातु के स्वर्ण-पात्र के सम्मुख रखे घृत दीप की बत्ती को ऊंचा कर दिया और धूम-पात्र में चंदन और सुगंधित द्रव्यों का चूर्ण भर कर पवित्र सुगंधित धूम की मात्रा बढ़ा दी। सोने के थाल में घृत दीप, धूम-पात्र और नैवेद्य लेकर वे भगवान के धातु के स्वर्ण-पात्र की

आरती उतारने लगीं। एक दासी ने चांदी के छोटे दीवट पर एक दीपक फर्श पर बिछे कालीन के समीप घोड़ी पर रखे धर्म ग्रन्थ के समीप रख दिया। महारानी पूजा समाप्त कर धर्मग्रन्थ का पाठ करने बैठ गईं।

महारानी ग्रन्थ का पाठ छोड़ कर तुरन्त उठकर द्वार पर आ गईं। राजमाता की एक दासी महारानी के कक्ष के द्वार पर खड़ी हो गई। उस के पीछे वृद्धा मही राजमाता ने एक दासी के कंधे का सहारा लिये हुए महारानी के कक्ष में प्रवेश किया। मही राजमाता के केश प्रायः श्वेत थे, दांत शेष न रह जाने के कारण मुख पोपला हो चुका था। उनके शरीर पर भूरे रंग का दुशाला था और कमर से श्वेत रेशम का शाटक लिपटा था। महारानी ने मही राजमाता के चरण-स्पर्श कर उन्हें प्रणाम किया और ऊनी आसन से ढकी एक चौकी पर बैठने की प्रार्थना की।

मही राजमाता महारानी को युवराज्ञी पुत्री के शतायु होने का आशीर्वाद देकर चौकी पर बैठ गईं। एक दासी बांह पर दुशाला लिये और दूसरी दासी ताम्बूल की रजत-मंजूशा लिये उनके पीछे खड़ी हो गई। वृद्धा कक्ष में चारों ओर दृष्टि दौड़ाकर बोलीं—"बधु, पूरा दिन बीत गया, सूर्य अस्त हो गया पर हमारा चांद, हमारी पोती दिन में एक बार भी दिखाई नहीं दी। मन नहीं माना तो सोचा, जाकर बधू के यहां ही देख आयें। कहां गई मेरी युवराज्ञी पोती ?"

कंचुकी के साथ ही तीसरे पहर गई अमिता के सूर्यास्त तक न लौटने से महारानी के मनमें भी चिंता थी परन्तु तथागत की संध्या-पूजा का समय हो जाने के कारण उन्होंने चिंताहारी 'करणीय मैत्री' सूत्र का पाठ कर मन को निश्चित कर लिया था। सास के प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा—"बेटी नगर विहार के लिए जाना चाहती थी। कंचुकी मामा और बापी के साथ हाथी की सवारी पर जाने की अनुमति दे दी थी। बेटी को आ जाना चाहिये था अब तक, आती होगी। भगवान रक्षक हैं।

मही राजमाता ने विस्मय में अपना हाथ पोपले गाल पर रखकर असंतोष प्रकट किया—"बधु गोद के बच्चे को भी इतनी देर के लिये, ऐसे आंखों से ओझल होने दिया जाता है ? सुनो, तुम चैत्य में बेटी के कल्याण के लिये

परित्राण दिवासेना करवाती हो तो वैतालिक से भी दोष की मार्जना करवाती हो या नहीं ?" मही राजमाता की दृष्टि ताम्बूल-वाहक दासी की ओर गई। दासी स्वामिनी की इच्छा समझ तुरन्त उनके लिये पान लगाने लगी। वृद्धा अपना असंतोष प्रकट करने के लिये कहती गई—"बधू तुम्हारा वैराग्य तो ऐसा है कि अपनी चिंता तो है ही नहीं, बेटी के प्रति भी निर्मोही होती जा रही हो। वही तो इस वंश के दीपक की जोत है।"

महारानी ने चित्त को स्थिर रखने के लिये पल भर नेत्र मूंद कर उत्तर दिया—"अम्मे, चिंता से मन केवल भ्रमित........"

महारानी बात कह नहीं पाई थीं कि कक्ष के अलिंद से अमिता का कंठ स्वर सुनाई दिया—"अम्मा ! अम्मा !" और अमिता ने उछलते और किलकते हुए क़क्ष में प्रवेश किया। महारानी की बात मुख में ही रह गई। सूत्र पाठ कर तथागत का स्मरण करते ही, बेटी के तुरन्त आजाने को भगवान की कृपा का चमत्कार समझ कर, महारानी ने नेत्र मूंद कर भगवान को प्रणाम किया।

दादी राजमाता ने बाहें फैलाकर पोती को पुकार लिया—"आओ, बच्छे ! आ मेरी चांद कहां गई थी तू !"

दादी की पुकार अमिता के कान में पड़ी ही नहीं। वह पीछे घूमकर अपने हाथ नें थमी सांकल में बंधे जीव को भीतर आ जाने के लिये पुकार रही थी। सांकल में बंधा सेनानायक गर्दन झुकाये कक्ष में आ जाने के लिये विवश हो गया। सेनानायक का मुख क्रोध, अपमान और असहाय अवस्था के अवसाद से बहुत विश्री हो रहा था।

अमिता ने दादी के दुलार को लक्ष न कर उत्तेजना के स्वर में महारानी को पुकारा—"अम्मा, अम्मा, यह पुरुष बभ्रु की तरह दुष्ट है। यह दूसरों को डराता है, दूसरों को बांधता है, दूसरों को मारता है। हम इसे दंड देने के लिये बांध लाये हैं।"

महारानी के नेत्र विस्मय में फटे रह गए। उन्होंने ऊँचे स्वर में आज्ञा दी—"छोड़ो, छोड़ो। इसे तुरन्त छोड़ो !" अमिता के पीछे कक्ष के बाहर खड़े कंचुकी ने तुरन्त आगे बढ़कर सेनानायक के गले से सांकल निकाल दी।

महारानी ने बेटी की भर्त्सना की— "बेटी यह क्या मूर्खता करती हो ! मनुष्य को क्या पशु की तरह बांधते हैं । राजपुरुष दास की भांति बांधा जाता है ?'

अमिता की दादी दासी द्वारा प्रस्तुत किया पान मुख में ले चुकी थीं । उन्होंने भरे हुए मुख में बोझल जिह्वा के कारण विकृत स्वर में टोक दिया— "अरी बधू, क्या हुआ बच्चा है । क्यों डांटती है । उसकी प्रजा ही तो है । क्यों टोकती हो बच्ची को !"

महरानी ने कंचुकी की ओर देखकर असंतोष प्रकट किया—"तुमने ऐसा क्यों होने दिया ? मितू अबोध है । तुम्हें ऐसा नहीं होने देना चाहिये था।" महारानी के स्वर का क्रोध तुरन्त शांत हो गया, "हां, प्रजा ने न्याय के लिए प्रार्थना की थी । मामा, तुमने क्या देखा ?"

कंचुकी ने नत-सिर होकर धीमे स्वर में टेकरी पर बसे गांव के उजाड़े जाने के लिए, प्रजा को निवास स्थान से बलात् निकालने, उन की झोपड़ियों के गिराये जाने और प्रजा के त्राहि-त्राहि करने का आंखों देखा वृतान्त महारानी के सम्मुख निवेदन कर दिया ।

"नहीं, नहीं ऐसा नहीं होगा"—महारानी असंतोष से बोल उठीं, "किसी का निवास और किसी की धरती नहीं छीनी जायगी । हमें नये प्रासाद और दुर्ग की आवश्यकता नहीं । राज्य और प्रजा की रक्षा अन्याय से नहीं हो सकती । मनुष्य लोभ और त्रास के कारण ही अन्याय करता है । युद्ध और हिंसा का भरोसा मत करो । भगवान की कृपा का भरोसा करो । अभिधर्म का यही संदेश है, किसी से छीनो मत, किसी को डराओ मत, किसी को मारो मत ! जाओ, सैनिक महासेनापति को हमारा आदेश दो । कलिंग में हिंसा नहीं होगी, अभिधर्म का पालन होगा ।"

## आचार्य सुकंठ

रात का दूसरा पहर बीत रहा था । कलिंग के महा-आमात्य आचार्य सुकंठ की हवेली की ड्योढ़ी पर अब केवल एक मशाल जल रही थी । ड्योढ़ी

के बड़े-बड़े द्वार मुंद चुके थे और रात में रक्षा के लिए प्रतिहारी खड़े हो चुके थे। उसी समय हाथ में मशाल लिए एक घुड़सवार ड्योढ़ी के सामने आकर रुका और उसने संवाद दिया—"आर्य, महासेनापति का रथ आ रहा है।"

एक प्रतिहारी तुरन्त भीतर समाचार देने चला गया। दो मशालें और जल गईं। ड्योढ़ी के द्वार रथ को मार्ग देने के लिए खुल गये। उसी समय महासेनापति का रथ आ पहुँचा।

महा-आमात्य की हवेली के भीतर अन्तःपुर के आंगन से उस समय भी किसी बंदी अथवा चारण के धीमे, विलम्बित लय में वीणा बजाने का स्वर सुनाई दे रहा था। अनुमान होता था कि अन्तःपुर में आचार्य के युवा पुत्र और पुत्र-वधू अभी सोये नहीं हैं। उन्हें नींद लाये जाने के लिये यह लय बज रही थी। परन्तु बाहर आचार्य के आंगन में इस समय प्रतिहारियों के साथ दो दूत प्रतीक्षा कर रहे थे। महामंत्री का नियम था कि संध्या तक आये दूतों का संदेश वे सोने से पूर्व ही सुन लेते थे। आचार्य के कक्ष में प्रकाश था। वे अब भी दीवार के साथ रखे काठ के बड़े तख्त पर बिछे ऊनी आसन पर पाल्थी मारे और दायें हाथ की मुट्ठी से कनपटी को सहारा दिये, निर्धूम दीप के उज्जवल प्रकाश में, भोजपत्र पर अंकित कोई संदेश पढ़ रहे थे। महामंत्री का कपाल केश रहित हो जाने के कारण माथा सिर के पिछले भाग तक बढ़ गया था। श्वेत केशों के कुंडलों की एक झालर-सी एक कनपटी से आरम्भ होकर सिर की परिक्रमा करती हुई दूसरी कनपटी तक पहुँच गई थी। भवें भूरी हो गई थीं। ओंठ, श्वेत मूंछों और दाढ़ी के संगम में छिपे थे और श्वेत दाढ़ी नाभी तक लटक रही थी। शरीर भूरे रंग के दुशाले से ढका हुआ था। जो भाग शरीर का दुशाले से दिखाई दे रहा था, मंजे हुए तांबे की भांति ओजपूर्ण था।

आचार्य की पत्नी का देहान्त बहुत वर्ष पूर्व हो चुका था। तब से वे बाहर के आंगन के कक्ष में वानप्रस्थ जीवन बिता रहे थे। वे विलास से उपराम होकर राजकार्य और अध्ययन में डूबे रहते। महाराज करवेल वीर प्रकृति क्षत्रिय युवक थे। उनका अधिक समय विलास और आखेट में ही जाता था। उनके पिता के समय से ही राज्य की नीति और प्रबंध वंशक्रमागत महामात्य आचार्य सुकंठ के ही कंधों पर था। महाराज का पराक्रम आचार्य की नीति

को निबाहने में शिथिलता न करने से ही था। महाराज के स्वर्गारोहण के पश्चात महारानी वैधव्य को गत जन्म में तप भंग होने का फल मानकर तथागत के वैराग्य, तप की साधना, चैत्यों और संघ की सेवा में लीन हो गई थीं। राज्य की नीति और व्यवस्था पूर्णतः महामात्य के हाथों होने के कारण प्रजा और राजपुरुषों ने कोई परिवर्तन और शैथिल्य अनुभव नहीं किया था।

एक प्रतिहारी ने कक्ष के द्वार से अभयदान मांगकर महासेनापति के आगमन की सूचना दी। अशोक के आसन्न आक्रमण की स्थिति में महासेनापति दूसरे-तीसरे दिन मंत्रणा के लिए आते ही रहते थे परन्तु उनके आने का समय दिन का चौथा पहर रहता था। महासेनापति का आधी रात में आना विशेष चिंता बिना नहीं हो सकता था। आशंका की सम्भावना से भी महामात्य के प्रशस्त माथे पर क्षोभ का कोई चिन्ह नहीं दिखाई दिया। सेवक ने महासेनापति के लिए एक कोमल वस्त्र से ढकी चौकी महामात्य के तख्त के समीप रख दी।

महासेनापति ने कक्ष में आकर प्रणाम किया—"आचार्य महामात्य भद्रकीर्ति का प्रणाम स्वीकार हो। असमय आकर कष्ट देने के लिये क्षमा करें।"

महामात्य ने महासेनापति की अभ्यर्थना की—"आर्य का दर्शन सभी समय मगंल का हेतु है। आर्य आसन ग्रहण करें।"

महासेनापति चौकी पर बैठ कर तुरन्त गोप्य मंत्रणा करने के लिये महामात्य की ओर झुक गये। व्यवहार कुशल सेवक परिस्थिति भांपकर तुरन्त कक्ष से बाहर चले गये। भद्रकीर्ति ने आवेश वश में करने के लिये जरा खांस कर अपने कंठ को साफ किया और धीमे स्वर में बोले—"आर्य इस बार चंड अशोक के आक्रमण से राज्य की रक्षा कैसे हो सकेगी? आचार्य का कहना है कि अशोक इस बार चौगुना सैन्य बल, चार लाख पदाती, पांच हजार हाथी और रथ लेकर आक्रमण कर रहा है। चार वर्ष में हम पिछले युद्ध की क्षति भी पूरी नहीं कर पाये। आक्रमण सहने के लिये खड़े होने का स्थान भी हमारे पास न होगा तो हम क्या करेंगे?"

महामात्य ने आश्वासन के स्वर में उत्तर दिया—"आर्य, अशोक के पहले आक्रमण के समय भी आपके पराक्रम और बुद्धि-बल ने ही अशोक का अभिमान तोड़ कर कलिंग की रक्षा की थी। अब भी कलिंग के साधनों और सैन्य दल

की बागुरा आपके ही हाथ में है। पिछले युद्ध की क्षति पूर्ति के लिये और शस्त्रों तथा सैन्य दल के संचय में विलम्ब न होने देने के लिये चालुक्य और गौड़ से भी शस्त्र लाने की व्यवस्था हो चुकी है। आज ही समाचार मिला है कि चालुक्य और दक्षिण पथ से दो सौ शकट का सार्थ शस्त्र लेकर चल पड़ा है। गौड़ देश से समुद्र मार्ग द्वारा भी नाविक सार्थ शस्त्र ला रहा है। उन देशों से प्रायः बीस सहस्त्र सैनिक भी मिल सकेंगे·······"

महासेनापति अपना आवेश वश में करने के लिये दोनों हाथों के पंजों को परस्पर जकड़ कर बोले—"आचार्य, शस्त्र और सैनिक ही क्या करेंगे ? अशोक के इस सैन्य बल को राजधानी से पचास योजन आगे बढ़ कर पराजित नहीं किया जा सकेगा। इस बार तो पग-पग पर लड़ कर उसका बल क्षीण कर अंतिम निर्णय यहां राजधानी की प्राचीर पर ही होगा। ऐसे समय हमारी मुख्य शक्ति उत्तर द्वार का दुर्ग ही होगा। क्या आपको समाचार नहीं मिला ?"

भद्रकीर्ति ने आचार्य की ओर देखा और आचार्य अभिप्राय जानने के लिये महासेनापति की ओर मौन देखते रहे। भद्रकीर्ति बोला—"विस्मय है, आर्य तक समाचार नहीं पहुँचा। आर्य की अनुमति से वेणुक ग्राम की भूमि पर शिविर निर्माण का निश्चय किया गया था। परम भगवती का आदेश है कि वहां शिविर नहीं बनाया जायगा।"

महामात्य की भवें उठकर माथे पर रेखायें गहरी हो गई और उनका हाथ अपने केश-रहित कपाल पर चला गया—"आर्य क्या कर रहे हैं ?" आचार्य ने पूछा, "परमभगवती को तथागत के धर्म और संघ की सेवा से प्रयोजन है। उन्हें शिविर के विषय से क्या प्रयोजन और क्या आपत्ति ?"

महासेनापति अपने क्षोभ पर लगाया निरोध भूलकर बोले—"टेकड़ी की भूमि खाली कराने के लिये ग्रामवासियों को दक्षिण में दूनी भूमि दे देने का भी फल न हुआ। प्रजा में ऐसी स्पर्धा पहले कभी नहीं देखी गई। कल दोपहर सैनिकों का एक दल बस्ती का स्थान रिक्त कराने के लिये भेजा गया था। सुना है, प्रातः ग्राम की प्रजा चैत्य के द्वार पर परम भगवती के सम्मुख गुहार करने आई। महारानी ने अन्तःपुर के कंचुकी को भेजकर सैनिकों को आज्ञा दी है कि उस स्थान से कोई झोंपड़ी न हटाई जाय। महारानी राज-

परिषद और राजपुरुषों की बुद्धि और कर्तव्य पर भरोसा न करके क्षुद्र जनगण का विश्वास करेंगी तो राज्य का अनुशासन कैसे चलेगा ?"

महासेनापति आवेश को वश करने के लिये क्षण भर के लिये मौन रह गये और फिर बोले—"आचार्य, नहीं जानते और क्या हुआ ? भगवती महारानी ने कंचुकी के साथ बालिका युवराज्ञी को भेज कर स्थान रिक्त कराने के लिये गये सामन्तवंश के यूथप स्कंद को गले में कुत्ते की सांकल डलवा कर पकड़वा मंगवाया........" महासेनापति भावावेश के लिये एक क्षण मौन रह गये और फिर बोले, "स्कंद इस अपमान और लज्जा से गले में फन्दा लगा कर प्राण देना चाहता था। उसे बहुत अनुनय से समझाया है कि अबोध बालिका का कार्य खेल ही समझना चाहिये। आचार्य, राज्य की रक्षा के लिये रक्त बहाने वाले सैनिकों का इस प्रकार अपमान होगा तो राज्य की रक्षा किस प्रकार होगी ? महारानी भिक्षुओं का जितना आदर करना चाहें करें, सैनिकों का अपमान कराने की क्या आवश्यकता है ? क्या यही कलिंग का धर्मराज्य है जिसमें द्विज का अपमान हो !"

आचार्य अपना हाथ केशहीन कपाल पर रखे हुए बोले—"आर्य भद्र-कीर्ति, हमने इस विषय में कुछ नहीं सुना परन्तु आर्य का वचन प्रमाण है। कर्त्तव्य पालन के लिये आर्य पुत्र स्कंद की आर्य, पदवृद्धि कर उत्साह बढ़ाना उचित होगा। अस्तु, आर्य, महारानी का स्वभाव और प्रकृति तो ऐसी नहीं है। विस्मय है। राजाज्ञा के विरोध की स्पर्धा वेणुक ग्राम को कैसे हुई। यह चिंता का कारण है।"

भद्रकीर्ति बोले—"आचार्य, परिस्थिति विस्मय और चिंताजनक है। सामन्त विष्णुवर्मा यूथप स्कंद को लेकर मेरे यहां आये थे। महारानी ने यूथप द्वारा महासेनापति को संदेश भेजा है कि युद्ध और हिंसा का भरोसा मत करो ! कलिंग में अभिधर्म का पालन होगा ! शिविर की आवश्यकता नहीं है। महारानी की वाणी में यह किसके शब्द हैं ? महासेनापति और महामात्य को सेवा में स्मरण न कर भगवती महारानी यूथपों द्वारा संदेश भेजेंगी और कंचुकियों द्वारा यूथपों का नियंत्रण करेंगी तो राज्य का अनुशासन कैसे चलेगा आचार्य ?"

आचार्य तब भी वैसे ही चिंता से कपाल को झुकाये शांत स्वर में बोले—

"आर्य, यह शब्द महारानी के हो सकते हैं परन्तु अंतराल में दूसरा रहस्य भी हो सकता है। संघ और विहार केवल परलोक की चिंता न कर इस लोक की व्यवस्था भी करना चाहते हैं। श्रमणों की नयी कल्पनाओं से वणिकों में भी ब्राह्मण और क्षत्रिय के शासन के प्रति स्पर्धा जाग रही है। मगध में शूद्र का शासन उनमें नई आकांक्षायें जगा रहा है। मगध चाणक्य की कूट-नीति और कुचक्र में विश्वास रखता है। वह बल की अपेक्षा भेद-नीति में विश्वास करता है। जानना होगा, इस घटना का तंतु कहां है ? अजात शत्रु ही सबसे भयंकर होता है।"

महासेनापति खिन्न स्वर में बोले—"आचार्य, घटना के कारण की चिंता अवश्य उचित है परन्तु इस घटना का परिणाम सेना और अनुशासन के लिये अच्छा नहीं होगा। नगर की रक्षा के लिये टेकरी पर शिविर बनना ही चाहिये। नहीं तो वह टेकरी नगर के लिये घातक होगी। प्राचीर के भीतर का पुराना दुर्ग गत वर्ष महराज के श्राद्ध के समय महारानी विहार को अर्पण कर चुकी हैं। आचार्य सेवक ने उस समय भी आपत्ति की थी, नगर में धर्म-द्रोही का पांव जमना कलिंग के लिए अशुभ होगा।"

आचार्य स्वीकृति में सिर झुका कर बोले—"सत्य है, आर्य ने आपत्ति की थी परन्तु धर्म को धर्म से क्या विरोध ? यदि कोई धर्म धर्म है, सत्य है तो वह धर्म की वृद्धि ही करेगा। हमने महारानी की इच्छा का विरोध उचित नहीं समझा क्योंकि दुर्ग जीर्ण हो चुका है और चारों ओर बस्ती से घिर जाने के कारण युद्धोपयोगी भी नहीं रहा है। महारानी की इच्छा की अवहेलना भी उचित न थी। अब भी शिविर के विषय में महारानी की आपत्ति कठिन समस्या है। राजा का आदेश अपूर्ण रहने से राज्य की शक्ति क्षीण होती है।"

भद्रकीर्ति क्षुब्ध होकर बोले—"परन्तु भगवती महारानी केवल चैत्य और विहार को ही धर्म समझती हैं, दुर्ग और सेना को धर्म नहीं समझतीं। दस सहस्त्र सनिक ओस और धूप में पड़े हैं उनके लिए स्थान नहीं। भिक्षुओं को नेत्र मूंद कर तथागत की शरण में जाने के लिए विशाल दुर्गों की आवश्यकता है। श्रमणों के लिये तथागत की ही शरण पर्याप्त नहीं, उन्हें विशाल भवन भी चाहिये। राज्य और शासन की रक्षा सैनिक और योद्धा नहीं हाथ में पात्र लेकर भिक्षा मांगने वाला करेगा ?"

आचार्य का हाथ कपाल से उतर कर उनकी श्वेत दाढ़ी के केशों पर आ गया। भूमि की ओर देखते हुए वे बोले—"उत्तर टेकरी पर दुर्ग बनाने की अनुमति महारानी को देनी चाहिये। राजाज्ञा में शंका कर महारानी तक दुहाई देने की स्पर्धा प्रजा में कैसे हुई? टेकरी के वासियों का यह हठ क्यों है? उन्हें निवास के लिये दूनी भूमि दक्षिण में दी जा चुकी थी। इस घटना के परोक्ष में हमें कूटनीति का संदेह है। महारानी का धर्म विश्वास राज्यधर्म, अनुशासन और राज्यरक्षा में बाधा बनेगा तो नित्य संकट आयेगा। आर्य विश्वास रखें, आचार्य आज ही राज दर्शन के लिये प्रासाद में उपस्थित होगा।"

×

कलिंग के राजप्रासाद के बाहर के आँगन और अन्तःपुर के बीच राजसभा-भवन और मंत्रणा-कक्ष थे। राजसभा और मंत्रणा-कक्ष के दोनों ओर प्रशस्त अलिंद थे। मंत्रणा-कक्ष में राज्यासन के समीप आचार्य सुकंठ महामात्य के आसन पर सिर झुकाये, केशहीन कपाल पर हाथ रखे प्रतीक्षा में बैठे थे। राज्यासन अभी रिक्त था और दूसरा कोई भी व्यक्ति कक्ष में न था। अन्तःपुर की ओर के अलिंद से एक चारण की धीमी पुकार सुनाई दी—"राज्य परिषद ससम्मान सावधान! परम भगवती, महामहिमामयी कलिंग की राजेश्वरी पधारती हैं।"

आचार्य सुकंठ अपने आसन पर उठ खड़े हुए। शरीर पर श्वेत दुशाला और कमर से श्वेत रेशम का शाटक लपेटे महारानी ने कक्ष में प्रवेश किया। महामात्य ने सिर झुका कर उनका अभिवादन किया—"परम भगवती, धर्म रक्षक कलिंग की महारानी की जय हो।"

महारानी संकोच से सिमिट कर सिंहासन के आधे भाग में बैठ गईं। केवल चंवरधारी दासी सिंहासन के पीछे खड़ी थी। महारानी ने आचार्य को सम्बोधन किया—"महामति, कलिंग राज्य के शुभचिंतक, आचार्य महामात्य प्रणाम स्वीकार करें।" महारानी पलभर सोच कर बोलीं—"महामति आचार्य कल प्रजा ने न्याय के लिए प्रार्थना की है। हमें विस्मय और दुख हुआ, धर्म और न्याय की रक्षा में तत्पर महामति आचार्य के प्रबन्ध में अन्याय हो रहा है।

कातर प्रजा ने दुहाई दी है कि महासेनापति की आज्ञा से वेणुक ग्राम में दुर्ग बनाने के लिए प्रजा के बसे हुए घर उजाड़ कर भूमि छीनी जा रही है। हम ने आदेश दिया हैं कि ऐसा अन्याय न हो। हमें दुर्ग की आवश्यकता नहीं है।"

महामात्य ने विनय से सिर झुकाये, विचार से गम्भीर स्वर में उत्तर दिया—"परम भगवती की धर्म और परलोक में निष्ठा से यह विचार उचित है। परन्तु भगवती इस में धर्म का द्वन्द्व है। अन्नदाता, इस समय परिस्थिति भिन्न है। सेवक ने और महासेनापति ने परम भगवती की आज्ञा के अंतर्गत ही उत्तर टेकरी पर शिविर निर्माण की राजाज्ञा दी है। वह महारानी की ही आज्ञा है। अन्नदाता महारानी जानती हैं कि कलिंग राज्य को रक्षकहीन जानकर चंड अशोक फिर आक्रमण कर रहा है। इस बार वह पिछले आक्रमण की अपेक्षा बहुत अधिक सैन्यबल लेकर आ रहा है। अशोक महाराजाधिराज कलिंग राज से पाये पराजय का प्रतिशोध करना चाहता है। इस आक्रमण से राजधानी की रक्षा के लिए यह शिविर आवश्यक ही है। युद्ध के उपरान्त प्रजा उस भूमि पर फिर भी बस सकती है। शत्रु के आक्रमण का प्रतिरोध न हो सकने से न केवल उत्तर टेकरी की प्रजा की रक्षा न हो सकेगी बल्कि सम्पूर्ण राजधानी की प्रजा आततायी के पांव तले कुचल दी जायगी। महारानी की आज्ञा से उत्तर टेकरी की प्रजा को दक्षिण में दूनी भूमि दी जा चुकी है। अन्नदाता, आत्म-रक्षा के युद्ध के समय उचित शिविर ही राजा की शक्ति होती है।"

महारानी को युद्ध के प्रसंग पर बात करने में विरक्ति अनुभव हो रही थी। इस विषय में अधिक चर्चा न करने के भाव से उन्होंने उत्तर दिया— "महामति आचार्य, आप दुर्ग या शिविर बनाना चाहते हैं, तो राज्य में भूमि की कमी नहीं है। आप जितने दुर्ग और शिविर चाहें, बनायें। परन्तु बसा हुआ स्थान उजाड़ने की अथवा किसी का घर द्वार छीनने की अनुमति हम नहीं दे सकते।"

आचार्य ने सिर झुका कर निवेदन किया—"परम भगवती के आदेश को पूरा करना ही सेवक का कर्त्तव्य है परन्तु अन्नदाता, दुर्ग और शिवर जहाँ-तहाँ बना लेने से प्रयोजन पूरा नहीं हो सकता। दुर्ग तथा शिविर तो स्थान विशेष पर ही बनाया जाता है। उत्तर से आक्रमण का विरोध करने के लिए उत्तर

टेकरी पर ही शिविर बनाना आवश्यक है। अन्नदाता, इसके अतिरिक्त नगर में बीस सहस्त्र सैनिक रखना आवश्यक है। धर्म में निष्ठा और प्रजा का कल्याण चाहने वाली महारानी से निवेदन है कि युद्धकाल में पुराना दुर्ग भी सैनिक कार्य के लिए देना स्वीकार करें। श्रमण और भिक्षु कुछ समय के लिये राज्य के अन्य नगरों में अथवा बनों में भी निवास कर सकेंगे। युद्ध में विजय के पश्चात धर्म में भक्ति रखने वाली महारानी की इच्छानुसार संघों और श्रमणों के लिये, उचित स्थान, महाविहार भी बनाये जा सकेंगे।"

महारानी की दृष्टि भूमि की ओर थी। झुके हुए सिर को नकार में हिला कर बोलीं—"नहीं, नहीं! महामति आचार्य ऐसा नहीं हो सकता। तथागत के संघ और भिक्षुओं को उनके स्थान से नहीं हटाया जा सकता। श्रमणों और अर्हतों के ध्यान, चिन्तन और साधना में विघ्न नहीं डाला जा सकता।"

महारानी का नकारात्मक आग्रह सुनकर आचार्य सुकंठ कुछ क्षण मौन रह गये। कलिंग राज्य के इतने वर्ष के प्रबन्ध में स्वर्गीय महाराज और उन के पिता महाराज मयूख ने भी उनके किसी परामर्श की अवहेलना नहीं की थी। आचार्य अपने आपको वश में कर और भी विनीत स्वर में बोले—'धर्मनिष्ठ, परम भगवती जानती हैं कि धर्म का चिन्तन और मनन वृक्षों के नीचे और कंदराओं में भी हो सकता है। भगवान तथागत ने बुद्धत्व की प्राप्ति पीपल के वृक्ष के नीचे ही की थी परन्तु सैनिक की शक्ति शिविर या दुर्ग के बिना क्षीण हो जाती है। चंड अशोक इस बार असाधारण बल और वेग से आ रहा है। वह अपने साम्राज्य के सभी देशों का सैन्यबल लेकर आ रहा है। अशोक द्वारा पददलित देशों से लाखों शरणार्थियों ने कलिंग में शरण ली है। महारानी, इस बार राजधानी की रक्षा के लिये उत्तर मार्ग पर शिविर अनिवार्य है।"

मंत्रणा कक्ष प्रासाद के दूसरे तले पर था। कक्ष के अलिंद में खुलते द्वार से नगर और राजपथ का भी कुछ भाग दिखाई देता था। आचार्य ने उस ओर संकेत कर निवेदन किया—"चंड अशोक द्वारा प्रताड़ित सीमान्त की प्रजा से नगर के बाजार और पथ भर गये हैं। अशोक का उचित निरोध न कर सकने से कलिंग की प्रजा की क्या अवस्था होगी? अन्नदाता अपनी प्रजा की रक्षा के लिये शिविर की अवहेलना नहीं कर सकतीं।"

महारानी की झुकी हुई दृष्टि महामात्य की ओर उठ गई। उन्होंने दृढ़ निश्चय से उत्तर दिया—"आचार्य, अशोक जो कल करेगा, आप आज ही कर डालना चाहते हैं। प्रजा का घर-द्वार छीन कर प्रजा की रक्षा नहीं होगी। अशोक जो पाप करेगा, उसका फल वह पायेगा। अशोक के पाप का विरोध करने के लिये हम पाप नहीं करेंगे। महामति आचार्य, भगवान की कृपा पर विश्वास नहीं कर सकते, महास्थविर सिद्ध जीवक की चत्मकार सिद्धि पर भरोसा नहीं कर सकते तो जो चाहें करें, परन्तु प्रजा में किसी का घर द्वार नहीं छीना जा सकेगा। हम विहारों और चैत्यों को हिंसक सैनिकों का शिविर नहीं बनाने देंगे।"

महामात्य महारानी के हठ से इस बार कुछ अधिक पल मौन रह कर फिर बोले -"परम भगवती, धर्मनिष्ठ महारानी, भगवान की कृपा और रक्षा के विश्वास की उपेक्षा कौन कर सकता है? उन्हीं की कृपा से दिवंगत महाराज ने आततायी का मान मर्दन किया था। उन्हीं की लीला से चंड अशोक पुन: कलिंग पर आक्रमण कर रहा है। भगवान अपनी लीला में जिसे जिस योग्य समझ कर जो भूमिका निबाहने के लिये दें, उसी को पूरा करना मनुष्य का कर्त्तव्य होता है। मनुष्य अपने लिये नियत भूमिका को जैसे पूर्ण करता है, वही उसके कर्म फल का आधार होता है। आप्त पुरुषों ने इसी मार्ग को योग का मार्ग और तप कहा है। इसी से मनुष्य इहलोक और परलोक को भी प्राप्त करता है।"

महारानी के नेत्रों में असंतोष झलक आया। महामात्य की ओर देख कर वे उद्विग्न स्वर में बोलीं—"इहलोक और परलोक दोनों ही लोकों का लोभ आसक्ति है। यह कर्म योग नहीं, बन्धन है। मुक्ति इस लोक और परलोक की आसक्ति और लिप्ति में नहीं, मुक्ति अनासक्ति द्वारा निर्वाण में है।"

महामात्य मतभेद का प्रसंग बचाने के लिये सोचकर बोले—"प्रजा वत्सल परम भगवती, देवताओं से प्रशंसा पाने योग्य महाराज ने इस राज्य की मर्यादा रक्षा के लिये शरीर पर घाव सह कर भी चंड अशोक का मान मर्दन किया था। कलिंग की मर्यादा रक्षा में ही उन्हों ने संसार को भी तुच्छ समझा। अब कलिंग उसी शत्रु के सम्मुख असहाय होकर आत्म-समर्पण करेगा? महाराज स्वर्ग से हमारी इस कायरता को देख कर क्या कहेंगे?"

महामात्य का अनुमान था कि महाराज की स्मृति महारानी को द्रवित कर देगी परन्तु महारानी नन्दा के मुख पर दृढ़ता का भाव आकर उनके कंधे सीधे हो गये। वे बोलीं—"आचार्य, महाराज अशोक के बल को खंडित करके, उसे रण में पराजित करके भी इस राज्य को निर्भय नहीं बना सके। आप भय के कारण ही दुर्ग बनाना चाहते हैं। आचार्य आप भय और शत्रुता बढ़ा रहे हैं। आचार्य के मन का परिग्रह अशोक के मन के परिग्रह की भावना से भयभीत है। मन को भय से मुक्त कीजिये। देवलोक में स्थित महाराज परिग्रह से मुक्त होकर यह देख रहे हैं कि अशोक का परिग्रह भय के कारण है। वह सम्पूर्ण पृथ्वी जीतकर भी निर्भय न हो सकेगा, वह पराजित ही रहेगा। परिग्रह छोड़ कर निर्भय हो जाने वाला ही विजयी होगा। मारने वाला और मार से भयभीत दोनों भ्रम में हैं। हम धर्मधर सिद्ध महास्थविर से प्रार्थना करेंगे कि आपत्ति निवारण के लिये एक सहस्त्र भिक्षुओं द्वारा परित्राण दिवासेना का पाठ करायें। अपनी बात समाप्त कर महारानी ने नेत्र मूंद लिये और उनके होंठ बचन पाठ में शनैः-शनैः हिलने लगे।

महामात्य विवश होकर मौन महारानी की ओर देखते रह गये परन्तु मौन रह सकना उनके लिये सम्भव न था। वे बोले—"परमभगवती, आततायी के सम्मुख सिर झुकाकर अपना स्वत्व छोड़ देना मनुष्य का धर्म नहीं है, यह कदर्य है। स्वर्गीय महाराज सेवक और राजपरिषद पर कलिंग के राज्य और राजवंश की रक्षा का उत्तरदायित्व दे गये हैं। सेवक ने और राजपरिषद ने महाराज के अंतिम समय उनके सम्मुख कलिंग राज्य और कलिंग के राजवंश की रक्षा की प्रतिज्ञा की थी। सेवक और राज्य-परिषद उस प्रतिज्ञा को पूरा करेंगे। यही सेवक का धर्म है। आचार्य को भी कोई परिग्रह नहीं है। उसके लिये एक चटाई और लोटा ही पर्याप्त है। शरीर का भी मोह अब नहीं है। परन्तु कलिंग की मर्यादा की रक्षा उस का धर्म है। आचार्य की प्रार्थना है कि जैसे पुण्यस्मृति महाराज और महाराज के पिता ने सेवक का विश्वास किया था, वैसे ही अन्नदाता भी करें। सेवक के सेवा कर्तव्य में बाधा न डालें......।

महारानी ने महामात्य को टोक दिया—"आचार्य, हिंसा की प्रतिद्वन्द्विता में हिंसा करना धर्म नहीं, अधर्म है। अपने सामर्थ्य के अहंकार में भगवान की

चमत्कार शक्ति की उपेक्षा करना ज्ञान नहीं है। आप अपना कर्तव्य निबाहें परन्तु हम प्रजा को घर-द्वारहीन नहीं होने देंगे। धर्म स्थानों को हिंसा का शिविर नहीं बनने देंगे। ऐसा करने से राज्य पाप का भागी होगा।

उत्तेजना के कारण महारानी के नेत्रों में जल आ गया। वे नेत्र मूंद, हाथ जोड़ कर फिर पाठ करने लगीं—सचे भायसी दुक्खस्स सचे ते दुक्खं मप्पियं। उपेहि सरणं बुद्धं ......"

महामात्य महारानी की ओर देखकर अवाक और विवश रह गये। उन के कानों में अलिंद से ऊँची पुकार सुनाई दी—"अम्मा, अम्मा!"

उसके साथ ही दबे स्वर में दूसरे शब्द भी सुनाई दिये—"अम्मे महारानी, अभी उधर नहीं। भगवती माता रुष्ट होंगी।"

कक्ष के द्वार पर लटकते पर्दे को हटा कर बालिका युवराज्ञी अमिता दौड़ती हुई भीतर आगई। बालिका के हाथ में काठ की एक रंगीन गुड़िया थी। अमिता ने मां को पुकारने के लिए मुख खोला परन्तु मां की मुंदी हुई पलकों से लटकते आंसू देख कर स्तम्भित रह गई।

महामात्य ने विवशता की परिस्थिति में खिन्नता अनुभव करके भी हाथ जोड़कर धीमे स्वर में निवेदन किया—"परम भगवती स्वामिनी........"

महारानी आचार्य की प्रार्थना न सुन कर नेत्र मूंदे पाठ करती रहीं।

अमिता परिस्थिति समझने के लिये कभी माँ की ओर और कभी महामात्य की ओर देख रही थी। वह सहसा बोल उठी—"आचार्य काका, आपने अम्मा को त्रास दिया है?"—और बालिका की आँखों में भी आँसू आ गये।

आचार्य निर्वाक रह गये। अब कोई उपाय शेष न था। उन्होंने सिर झुकाकर महारानी के सम्मुख भूमि स्पर्श कर प्रणाम किया और राजसभा के व्यवहार के अनुसार महारानी की ओर मुख किये, झुकते हुए मंत्रणा कक्ष से बाहर चले गये।

× × ×

## सेठ सौमित्र

राजसखा नगर सेठ सौमित्र की हवेली में न तो युद्ध के आतंक का ही विशेष प्रभाव था और न महाबलि यज्ञ के समाचारों से उत्साह। उसके यहाँ प्रायः ही संध्या समय नाच-गान की समज्या जमती रहती थी। इस समज्या का प्रयोजन सेठ सौमित्र की विलास-विनोद में रुचि नहीं बल्कि कुल की क्रमागत मर्यादा की रक्षा ही था। समज्या से विनोद आमंत्रितों और अतिथियों का ही होता था। विलास और विनोद में रुचि न होने का कारण सौमित्र की वैराग्य वृत्ति न थी। वह श्रमणों का यह उपदेश तो स्वीकार करता था कि आसक्ति और विलास से कभी संतोष नही होता परन्तु परलोक की आसक्ति में इस लोक को भुला देना भी सौमित्र के विचार में भ्रम था। सौमित्र संचय और संग्रह द्वारा अपनी शक्ति की वृद्धि से ही संतोष पाता था। उसके धन के सम्बन्ध में अनेक दंतकथाएं प्रसिद्ध थीं। अनेक वर्ष पूर्व, महाराज करवेल के पिता के राज्यकाल में अकाल पड़ने पर, सौमित्र के पिता ने एक महा यज्ञ कर प्रतिदिन एक सहस्त्र प्रजा को भोजन दिया था। तभी से महाराज ने सौमित्र के कुल को 'राजसखा' का सम्मान देकर महासामन्त वंश के अधिकार दे दिये थे। राजपुरुष स्वयं राजप्रासाद से विशेष आज्ञा बिना दंड कार्य के लिये उसकी हवेली में प्रवेश नहीं कर सकते थे। सेठ की हवेली की ड्योढ़ी पर उसके अपने सशस्त्र सैनिकों का पहरा रहता था और वहाँ प्रातः-संध्या नौबत बजती थी। नगर सेठ को इच्छा होने पर राजप्रासाद में प्रवेश कर राजदर्शन का अधिकार था। उसका वंश 'जगत सेठ' कहलाता था और वह नगर के सेठों का जेट्ठक (चौधरी) था।

फाल्गुन मास की उस संध्या सौमित्र की हवेली की समज्या में कलिंग की प्रमुख नर्तकी तारा का नृत्य था। सौमित्र को यह आशंका थी कि महामात्य आचार्य सुकंठ और महासेनापति भद्रकीर्ति आसन्न-युद्ध में उसकी सहायता से संतुष्ट नहीं हैं। कुछ राजपुरुष भिक्षा के लिये हवेली में आने वाले श्रमणों पर भी दृष्टि रखते थे इसलिये सौमित्र अपनी समज्या में महासेनापति के रसिक युवापुत्र सूर्यकीर्ति, महामात्य के युवापुत्र आचार्य मयंक को विशेष अनुनय से आमंत्रित करना न भूलता। उस संध्या समज्या में सौमित्र के मित्र सेठ वासल और पद्मज भी आये हुए थे। हवेली में आमंत्रितों के लिये विलास

के किसी भी साधन की न्यूनता न रहती थी। आमंत्रितों की संगति के लिये तारा के साथ अनेक अन्य नर्तकियां और वेश्याऐं भी थीं।

आमंत्रित यथेष्ट मद्यपान और संगति-नृत्य से तृप्त हो कर वेश्याओं और नर्तकियों को अपनी पालकियों और रथों पर लेकर चले गये। केवल सेठ बासल, पद्मज और सौमित्र ही बड़े-बड़े तकियों का सहारा लिये बैठे रहे। अब केवल एक वृद्ध बंदी अपने शिष्य के साथ मृदंग पर विलम्बित और द्रुत का आरोह-अवरोह दिखा रहा था। तीनों सेठों के सम्मुख मद्य के पात्र रखे हुए थे परन्तु वे पी नहीं रहे थे। समज्या में भी संगति और नृत्य का समय उन्हों ने प्रतीक्षा में ही बिताया था। तीनों सेठ गुण और स्वभाव से सच्चे वैश्य थे। उन्हें संतोष पदार्थों को विलास के लिये उपयोग करने से नहीं बल्कि पदार्थों पर स्वामित्व पाकर मन से लक्ष्मी का विलास करने से मिलता था।

वासल अब एकान्त देख तकिये का सहारा छोड़ कर तत्परता से बैठ गया और उसने जरा खांस कर संकेत किया कि सौमित्र बात कहे। सौमित्र भी तकिये को पीछे छोड़ सामने झुक आया और धीमे स्वर में बोला—"उत्तर टेकरी की घटना के पश्चात से महामात्य को चैन नहीं है। वह चिंतित है कि उसकी आज्ञा का उल्लंघन कैसे हुआ? इसलिये वह सब जगह टोह ले रहा है। इस समय जितना शंकित और सतर्क रहा जाय कम ही समझो।

पद्मज ने विचार प्रकट किया—"पिछले युद्ध में सभी लोगों ने कितना धन खोया, पर बना क्या? युद्ध तो फिर सिर पर आ गया।"

वासल ने भी रहस्य के स्वर में उसका समर्थन में किया—"यही क्या निश्चय है कि अशोक इस बार भी परास्त हो कर फिर आक्रमण नहीं करेगा? मगध के राजा को न जन-बल की कमी है न धन-बल की। जिस वैश्य में सामर्थ्य है, वह व्यवसाय का और जिस राजा में सामर्थ्य है वह राज्य का विस्तार करेगा ही। निर्बल को सबल का स्वत्व स्वीकार करना ही होगा। मद्र से रामेश्वरम् जाता एक तीर्थयात्री कहता था कि उत्तर में सब एक ही राजसत्ता हो जाने से बहुत शांति है और व्यापार व्यवसाय बहुत फैला है........"

सौमित्र ने वासल की बात पूरी न होने दी। पूछ लिया—"पर यह जो एक और संकट सिर पर आ गया है, इसका क्या उपाय होगा?"

पद्मज और वासल के आशंका से उसकी ओर देखने पर सौमित्र ने धीमे-स्वर में बताया—"पिछली पूर्णिमा को जब आचार्य ने राजाज्ञा दी थी कि युद्धकाल में वणिक के लाभ का तीन चौथाई राज कर में राजकोष ले, तभी हम ने अपना दूत चोल देश भेज दिया था कि हमारा सार्थ चोल से कलिंग न लौट कर पूर्व मार्ग से स्वर्णगिरी हो कर अवन्तिका चला जाय·······"

वासल ने समर्थन किया—"हाँ, ऐसा तो आपने तभी बताया था।"

सौमित्र ने अपनी बात सुनाने के संकेत के लिए हाथ उठाकर कहा—"हमने दूत को अवन्तिका के नगर सेठ सुगत के नाम भी पत्र दिया था कि हमारे सार्थ का चोल देश का वस्त्र, अवन्तिका में बिक्री कर अपने पण्य का उचित अंश ले कर हमारे सार्थ को फिर अवन्तिका से चोल लौटा दे। परन्तु हमारा दूत मार्ग में रोग से पड़ गया और पूरे एक पक्ष तक रुका रहा। तब तक हमारे सार्थ ने कलिंग की सीमा में प्रवेश कर लिया।"

"हाय यह क्या ?"—पद्मज के मुख से निकल गया, "यह आपने क्या किया जेठ्ठक ? आपने कैसा दूत भेजा ? मैं तो मर गया। मैंने तो इस सार्थ में तीस सहस्त्र धरण ऋण लेकर भी लगाया था।

"पहले बात सुन लो"—सौमित्र अधिकार के स्वर में बोला, "फिर एक साथ ही हाय-हाय करना। सीमान्त के शौल्किक ने हमारे सार्थ का निरीक्षण करके उसके साथ दस अश्वारोही राजपुरुष चौकसी के लिये कर दिये हैं मानो हम चोर हैं। शौल्किक ने राज्य-स्थान में सूचना भेज दी है कि सार्थ के पास चार लाख धरण के मूल्य का स्वर्ण और द्रव्य है।"

पद्मज का मुख खुला ही रह गया। सौमित्र की ओर लगे उसके नेत्रों में आंसू आ गये। वासल दीर्घ-निश्वास ले कर बोला—"सब गया। किस कुघड़ी में यह सार्थ भेजा था। धूर्त ज्योतिषी त्रयंबक ने कहा था, यह अपूर्व लाभ की लग्न है। नक्षत्र भी धोखा दें तो कहां त्राण मिल सकता है। यह महामात्य तो 'सर्वंवै पूर्णंग्वं स्वाहः' करेगा। महाराज थे तो अपने राज्य की रक्षा के लिए युद्ध कर रहे थे। यह आचार्य हमें ध्वंस करने के लिए, ब्राह्मण के अधिकार के लिए युद्ध कर रहा है। राज तो राजा का होता है, ब्राह्मण का नहीं·····"

सौमित्र ने वासल को चुप कराने के लिये हाथ का संकेत कर कहा—"अब प्रश्न है कि आचार्य सुकंठ के मुख से सार्थ के धन की रक्षा कैसे हो? इस में आधे के लगभग भाग आप दोनों का है, इसलिये आप लोगों की भी अनुमति चाहिये। हम सब व्यापारी तो एक साथ, एक नाव पर हैं, एक साथ तैरना, एक साथ मरना जानते ही हो।"

"जेठ्ठक, आप ही कुछ कर सकते हैं!"—पद्मज रुआसे स्वर में बोल उठा, "आप ही त्राण कर सकते हैं। राजद्वार में आपकी ही पहुँच है। आप समर्थ हैं। सामर्थ्य से ही बुद्धि होती है। इस संकट में हम लोगों की बुद्धि क्या करेगी।"

वासल ने भी समर्थन किया—"हम लोंगों की अनुमति का प्रश्न क्या है? हाथी के पांव में सब का पांव समा जाता है। हम क्या हैं; आप के प्रश्रय में कुछ व्यवसाय कर लेते हैं।"

"मेरा प्रश्रय क्या भाई? आप की तरह वणिक हूँ"—सौमित्र ने विनय दिखाया। मुझे भी व्यापार करने का अवसर चाहिये। मुझे भी आत-तायी का आतंक है। सार्थ द्वारा व्यापार अकेले तो कोई नहीं कर सकता। ऐसे काम सांझे में ही चलते हैं। आप जानते हैं, महारानी तथागत के धर्म में श्रद्धा और वैराग्य-वृति के कारण राजकाज की चिंता से उपराम है परन्तु वे युद्ध और हिंसा से भी उपराम हैं। उनकी कृपा से ही इस द्रव्य की रक्षा हो सकना सम्भव है। 'जैसे उत्तर टेकरी·········।'

"राजप्रासाद का प्रवेश तो आपका ही सामर्थ्य है"—पद्मज बोला परन्तु वासल ने टोक दिया, "महारानी तो राज्य से उपराम ही हैं। राज्य तो महामात्य आचार्य ही करते हैं।"

सौमित्र ने उत्तर दिया—"महारानी धर्म से तो उपराम नहीं हैं। आप दोनों अनुमति दें तो महारानी के सम्मुख आवेदन किया जाये कि हम तीनों सेठ्ठी तथागत के धर्म के अनुगत हैं। हमने कलिंग में अभिधर्म की वृद्धि के लिए महाविहार की स्थापना के प्रयोजन से सांझे में दस लाख धरण अर्जन करके महाविहार को अर्पण करने का संकल्प किया है। इसी धर्मार्थ प्रयोजन से यह सार्थ दक्षिण-पथ भेजा गया था। इस सार्थ का सम्पूर्ण धन धर्मार्थ

संकल्पित धन है। इस धन को युद्ध कार्य में व्यय करने से धर्म की हानि होगी। हमारा निवेदन है, युद्धकाल में यह धन महाबोधि विहार में राज्य की मुद्रा से सुरक्षित रहे। संकल्पित राशि पूरी हो जाने पर महाविहार के निमित्त व्यय किया जाये।"

"यह क्या रक्षा हुई ?"—पद्मज क्षोभ से बोल उठा, "व्याघ्र के भय से जंगल से भाग कर मगर के मुख में जाने के लिये जल में गिरना क्या रक्षा है ? धन आचार्य सुकंठ के हाथ में न जा कर मुंडियों के हाथ में चला गया तो हमें क्या ? आपके लिये लाख दो लाख संघ और विहार को दे देना परलोक का संतोष है। हम लोग तो यह लोक ही नहीं समेट पाये, परलोक के लिये क्या हाथ फैलायें ?"

"मित्र पद्मज तुम्हारी यह बात वणिक बुद्धि के अनुकूल नहीं"—सौमित्र ने खिन्नता भरे स्वर में समझाया, "ऐसी छोटी बात ब्राह्मण अथवा क्षत्रिय ही कर सकता है, जो द्रव्य का प्रयोजन शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति-मात्र जानता है। सार्थ का यह धन हाथ से चला जाने से क्या तुम्हें खाने के लिए भात और पहनने के वस्त्र का संकट हो जायगा ? यदि ऐसा है, तो मुझ से कहो। द्रव्य तो शक्ति और सामर्थ्य का साधन है। व्यवसाय का प्रयोजन द्रव्य से द्रव्य की वृद्धि करना रहेगा। वह द्रव्य धर्मादय के नाम से भी तुम्हारा है। धर्मादय के नाम से तुम्हारा द्रव्य संघ और विहार पर तुम्हारा वश रखेगा। मित्र, आज यह सहस्त्रों भिक्षुओं का दल नगण्य नहीं रहा है। प्रजा को उन पर श्रद्धा है। और अभी तो द्रव्य विहार में राजमुद्रा से सुरक्षित रहेगा। युद्ध का परिणाम जाने क्या होगा ? परन्तु द्रव्य आचार्य के हाथ जाने से वह इसे तुरन्त शस्त्र क्रय करने के लिये गौड़ और दक्षिण-पथ भेज देगा। आचार्य जब तक धन के लिये व्याकुल न होगा, हमारी-तुम्हारी सहायता और सम्मति का मूल्य भी उसकी दृष्टि में कुछ न होगा।"

पद्मज की आँखों में आंसू आ गये और वासल दीर्घश्वास लेकर मौन रह गया। सौमित्र कुछ और समय तक दोनों सेठों को समझाता रहा। अन्त में दोनों सेठों ने स्वीकार किया, भविष्य में जो भी हो, अभी सौमित्र सार्थ का द्रव्य महामात्य के हाथ में पड़ने से बचायें।

मृदंग पर लय बजाने वाले बन्दी भी थक गये थे। सौमित्र ने उन्हें भी

अवकाश दे दिया। एक ऊंघते हुए बहरे सेवक को सौमित्र ने संकेत से आदेश दिया कि भीतर के कोठे से मंजूषा ले आये। मंजूषा में से ताड़पत्र, लेखनी और स्याही निकाली गई। ताड़पत्र पर, तीन वर्ष पूर्व, सार्थ के दक्षिण-पथ जाने से भी कुछ समय पहले की तिथि में एक संकल्प-पत्र तीनों सेठों के हस्ताक्षर से लिखा गया। सौमित्र ने ताड़पत्र को दिये की लौ पर सेंक कर पुराना और धुंधला कर दिया।

×

कलिंग की महारानी नन्दा राजप्रासाद में रह कर भी भिक्षुओं के लिये संघ द्वारा निश्चित विनय और शील के नियमों का पालन करती थीं। वे केवल एक बार, मध्यान्ह से पूर्व, एक ही पात्र में भोजन करतीं। वे सम्भ्रान्त कुल के लोगों की भांति, दोपहर के समय निद्रा न लेकर, कुशासन अथवा ऊन के वस्त्र पर बैठ कर धर्म-ग्रन्थ का पाठ करती रहतीं। उनके पाठ करते-करते राजप्रासाद की ड्योढ़ी से पीतल के घंटे पर दिन का चौथा पहर आरम्भ हो जाने की टंकार सुनाई दी। महारानी ने बुद्ध वचन का एक प्रकरण समाप्त कर लेने पर हाथ जोड़ कर ग्रन्थ के सम्मुख मस्तक झुका दिया।

महरानी के कक्ष के द्वार के सम्मुख प्रतीक्षा में खड़ी यवनी ने अवसर देख कर महारानी की दासी को सूचना दी और दासी ने सिर झुकाकर निवेदन किया—"अभयदान हो, परमभगवती, राजसखा नगर-श्रेष्ठी जेट्ठक सौमित्र राजदर्शन की इच्छा में, एक घड़ी से राज्य-द्वार पर उपस्थित है।

महारानी से मौन अनुमति पाकर दासी ने यवनी को उत्तर दिया— "परमभगवती महारानी अनुमति देती हैं, नगर सेट्ठी राजदर्शन के लिये मंत्रणा गृह में उपस्थित हों।"

महारानी श्वेत कौशेय के वस्त्र से शरीर को ढंके अलिन्द से शनैः-शनैः पग रखते मंत्रणा-कक्ष की ओर जा रही थीं। उसी समय प्रातःकाल के खेल की थकावट तीसरे पहर की नींद से मिटाकर, फिर उत्फुल्ल युवराज्ञी अमिता एक दीर्घिका में से, दो और बालिकाओं के साथ महारानी के सामने आ गई।

अमिता के गले में एक छोटी सी भेरी लटकी हुई थी और बालिकाओं के हाथों में छोटे-छोटे तूर्य (नरसिंहे) थे ।

अमिता ने किल्लोल में माता को सम्बोधन किया—"अम्मा, अम्मा ! देखो, एक नया खेल दिखायें ।"—और वह अपने गले में लटकी भेरी को ढम-ढम बजाने लगी । उसकी सहेलियों ने अपने तूर्यों को मुख पर उठाकर बजा दिया । महारानी ठिठक गईं और स्नेह से मुस्कराकर बालिकाओं का खेल देखने लगीं ।

अमिता ने भेरी बजा कर डोंडी पीटने के ऊंचे स्वर में पुकारा—"धर्म राज्य कलिंग की सब प्रजा और पौरजन सुनें ! महामही, परमभगवती, बच्छल……"

अमिता की बड़ी सहेली ने टोक दिया—"नहीं नहीं, ऐसे नहीं, महा-महिमामयी, परमभगवती प्रजावत्सल कलिंग की राजेश्वरी……"

"हां, हां !—"अमिता फिर ऊंचे स्वर में घोषणा करने लगी, "राजेश्वरी की आज्ञा सुनें !"

तीसरी बालिका बोल उठी—"कलिंग के धर्म राज्य पर अत्याचारी, स्वजन घातक चंड अशोक के आक्रमण के प्रतिरोध में ……"

"हम बोलेंगे हम"—अमिता ने आग्रह किया और बोली, "देवताओं की कृपा के लिये महाबलि यज्ञ का आयोजन हो ।"

पहली बालिका फिर बोल उठी—"सब द्विज और शूद्र महाबलि यज्ञ में योग दें !"

"हम हम!"—अमिता ने फिर आग्रह किया, "सम्पूर्ण प्रजा शस्त्र धारण समुद्यत हो ।"

पहली बालिका उछल कर बोली—"हम, हम राज्य-रक्षा के लिये शस्त्र लेंगे । हम धनुष-बाण लेंगे !"

अमिता ने किल्लोल से पुकारा—"हम भी धनुष-बाण लेंगे । हम खड्ग और भाला भी लेंगे !"

महारानी तीनों बालिकाओं के सिरों पर स्नेह से आशीर्वाद का हाथ फेर कर बोलीं—"वत्से, रक्षा धनुष-बाण, भाले और खड्ग से नहीं होती । रक्षा

धर्म का पालन करने से होती है। वत्स, धर्म का मूल मंत्र है, किसी से छीनो मत, किसी को डराओ मत, किसी को मारो मत! अपने भय को मारो! महारानी ने मन ही मन मंत्र का पाठ कर एक बार और बालिकाओं को आशीर्वाद दिया और आगे बढ़ने के लिये बोलीं—"अच्छा अब खेलो।"

दासी हिता बालिकाओं को लेकर तुरन्त एक दीर्घिका में चली गई।

महारानी के मंत्रणा-कक्ष में प्रवेश करने पर नगर सेठ सौमित्र ने भूमि को स्पर्श कर प्रणाम किया—"महामहिमामयी, परमभगवती, धर्मनिष्ठ, देवताओं की प्रिय कलिंग की राजेश्वरी की जय हो।" और माथा झुकाये खड़ा रहा।

महारानी राज्यासन के एक कोने पर सिमिट कर बोलीं—"राजकुल के सखा नगर श्रेष्ठी का कल्याण हो। श्रेष्ठी अपने मन की कामना अथवा चिंता कहे!"

सौमित्र ने एक बार फिर भूमि का स्पर्श कर निवेदन किया—"धर्म-निष्ठ परमभगवती की रक्षा में चिंता का कारण नहीं। परमभगवती का धर्म और न्याय अखंड रहे। भगवान सुलक्षणा युवराज्ञी को शतायु करें। युवराज्ञी के कल्याण का समाचार मिले।"

महारानी ने भूमि की ओर दृष्टि लगाये ही उत्तर दिया—"तथागत की कृपा से, प्रजा के आशीर्वाद और राजकुल के हितैषियों की कल्याण कामना से युवराज्ञी सकुशल है। नगर श्रेष्ठी पधारने का प्रयोजन कहें!"

सौमित्र ने फिर माथा झुकाकर निवेदन किया—"परमभगवती राजे-श्वरी की धर्म में आस्था जान कर सेवक उत्तर देश से प्राप्त एक भेंट राज्य-सेवा में उपस्थित करने की आज्ञा चाहता है।

"हम नगर श्रेष्ठी की राजभक्ति का आदर करते हैं"—महारानी ने उत्तर दिया, "श्रेष्ठी राजभक्ति से जो भेंट अर्पण करना चाहें, राजकोष में दें। वह प्रजा के लिये होगी।"

सौमित्र ने फिर भूमि का स्पर्श किया और अभयदान मांग कर बोला—"परमभगवती का आदेश सिर आंखों पर स्वीकार है। सेवक परमभगवती

की धन के प्रति विरक्ति से परिचित है। सेवक माया का बंधन नहीं, धर्म में श्रद्धा की भेंट प्रस्तुत करना चाहता है।"

महारानी ने पल भर सोचकर उत्तर दिया—"यदि नगर श्रेष्ठी की ऐसी ही भावना है तो हम देख लेंगे।"

सौमित्र ने फिर भूमि का स्पर्श कर महारानी की कृपा के लिये आभार जताया और समीप रखी चाँदी के तार से मढ़ी एक मंजूषा के ढक्कन को उठा लिया। मंजूषा के चारों ओर के फलक भी खुल कर फूल की पंखुड़ियों की भाँति फैल गये। मंजूषा के बीच में रेशम के आसन पर रत्न-जटित पात्र रखा था। सेठ ने भूमि पर सिर रख कर भक्ति-भाव से पात्र को प्रणाम किया। महारानी निर्निमेष नेत्रों से उस पात्र की ओर देखती रह गईं। उन के हाथ स्वयं ही प्रणाम की मुद्रा में उठ गये।

सौमित्र ने हाथ जोड़ कर निवेदन किया—"परमभगवती धर्मज्ञ महारानी जानती हैं कि धर्मधर, विनयधर और सूत्रधर स्थविरों का मत है कि तथागत के शरीर के धातु के दर्शन और पूजन से मोह, हिंसा, अज्ञान और परिग्रह की प्रवृति का नाश होता है। इस पात्र में कुशीनगर से प्राप्त भगवान के अस्थि-धातु का चार रत्ती प्रमाण अंश विद्यमान है। उसे उत्तर कुरू के श्रद्धावान सेठ निमित्त ने दस वर्ष के प्रयत्न से बहुत धन राशि व्यय करके पाया था। सेवक ने सेठ निमित्त से यह पात्र दो लाख धरण मुद्रा देकर कलिंग में बौद्धविहार की स्थापना के लिये खरीदा था।"

महारानी अपने आसन से उठीं और उन्होंने धातु-पात्र के समीप भूमि पर सिर रख कर प्रणाम किया और राज्यासन छोड़ कर भूमि पर ही बैठ गईं। सौमित्र की ओर देख कर उन्होंने कहा—"श्रेष्ठी का विचार धातु-पात्र के सम्मान में एक विहार की स्थापना का था। सेठ वह विचार पूरा करें।"

सेठ दोनों हाथ जोड़ कर बोला—"परमभगवती अभयदान तो दें सेवक निवेदन करे।"

महारानी से अनुमति पाकर सेठ बोला—"परमभगवती, सेवक के साधन सीमित और परमभगवती के साधन अमित हैं। विहार की स्थापना अब सेवक के सामर्थ्य में नहीं है। सेवक ने तीन वर्ष पूर्व सेट्ठी, वासल और पद्मज

के सम्पर्क में धर्मोदय में धन कमाकर मठ की स्थापना का संकल्प किया था। परमभगवती इस संकल्प पत्र को देखें !"

सेठ ने सिर झुका कर संकल्प का ताड़पत्र महारानी के सम्मुख भूमि पर रख दिया और बोला—"परमभगवती के धर्म प्रताप से सार्थ में लाभ हुआ परन्तु वह सम्पूर्ण धन तो महामात्य के आदेश से युद्धकोष में राज्याधीन हो गया।"

महारानी ताड़पत्र की ओर दृष्टि किये चुप थीं। सौमित्र फिर बोला—"परमभगवती अभयदान दें तो सेवक मन की चिंता कहे ! सेवक को अब स्वर्ण की भूख नहीं है परन्तु यह दुख अवश्य है कि विहार की सेवा और मैत्री और अहिंसा धर्म के निमित्त संकल्पित यह धन युद्ध की हिंसा और बलि के पाप में व्यय होगा। सेवक को धन का लोभ नहीं है। उसका सर्वस्व तो बुद्ध, धर्म और संघ के लिये संकल्पित है। यदि सार्थ का विहार की सेवा के निमित्त अर्पित धन राजाज्ञा और राजमुद्रा से रक्षित हो कर विहार में रहे तो सेवक की धर्म भावना को संतोष होगा। शेष परमभगवती की जैसी आज्ञा हो।"

"ऐसा ही होगा"—महारानी के मुख से निकला और उन्होंने चंवर-धारिणी दासी की ओर देखकर पुकारा, "लेखक प्रस्तुत हो !"

लेखक तुरन्त उपस्थित हुआ और उसने मंजूषा खोल कर भोज-पत्र ले लेखनी सम्भाली। महारानी ने आदेश लिखवाया—"परम भगवती देव-रक्षित कलिंग की महारानी आदेश देती हैं कि राजकुल सखा श्रीमान श्रेष्ठी सौमित्र और उनके भागीदार श्रेष्ठी वासल और पद्मज के सार्थ का धन विहार निर्माण के धर्मकार्य के हेतु संकल्पित है। इस सार्थ के लाभ का तीन चौथाई धन युद्ध कार्य के हेतु राज्याधीन न किया जाये। सार्थ का सम्पूर्ण धन युद्धकाल में महाबोधि विहार में राज्यमुद्रा से सुरक्षित रहे।"

लेखक के आदेश लिख चुकने पर महारानी ने अपने हाथ में पहनी मुद्रा से उस पर मुद्रा अंकित कर दी।

× × ×

# हिता और मोद

बालिका युवराज्ञी अमिता दोपहर के आहार के पश्चात विश्राम के लिये पलंग पर सो गई तो दासी हिता ने अपनी मां वापी को तनिक एक ओर ले जा कर धीमे स्वर में कहा--"अम्मा युवराज्ञी अभी सोयी है। उठ कर पुतली के विवाह का खेल खेलेंगी। मैं कंचुकी मामा से कह दूं कि आचार्य और आर्य की हवेलियों से बालिकाओं को बुलवा लें। मैं जा कर जेठुक बिठ्ठल के यहां से नयी पुतली ले आऊँ। मां तू ध्यान रखना, मुझे दो पल विलम्ब हो जाये तो तू राजकुमारी को बहला लेना।"

हिता जब भी सेठ्ठी बिठ्ठल के यहां से राजकुमारी के लिये नई पुतली ले आने की बात करती, प्रौढ़ा वापी का मन बेटी के प्रति चिंता के कारण बोझल हो जाता। वह सदा ही बेटी को समझाती--"बेटी तू यह क्या मूर्खता कर रही है। क्यों तू अपने और मेरे प्राण संकट में फँसाना चाहती है। तू यह क्या रोग पाल रही है। तू राजकुल की दासी है, स्वतंत्र वेश्या नहीं है। प्रेम और प्रणय गणिकाओं और वेश्याओं के विनोद होते हैं। कुल कन्याओं को विवाह में जिसे सौंप दिया जाये, उसी से प्रेम करना होता है और दासी को जो खरीद ले, उसी की सेवा करना धर्म है। दासी की बेटी का काम आज्ञा पालन और सेवा है, प्रेम नहीं। बेटी यह तो एक प्रकार की चोरी है। तेरा मन सेवा के लिये है प्रेम के लिए नहीं। तू राजप्रासाद के दासों के नियामक दण्डक से अभिमान करती है। जल में रहकर मगर से बैर नहीं निभता। किसी दिन वह तेरी चोरी पकड़ पायेगा तो क्या होगा? या जेठुक सेठ्ठी बिठ्ठल ही मोद को किसी दूसरे सेठ के हाथ बेच डालेगा तो क्या होगा? तू तो राजप्रासाद की सेवा छोड़ कर और कहीं जा नहीं सकती। दासी की क्या इच्छा और क्या प्यार? मैंने ही क्या तुझे प्यार के परिणाम में पाया है? तू अपने मन को समझा। तोता मनुष्य की तरह बोल लेता है परन्तु मनुष्य नहीं बन जाता। दास-दासी नागरिक नर-नाररियों की भांति इच्छा तो करते हैं परन्तु उनकी इच्छा क्या पूर्ण होती है? तेरे किसी बड़े पुण्य कर्म का प्रभाव है कि तू युवराज्ञी की विशेष परिचर्या दासी है। तेरे युवा हो जाने पर भी राजप्रासाद तुझ से संतान पाकर उन्हें बेचने का लोभ नहीं करता? दासी का इस से बड़ा सौभाग्य और क्या होगा?"

हिता मां की बात सुन कर भी रह न पाती। उस का अपने पर वश ही नहीं रहा था। भय भी उसे रोक नहीं सकता था। उस की अवस्था मंत्र से मुग्ध भुजंगिनी की भांति थी। वह एक मास में तीन बार अन्त:पुर के कंचुकी को रक्षा के लिए साथ लेकर जेठुक बिठ्ठल के कर्मान्त (कारखाने) की ओर जा चुकी थी। उस दिन भी चली गई।

हिता लगभग एक-डेढ़ वर्ष की आयु में कलिंग के राजप्रासाद मे आई थी। कलिंग के धर्मराज्य और राज्यवंश के प्रताप और शक्ति से अनेक राजाओं को भय और ईर्षा थी। कलिंग के महामात्य आचार्य सुकंठ जिस प्रकार पड़ोसी राजाओं के सैन्यबल और संधि-विग्रह की नीति से सतर्क रहते थे उसी प्रकार वे कलिंग राज्य और कलिंग के राजवंश के प्रति सम्भव कूट-नीति और छल से भी सशंकित रहते थे। कलिंग के स्वर्गीय महाराज और उनके पिता महाराज मयूख को नारी के विलास की अपेक्षा आखेट का ही व्यसन अधिक था। फिर भी महामात्य सतर्क रहते थे कि महाराज के विलास के माध्मम से भी कोई छल न हो सके। मगध के प्रथम शूद्र राजा चन्द्रगुप्त मौर्य के मंत्री कौटिल्य चाणक्य ने शत्रु के विनाश का एक उपाय विषकन्या का उपयोग भी सुझाया था। महामात्य ने राजवंश को विषकन्या के छल की आशंका से बचाने के लिए कलिंग के राजप्रासाद में परिपाटी निश्चित कर दी थी कि महाराज के विलास के लिये भोग-कन्याओं अथवा विलास-दासियों की भेंट स्वीकार नहीं की जायगी। राजप्रासाद के भोग के लिये विलास-दासियों का पोषण और संवर्धन राजप्रासाद में ही किया जाता था। मां का दूध पीती सुलक्षणा, सुन्दर कन्याओं को उनकी माताओं सहित खरीद कर राजप्रासाद के एक भाग में रख लिया जाता था। इन दासी कन्याओं को प्रासाद में ही पाला जाता था।

विलास के लिये दासियों को पालने वाली चतुर गणिकाएँ इन बालिकाओं को बचपन से ही विशेष विधि से पालती थीं। इन कन्याओं को रूप-रंग और अवयवों को निखारने वाला भोजन दिया जाता था। इन के अंगों को बचपन से ही सुगंधित द्रव्यों के मर्दन द्वारा कोमल, सुडौल और सुगंधित बनाया जाता था। बचपन से ही उन्हें संगीत, नृत्य, लोल-लास्य और आकर्षक व्यवहार की शिक्षा दी जाती थी। यह कन्याएँ सोलह वर्ष तक किसी पुरुष का स्पर्श नहीं कर

सकती थीं। सोलह वर्ष पूर्ण कर लेने पर उन्हें महाराज की विलास सेवा के लिये प्रस्तुत किया जाता था। हिता का भी पालन-पोषण इसी प्रयोजन से इसी विधि से हुआ था।

हिता की मां कुरु देश की कन्या थी। उसके माता-पिता ने भयंकर दुर्भिक्ष के समय, अपनी कन्या को मृत्यु से बचाने के लिए एक दास व्यापारी के हाथ बेच दिया था। दास व्यापारी ने उसे मगध के एक व्यापारी के हाथ बेचा। यौवन आने पर वापी में रूप-लावण्य का निखार हो आया परन्तु वह कठिन परिश्रम के योग्य न हुई। वापी मगध के व्यापारी के विलास का साधन थी, इसलिए उसकी कृपापात्र भी थी। यौवन में सेवा-कार्य करते हुए उसके दो सन्तानें हुईं और छब्बीस वर्ष की आयु में उसकी गोद में हिता आई। उसी समय किसी आकस्मिक रोग से वापी के स्वामी व्यवसायी की मृत्यु हो गई। मगध के व्यवसायी के युवा पुत्र के लिए छब्बीस वर्ष की कोमलांगी विलास-दासी अनुपयोगी थी। युवा पुत्र ने पिता का ऋण चुकाने और व्यर्थ दासों के व्यय से बचने के लिए वापी को उसकी कन्या सहित बेच दिया। इस बार वापी जिस व्यापारी सार्थ के हाथों बिकी वह उसे कलिंग ले गया।

कलिंग में कुरु की गौर-वर्ण दासियों का मूल्य अधिक मिलता था। राज-प्रासाद में विलास-दासियों का पालन करने वाली गणिका ने वापी के वर्ण, नख-शिख और उसकी गोद की बेटी के लक्षण देखकर खरीद लिया। कलिंग के राजप्रासाद में वापी के दिन फिरे। उसकी मुख्य सेवा थी, अपनी पुत्री को राज-भोग्या बनाने के लिए यत्न से पालना। राजवैद्य के शिष्य जब-तब इन कन्याओं के शरीर की परीक्षा करते रहते। उन्हें पौष्टिक भोजन दिया जाता, हिता को शैशव से ही ऐसी औषधियाँ खिलाई गईं कि उसका शरीर सुगोल, छरहरा बन कर कंठ, मधुर और श्वास और स्वेद भी सुवासित हो गये। उसे भर्त्सना केवल खटाई, मिर्च खाने, उबटन न मलने पर अथवा अंगों और वाणी का असंयम करने पर मिलती। ताड़ना केवल संगीत और नृत्य में ताल भंग करने पर दी जाती। इस ताड़ना में भी ध्यान रखा जाता कि यत्न से पाली हुई दासी का शरीर कुरुप होकर कलंकित न हो जाये। हिता दूसरी दासियों की तुलना में अपने आप को विशेष समझे बिना न रह सकती थी।

जिस समय हिता ने सोलह वर्ष पूरे कर सत्रहवें में पांव रखा, परम

भागवत महाराजाधिराज करवेल मगध के राजा चंड अशोक के आक्रमण के कारण राजधानी से दूर उत्तर में युद्ध में व्यस्त थे। महाराज करवेल विजयी होकर कलिंग लौटे परन्तु उनका शरीर घावों से क्षत-विक्षत था। महाराज के विनोद के लिए अक्षत, विलास-दासी हिता को उनकी सेवा में प्रस्तुत किया गया। महाराज अपनी पीड़ा भुलाने के लिए विनोद और विलास की चेष्टायें करते परन्तु घावों की पीड़ा के कारण उनमें शक्ति न थी। महाराज नेत्रों और स्पर्श द्वारा हिता के शरीर से पाई उत्तेजना को चरितार्थ न कर सकते थे। हिता सहमी हुई अपने आपको अर्पण किये, उनकी इच्छा की प्रतीक्षा में खड़ी-खड़ी थक जाती।

महाराज विलास द्वारा पीड़ा को भुलाने में असमर्थ रह जाते तो पीड़ा से ध्यान बटाने के लिए युद्ध में विजयश्री देने वाली अपनी शिशु कन्या को स्नेह करने के लिए शैय्या के समीप बुलवा लेते। हिता अमिता को गोद में लेकर महाराज की शैय्या के समीप खड़ी होती। बालिका को हिता के अंग का स्पर्श और हिता का रूप इतना सुखद जान पड़ता कि बालिका उसकी गोद में जा कर प्रसन्न हो किलकारियां मारने लगती, उसकी गोद छोड़ना न चाहती। विलास में असमर्थ महाराज लावण्यमयी दासी हिता की गोद में अपनी सन्तान को ही संतुष्ट देखकर संतोष पाते। हिता भी महाराज द्वारा जगाई हुई इच्छाओं के अतृप्त रह जाने पर बालिका को ही अपने अंक में दबा कर संतोष पाती।

महाराज के स्वर्गारोहण के पश्चात महारानी नन्दा की आज्ञा से महाराज की विलास-सेवा के लिए सुरक्षित दासियों को राजवंश के निकट सम्बन्धी सामन्तों को भेंट कर दिया गया। हिता और उसकी प्रौढ़ा माँ वापी को महारानी की आज्ञा से युवराज्ञी अमिता की विशेष परिचर्या के लिए नियुक्त कर दिया गया।

राजप्रासाद के अनेक आंगनों में रहने वाले राजवंश से सम्बन्धित पुरुषों को हिता के अछूते छल-छलाते, उन्मादक यौवन के प्रति प्रबल लोभ था। उन्होंने हिता को अपनी सेवा में ले लेने के लिए अनेक अभिसंधियाँ की परन्तु महारानी के आदेश और प्रासाद के प्रबन्धक, कर्मान्त धिष्टायक, प्रौढ़ सामन्त प्रताप की सतर्कता के कारण उन्हें सफलता न मिल सकी। एक दिन हिता

किसी काम से प्रासाद के बाहिरी आंगन में गई थी। महाराज के सम्बन्ध के ताऊ राजवंशी सामन्त के युवा पुत्र ने उन्माद की अवस्था में हिता को बलात् बांह से पकड़ कर अपने आंगन में ले जाना चाहा। हिता असहाय होकर चीख उठी। भाग्य से प्रासाद का प्रबंधक यूथप प्रताप समीप था। यूथप ने घटना-स्थल पर पहुँच कर हिता की रक्षा की और भविष्य के लिये विशेष आदेश दे दिया कि हिता महारानी की अंतरंग दासी होने के कारण राज्यादेश से रक्ष्य और अस्पृश्य है। जब भी वह राजकार्य के लिये अन्त:पुर की ड्योढ़ी से बाहर जाये, अन्त:पुर का एक सशस्त्र कंचुकी उस की रक्षा के लिय साथ रहे। हिता अपने यौवन और रूप के कमनीय होने का गर्व हृदय में लिये थी परन्तु आशंका से भी उसका हृदय धड़कता रहता। अपने अनुभव से उस के मन में पुरुषों के प्रति विरक्ति और आशंका समा गई थी।

हिता शैशव से ही जानती थी कि वह महाराज की भोग्य वस्तु थी। प्रासाद में दूसरी अनेक ऐसी दासियां थी जिनका पालन प्रासाद में महाराज के विलास के लिये हुआ था परन्तु उनकी आयु अधिक हो जाने पर अथवा अन्य विलास-दासियों के युवा हो जाने पर उन्हें राजवंशी लोगों को सौंप दिया गया था या दूसरे कामों में लगा दिया गया था। हिता जानती थी कि वही बात उसके साथ भी होगी। जैसे दूसरी सेवाओं के लिये अन्य दास-दासी थे, महाराज के विशेष रथ, हाथी, घोड़े और आखेट के कुत्ते थे, वैसे ही विलास की सेवा के लिये अन्य दासियों के साथ वह भी थी। उसे विलास और भोग के मर्म की शिक्षा दी गई थी परन्तु अन्य दासियों से काम-रहस्य की बातें सुनकर भी उसे भोग की इच्छा न होती थी क्योंकि वह तो उसके लिये श्रम का भार था।

महाराज का स्वर्गारोहण हो जाने से हिता को आतंक अनुभव हुआ था कि अब उसे दूसरे लोगों की वासना का पीड़ा-जनक भार उठाना पड़ेगा। महाराज के जीवनकाल में तो हिता उनके प्रति भय और आदर ही अनुभव करती थी परन्तु अब नये संकट की आशंका में वह उन्हें भक्ति से याद करने लगी। महारानी ने युवराज्ञी का हिता से लगाव देख कर उसे अपना लिया और दूसरे लोगों की भोग्य बनने के भय से मुक्ति दे दी। अभय होकर हिता को संतोष हुआ परन्तु दूसरी दासियों से काम-रहस्य और पुरुष के संग

के रहस्य की बातें सुन कर अभाव की एक चुटकी भी अनुभव होती, क्या वह जीवन भर वंचित रहेगी। परन्तु इस अभाव की अपेक्षा भोग का साधन बनाये जाने की पीड़ा का भय बड़ा था इसलिये हिता युवराज्ञी की विशेष परिचर्या दासी बनने का गौरव पाकर संतुष्ट थी।

महाराज का देहान्त हो जाने के पश्चात परमभगवती कलिंग की राजेश्वरी तथागत के धर्म में शरण लेकर उपासिका बन गई थीं। उन्होंने तथागत के धातु का पात्र प्रतिष्ठित करने के लिये अन्तःपुर के उद्यान में एक मन्दिर बनाये जाने का आदेश दे दिया था। इस मन्दिर में वेदी के निर्माण और भीतों का सिंगार करने का भार कला के व्यापारी जेठ्ठक विठ्ठल को सौंपा गया था। विठ्ठल ने मंदिर में चित्रकारी और शृंगार का काम करने के लिये अपने कलाकार युवा दास मोद को प्रासाद में भेजा था। जिस समय मोद मंदिर की वेदी और तोरण पर मूर्तियां और लतायें उत्कीर्ण करने के लिये अपने अस्त्रों का प्रयोग करता रहता, युवराज्ञी उसके खन-खन शब्द से आकर्षित होकर समीप आखड़ी होतीं और हिता उन के समीप खड़ी रहती।

चित्रकार और तक्षक मोद गुंधी हुई गीली मिट्टी लेकर उसे कुत्ते, घोड़े, सिंह अथवा मनुष्य के मुख का रूप दे देता और बालिक अमिता विस्मय से फैली आंखों से यह चमत्कार देखती रह जाती। युवराज्ञी के आनन्द और विनोद की सीमा न रहती। वह उत्साह से प्रायः नित्य ही मूर्तिकार तक्षक के समीप पहुँच जाती और उनके साथ ही हिता भी। हिता को स्वयं भी इस खेल में विशेष रुचि थी। हिता के मन में सुन्दर वस्तुओं का चाव और उस की कोमल उंगलियों में लाघव था। वह प्रासाद में भीतों और भूमि पर सब से सुन्दर आलेपन और आलेखन कर सकने के कारण भी महारानी को प्रिय थी। मंदिर में मोद अमिता को खिलौने बना कर बहलाता रहता तो वापी और उद्दाल मन्दिर के बाहर परिक्रमा के अलिंद में अथवा किसी वृक्ष के नीचे किसी सहारे से पीठ टिका कर विश्राम करते रहते। हिता युवराज्ञी के समीप खड़ी मोद के कौशल को देखती रहती।

आरम्भ में मोद के पूर्ण युवा पुरुष होने के कारण हिता को उससे संकोच और शंका अनुभव हुई। शनैः-शनैः आतंक मिट गया और संकोच में माधुर्य का भाव आने लगा। कभी अमिता दूसरे खेलों में उलझी होने के कारण मोद से

नई पुतली बनवाने की बात भूल भी जाती तो हिता उसे स्वयं याद दिला कर मंदिर में मोद के पास ले जाती। मोद खिलौना बनाने के लिए आंखें झुकाये रहता तो हिता की दृष्टि उस पर टिकी रहती परन्तु आंखें चार हो जाने पर हिता के नेत्र झुक जाने लगे। फिर हिता और मोद परस्पर नेत्र मिल जाने पर नेत्रों को हटा लेना भूल जाने लगे। राजकुमारी दोनों के बीच खेलती रहती और वे दोनों एक-दूसरे के नेत्रों में खोये रह जाते। हिता मोद के लिए इतनी अधीर हो जाती कि युवराज्ञी के दोपहर के भोजन बाद, सोने के समय भी वह किसी के न देखने पर, चुपचाप युवराज्ञी के लिये खिलौने बनवा लाने के बहाने मोद के यहाँ पहुँच जाती। दासियों और यवनियों में इस कांड की चर्चा होने लगी परन्तु हिता रह न पाती। वापी यह देख कर बेटी पर आने वाले भय से सिहर उठती।

मोद का शरीर और वर्ण कलिंग के अन्य लोगों से कुछ भिन्न था। उसका शरीर कुछ अधिक ऊंचा, कंधे चौड़े और रंग भी उतना श्याम न था। उसका जन्म शूरसेन देश में हुआ था। वहीं उसने तक्षण-कला सीखी थी। मोद के कलाकार पिता ने अपना ऋण चुकाने के लिये पुत्र को शूरसेन के मूर्तियों के व्यापारी जेट्ठक चतरथ के यहां बंधक रख दिया था। तभी कलिंग का कलावस्तु का व्यारारी बिठ्ठल शूरसेन गया था। अवसरवश उस समय चतरथ आर्थिक कठिनाई में था। बिठ्ठल ने धन से चतरथ की सहायता की और मोद का हस्त-लाघव और प्रतिभा देख कर उसे ऋण में बंधक ले गया। मोद दस वर्ष के लिए बिठ्ठल की सम्पत्ति बन कर भी दुख की अवस्था में न था। बिठ्ठल मोद को सता कर लाभ नहीं उठा सकता था। मोद का कलात्मक गुण शक्ति के प्रयोग से नहीं निचोड़ा जा सकता था। उसमें मोद का सहयोग और रुचि भी आवश्यक थी। मोद प्रासाद में नये बने मन्दिर में विशेष रुचि और उत्साह से काम कर रहा था परन्तु इतने विलम्ब से कि वह उस काम को समाप्त ही नहीं करना चाहता था।

युवराज्ञी अमिता जब आयु के चौथे वर्ष में थी, दैव इच्छा से उस पर शीतला रोग का प्रकोप हुआ था। रोग से व्याकुल अमिता दिन व रात किसी भी समय हिता की गोद न छोड़ना चाहती थी। युवराज्ञी के ज्वर में मूर्छित हो जाने पर भी हिता उसे अपनी गोद से अलग न करती।

युवराज्ञी के स्वास्थ्य लाभ करने पर महारानी ने दैव कृपा के लिए अपरिमित दान दिया। सहस्त्र-सहस्त्र ब्राह्मणों और श्रमणों को भोजन-वस्त्र से संतुष्ट किया। उन्होंने राजप्रासाद के इक्यावन दासों को अदास कर नागरिक बना दिया और इक्यावन दास खरीद कर उन्हें अदास बना देने का पुण्य किया।

महारानी ने हिता को सम्बोधन किया—"तुझे क्या दें ? हम तेरे ऋणी हैं। तू दासी है। तुझे स्वर्ण दें तो तू उसे धारण नहीं कर सकेगी। सबसे पहले तुझे ही अदास कर देते परन्तु तू स्त्री है। स्त्री का स्वतन्त्र होना दोष है। वह पत्नी होती है अथवा दासी। कोई नागरिक तेरा वरण करना चाहे अथवा तू वेश्या बनना चाहे तो हम तुझे अदास कर दें। तू जब चाहे हम से वर का ऋण माँगना।"—हिता ने महारानी के सम्मुख भूमि पर सिर रख कर कृतज्ञता के आँसू बहा दिये थे।

अब हिता एकांत में सोचती—यदि मोद दास न होता तो वह महारानी से अदास किये जाने का वरदान मांग लेती परन्तु मोद तो दूसरे का दास था। वह हिता का स्वामी कैसे हो सकता था। अभी और सात वर्ष मोद का शरीर तो उसके स्वामी का था। कभी वह कल्पना करती, युवराज्ञी के राज्याभिषेक के समय महारानी उससे कुछ मांगने को कहेंगी तो वह उनके चरणों में सिर रख कर दो वर मांगेगी—अन्नदाता, मूर्ति-तक्षक मोद को खरीद कर अदास करें और दासी को भी अदास करने की कृपा करें।" परन्तु अभी युवराज्ञी के अभिषेक में कई वर्ष का समय था। इतनी लम्बी प्रतीक्षा के बोझ से हिता लम्बे-लम्बे सांस लेकर रह जाती।

अचानक मोद चार दिन तक अन्तःपुर के मन्दिर में नहीं आया। हिता मन को किसी तरह वश न कर सकी तो एक कंचुकी को रक्षा के लिए लेकर युवराज्ञी के लिए पुतलियां ले आने के बहाने जेठुक विठ्ठल के कर्मान्त (कारखाने) में पहुँची। तब उसने सुना कि नगर में महाबलियज्ञ के समारोह की धूम मची हुई है। जेठुक विठ्ठल के दूसरे कलाकार कम्मियों ने यज्ञ की बलिवेदी के लिए अथवा दूसरे स्थानों में जो तोरण बनाये थे, नगरपाल उनसे सन्तुष्ट न हुआ तो विठ्ठल ने मोद को वह तोरण बनाने के लिए रोक लिया है। हिता के लिए मोद को कई दिन बिना देखे रहना असह्य पीड़ा थी।

× × ×

## महाबलि-यज्ञ

उस समय भारत के अन्य राज्यों की भाँति कलिंग में भी यज्ञ की प्रथा प्रायः लोप हो चुकी थी। यज्ञों का वास्तविक प्रयोजन अर्थात कुलों द्वारा सामूहिक रूप से कृषि अथवा अन्य व्यवसाय करने की प्रणाली तो कई शताब्दि पूर्व ही समाप्त हो चुकी थी परन्तु देवताओं की कृपा अथवा परलोक कामना के लिए यज्ञ अथवा बलि की प्रथा-मात्र शेष रह गई थी। तीर्थंकरों के जीव दया-धर्म के उपदेश से सम्पन्न वैश्यवर्ग को बलि की प्रथा से भी विरक्ति होने लगी थी। परिणाम में यज्ञ के समारोहों का अवसर भी न रहा। देवी-देवताओं में आस्था रखने वाले लोग यदि देवी-देवता की कृपा पाने अथवा परलोक की कामना से यज्ञ और बलि का अनुष्ठान करते भी थे तो वह सामाजिक समारोह न बनकर व्यक्तिगत और पारिवारिक अनुष्ठान-मात्र रह जाता था।

कलिंग के महामात्य आचार्य सुकंठ मगध के सम्राट चंड अशोक के अपरिमित सैन्य दल लेकर कलिंग की ओर चढ़ते आने के समाचारों से बहुत चिंतित थे। वे जानते थे कि अशोक अपने साम्राज्य की रक्षा और विस्तार के लिए कलिंग की विजय को अनिवार्य समझता था। अशोक को आशंका थी, कलिंग के मगध सम्राट की आधीनता स्वीकार न करने के उदाहरण से साम्राज्य के आधीन दूसरे राज्यों का भी साहस बढ़ेगा और वे भी मगध से स्वतन्त्र होने की इच्छा करेंगे। यह दोनों में से एक के नष्ट होने का प्रश्न था इसीलिए इस बार अशोक इतना बड़ा सैन्य-दल लेकर कलिंग पर आक्रमण के लिए आ रहा था कि कलिंग का एक-एक सैनिक यदि मगध के बीस-बीस सैनिकों का भी वध कर दे तो भी मगध की सेना की संख्या अधिक रहे। महामन्त्री ने कलिंग की रक्षा के लिए आमरण युद्ध का निश्चय किया था। उनका निश्चय केवल युद्ध में धराशायी हो जाने का ही नहीं बल्कि कलिंग के स्वत्व की रक्षा करने का था। इसके लिए वे केवल राज्य की सेना पर ही निर्भर न कर, कलिंग की पूरी प्रजा को भी अपने स्वत्व की रक्षा के लिए आमरण लड़ते रहने की भावना से अनुप्राणित कर देना चाहते थे परन्तु महामन्त्री को अपने प्रयत्नों में यथेष्ट सफलता नहीं दिखाई दे रही थी।

चार वर्ष पूर्व अशोक को पराजित करने के लिए कलिंग की प्रजा ने जो

वर्ष पूर्व थी उसका त्रास अब भी बिलकुल भूला नहीं जा चुका था। उस युद्ध में खेत रहे पुरुषों की स्मृतियां अभी शेष थीं, उस युद्ध में पंगु हो गये लोग भी नगर के मार्गों और गलियों में दिखाई देते रहते थे। कलिंग के विस्तृत राज्य के उत्तर भाग की प्रजा ने अशोक के पहले आक्रमण में बहुत हानि सही थी। वे लोग फिर आक्रमण का समाचार पा कर शरण के लिए राजधानी में चले आ रहे थे। इन भयभीत लोगों के कारण राजधानी में भी त्रास बढ़ता जा रहा था।

पिछले युद्ध में अशोक को परास्त करने वाले महाराज के अभाव में भी प्रजा अपने आपको अनाथ समझ रही थी। महारानी से प्रजा दया की आशा कर सकती थी, शत्रु को पराजित कर सकने की नहीं। नगर युद्ध के आतंक और महंगाई से विरूप हो रहा था। जौहरियों, आभूषण और वस्त्र बेचने वालों के बाजार में दुकानदार बैठे-बैठे जम्हाइयाँ लेते रहते और युद्ध के भय की बातें करते रहते। सन्ध्या समय भी बाजारों में फूल बेचने वाली स्त्रियां या वैतालिक न दिखाई देते। अब कोलाहल था तो केवल लुहारों के बाजार में जहाँ भांति-भाति के शस्त्र बनाने के लिए लोहे को पीटने और धातुओं के बजने की झंकारें आधी रात तक सुनाई देती रहती थीं।

कलिंग की महारानी के तथागत का धर्म स्वीकार कर लेने और भिक्षुओं और संघ में उनकी भक्ति हो जाने का प्रभाव भी प्रजा पर स्पष्ट था। नगर में भिक्षुओं की संख्या बहुत बढ़ गई थी। प्रातः, दोपहर अथवा किसी भी समय पीत चीवरधारी भिक्षु नगर में जहां-तहां भिक्षा मांगते अथवा जीवन-मुक्ति के मार्ग का उपदेश देते रहते। अब नगरवासी पहले की तरह भिक्षुओं की उपेक्षा न करते न उन्हें मुंडी कह कर उन पर हंसते ही थे। महारानी के प्रभाव के कारण अब लोग भिक्षुओं का भी आदर राजपुरुषों की ही भांति करते थे। जन-साधारण और सैनिक भी भिक्षुओं को देख कर मार्ग छोड़ देते, आदर से हाथ जोड़ कर खड़े हो जाते और सिर झुका कर उन्हें नमस्कार करते। हाथ में मांस, मद्य अथवा दूसरे अशोभन पदार्थ होने पर उन्हें भिक्षुओं की दृष्टि से छिपा लेते। पीपल के वृक्षों के नीचे अथवा चौराहों पर भिक्षुओं की अप्रसन्नता के भय से पशु-बलि न की जा सकती थी। अपने घरों में भी बड़े बड़े ब्राह्मणों अथवा क्षत्रिय-सामन्तों के अतिरिक्त बलि देने का साहस

जन-साधारण को न होता । जन-साधारण को जीवन संकटमय जान पड़ने लगा था और जीवन के संकटों से मुक्ति का उपाय संसार से वैराग्य ही दीखता था । भिक्षु ही उन्हें सबसे सुखी और आदरणीय जान पड़ते थे । ऐसी अवस्था में प्रजा में युद्ध के लिये क्या उत्साह या सैनिक कर्तव्य के लिये क्या प्रवृत्ति होती ? वे युद्ध को दैवी आपत्ति समझ कर उस से त्राण के लिये आदि दैविक शक्ति और सिद्धों के चमत्कार और आशीर्वाद का ही भरोसा कर सकते थे ।

महामात्य प्रजा की ऐसी भावना और व्यवहार से चिंतित थे परन्तु खड्ग का भय दिखा कर प्रजा को युद्ध लड़ने के लिये हांकने पर दोनों ओर से भयभीत प्रजा आत्मरक्षा के लिये क्या लड़ती ? महामात्य प्रजा में आत्मविश्वास, साहस और कलिंग की राजशक्ति के प्रति विश्वास उत्पन्न करना चाहते थे । इस परिस्थिति का उपाय करने के लिये महामात्य ने महासेनापति भद्रकीर्ति के परामर्श से कलिंग की प्राचीन परम्परा के अनुसार युद्ध में देवताओं से सहायता पाने के लिये देवराज इन्द्र और देवताओं के सेनापति कार्तिकेय की पूजा के लिये एक महान युद्ध-बलि-यज्ञ के समारोह के अनुष्ठान की घोषणा की ।

यह महाबलि-यज्ञ कार्तिक मास की शुक्ला अष्टमी से लेकर पन्द्रह दिन, उस मास की कृष्णा अष्टमी तक होने की व्यवस्था थी । सम्पूर्ण सम्पन्न प्रजा को इस बलि यज्ञ में सहयोग देने का अनुशासन था । नित्य सहस्त्र पशु यज्ञ की अनेक वेदियों पर बलि-दिये जा कर सभी को प्रसाद बांटा जाने की आज्ञा थी और उसके साथ ही सूर्यास्त से आधी रात तक यज्ञ की वेदियों से यथेष्ट मद्य बांटा जाने की भी व्यवस्था थी । राज्य की सभी वारांगनाओं, नर्तकियों, बन्दियों, चारणों और कापालिकों को आज्ञा थी कि चौराहों पर प्रजा को संगीत, नृत्य और विनोद से तृप्त करें । इसके लिये राज्य उन्हें उचित दक्षिणा और पुरस्कार देगा । यज्ञ की प्रथा भूल चुकी प्रजा के लिये यह अनोखी और अद्भुत योजना थी । वे इसे कलिंग की प्रजावत्सल महारानी की कृपा मान कर उनके प्रति श्रद्धा और कृतज्ञता से अभिभूत हो रहे थे । यज्ञ की तैयारियों के समाचारों से ही राज्य और नगर में उत्साह उमड़ पड़ा । जनगण अशोक के आक्रमण का भय भूल कर उत्साह से बावले होने लगे ।

महामात्य और महासेनापति द्वारा आयोजित इस यज्ञ के लिये कलिंग के सभी लोगों की भावना एक ही जैसी नहीं थी । राज्य और नगर के सेठों में

बहुत से जैन तीर्थंकरों और बौद्ध-श्रमणों के अनुयायी हो गये थे। वे जीव-मात्र से आत्मवत भाव और जीवों की हिंसा न करने के धर्म में विश्वास करने लगे थे। उन्हें यज्ञ में पशु-बलि से भय और विरक्ति अनुभव होती थी। वे यज्ञ के अधिष्ठाता ब्राह्मण को परलोक और देवता का एकमात्र प्रतिनिधि मानने के लिये तैयार नहीं थे। इस यज्ञ के लिये पशु और धन देने का अनुशासन उन्हें धर्म पर आघात और अपने ऊपर अन्याय जान पड़ रहा था परन्तु राजाज्ञा के रूप में महामात्य की आज्ञा की उपेक्षा कर सकना सम्भव न था।

मूर्तियों और कला का व्यवसायी बिठ्ठल भी महाबलि-यज्ञ की आयोजना से उत्साहित नहीं था। कुछ वर्ष से उसे प्राय: विहारों और चैत्यों के श्रृंगार का ही काम मिल रहा था। इसलिए उसकी श्रद्धा उसी धर्म की ओर हो गई थी। बिठ्ठल को भी इस बात का कलख था कि नगर के इतर-जन और साधारण लोगों के उन्माद के सुख के लिए उसे भी यज्ञबलि का भाग धन देना होगा। नगरपाल चित्ररथ ने उसे बुला कर यज्ञ के लिये वेदियों, और नगर में स्थान-स्थान पर तोरण बनाने का काम सौंप दिया था। यह भी एक संकट ही था। संदेह था कि चित्ररथ इस काम के लिये उसे जाने क्या देगा; कुछ देगा भी या नहीं। प्राय: छ: मास से बिठ्ठल का सर्वोत्तम कलाकार मोद राजप्रासाद के मंदिर में श्रृंगार करने के लिये बुला लिया गया था। वह जाने कैसा काम था कि मोद काम समाप्त ही न कर पा रहा था। मोद की बनाई वैशाली की नर्तकी की पालकी पर चित्रकारी अधूरी ही रह गई थी।

बिठ्ठल ने अपने दो दूसरे कलाकार कम्मियों को नगर में तोरण बनाने के लिये आदेश दे दिया था परन्तु नगरपाल ने वह तोरण देख कर असंतोष प्रकट किया। नगरपाल चाहता था, कि पिछले वर्ष वसंत-उत्सव के समय जैसा तोरण बनाया गया था, उससे भी उत्तम तोरण बनें। नगरपाल महाबलि-यज्ञ के समय खूब शोभा कर महामात्य और महासेनापती को सन्तुष्ट करने की चिंता में था। बिठ्ठल ने इस अवसर से लाभ उठाने के लिए मोद को राजप्रासाद से बुलवा देने की प्रार्थना की। नगरपाल ने प्रासाद के कर्मान्तधिष्टायक से अनुरोध किया और मोद को महाबलि-यज्ञ के तोरण बनाने के लिये राजप्रासाद से बुलवा लिया।

बिठ्ठल ने मोद को स्नेह से समझाया; यह तोरण कितने दिन

है ? यह तो दो ही दिन का कौतुक है। यज्ञ समाप्त होने पर तो लोग इन तोरणों को खींच-खींच कर गिरायेंगे और बालक इनकी लकड़ियों को सड़क पर रगड़ते हुये घोड़ा बना कर इनकी सवारी करेंगे। तुम जैसे-तैसे लीप-पोत कर कुछ खड़ा कर दो और चैन से वैशाली की नर्तकी की पालकी पूरी कर डालो। राजप्रासाद में मैं किसी दूसरे को भेज दूँगा।

जब लोगों ने तोरण बनाने के लिये मोद को मंच पर चढ़े देखा तो उसके बनाये पिछले तोरणों की याद से जन-साधारण की भीड़ मंच के नीचे जुड़ जाने लगी। आते-जाते लोग तोरण के नीचे पहुंचने पर आंखें उठा कर कुछ पल के लिये खड़े हो जाते। निठल्ले लोग तो प्रायः वहां ही बने रहते।

इतने लोगों की कौतूहलपूर्ण और उत्सुक दृष्टि अपनी ओर लगी देख कर मोद के लिये यह सम्भव न हुआ कि वह तोरणों को यों ही लीप-पोत कर नगरपाल को बहला दे। वह मनोयोग से तोरणों पर चित्रकारी करने लगा। उसने तोरण के मुख्य फलक पर मयूर पर सवार देवताओं के सेनापति कार्तिकेय का चित्र बनाना आरम्भ किया।

इतने सुन्दर और विशाल तोरण बनते देख कर लोगों को आश्वासन मिलता कि महाबलि-यज्ञ का आयोजन बहुत विराट रूप में होगा, नित्य सहस्र-सहस्र पशुओं की बलि के प्रासाद का मांस बंटने और यज्ञ की वेदियों पर सूर्यास्त से आधी रात तक राज्य की ओर से मद्य के छत्र लगने की बात झूठी नहीं है। बूढ़े लाल-बुझक्कड़ लोग बताने लगते—हमने बचपन और जवानी में प्रतिदिन पांच सहस्र पशु-बलि के भी यज्ञ देखे हैं। तब पूरी रात राज्य और सेठियों, जेठकों और श्रेष्ठियों की ओर से मद्य के छत्र चालू रहते थे। सब चौराहों पर वारांगनाएं रात भर नृत्य करती थीं। मद से उन्मत्त स्वर्ण के आभूषण पहने वेश्याएं हमें बांह से पकड़ कर खींच-खींच कर ले जाती थीं। अब वह समय कभी नहीं लौट सकते।

कुछ लोग इस आशा में कि शीघ्र ही बिना मूल्य छक कर पीने को मद मिलेगा, अंटी में छिपाये कार्षापण निकाल कर समीप की दुकान से मद ला कर पीने-पिलाने लगते और बलि-यज्ञों का अंत करा देने वाले जैन तीर्थंकरों और बौद्ध श्रमणों के प्रति कुवचन बोल कर क्रोध प्रकट करने लगतेः—साधारण जन के आनन्द से जलने वाले इन स्वार्थियों ने सम्पन्न-लोगों को सिखा दिया

है कि बलि-यज्ञ पाप है। प्रजा का समूह में भोग करना पाप है और निठल्ले मुंडिओं के लिये विहार बना कर उन्हें नित्य खिलाते रहना पुण्य है ? सेठ्ठी और वणिक लोगों को तो तीर्थंकरों और श्रमणों का धर्म भला लगेगा ही ! गद्दी पर बैठे-बैठे उन्हें मांस भोजन पचेगा कैसे ? वह बलि क्यों दें ? बलि में धन लगना है इसलिये कृपण सेठ्ठी को बलि पाप जान पड़ती है। मूर्ख यह नहीं जानते कि देवता बलि पाकर संतुष्ट होगा या तुम्हारे स्वयं भी कुछ न खाने-पीने से ? देवता नाच-गान से रीझेगा या उसके सामने आंख मूंद कर बैठ जाने से ? वे लोग कलिंग की राजेश्वरी, महामात्य और महासेनापती की जय पुकारने लगते, जिनकी कृपा से यज्ञ की परम्परा का पुनरुद्धार हुआ।

मोद के मंच पर बैठ कर तोरण बनाते समय कभी-कभी वृद्ध गायक लोहित भी नीचे भीड़ में खड़ा हो जाता। वह मोद की चित्रकारी देखता हुआ गाने भी लगता तो और अधिक लोग मंच के नीचे जमा हो जाते। लोहित का पिता मद्य की दुकान करता था। पिता की मृत्यु के बाद लोहित को दुकान पर बैठकर मद्य के प्यासों की प्रतीक्षा करते रहना अच्छा न लगता। प्यासों के पास मूल्य न होने पर उन्हें निराश लौटा देना उसे और भी बुरा लगता। उसके गीतों की प्रशंसा करने वालों को वह बिना मूल्य पिला कर भी संतोष पाता। लोहित के गीतों की प्रशंसा बढ़ती गई परन्तु उसकी दुकान की आय घटती गई। मद्य की दुकान के लिये राजकर देने के लिये उसे उधार लेना पड़ता। अन्त में ऋण चुकाने में उसकी दुकान ही बिक गई। वह बेघर-बार का हो गया। सम्पन्न लोग उसके गीत सुनने के लिये उसे अपने घर बुला लेते। सर्वसाधारण उसे पथों और पण्यों में घेर कर उसके गीत सुनने लगते।

लोहित का कंठ मधुर था और उसके गीतों के बोल मर्मस्पर्शी होते थे। उसके गीत सुनकर गवाक्षों में बैठी या घर के किवाड़ की ओट खड़ी कुल-बधुओं के नेत्र सजल और हृदय विह्वल हो जाते। उस से आंखें चार होजाने पर वे नेत्र झुकाना भी भूल जातीं। लोहित ऐसे मुग्ध नेत्रों की स्मृति को गीतों में याद करता। वह कल की चिन्ता में न मुर्झा कर आज खिल लेने की बात कहता। पथिक और श्रेष्ठी, बंधु के प्रेम और विरह के गीत गाता और पिछले युद्ध में अशोक का मान-मर्दन करने वाली कलिंग की वीरता के गीत गाता। लोहित नागरिकों को जो संतोष देता था उसका मूल्य माप-तोल करके नहीं

लिया-दिया जा सकता था इसलिए लोहित को धन की अपेक्षा आदर और स्नेह ही अधिक मिलता था ।

लोहित मंच के नीचे खड़ा आँखें उठाये मोद की चित्रकारी को देखता रहता तो भीड़ उसे घेर कर अनुरोध करने लगती:—मोद अपनी कला से हमारी आंखों को तृप्त कर रहा है । तुम कानों में अमृत वर्षा करो ।

अपने प्रति भीड़ का आदर देख कर लोहित के नेत्र आधे मुंद गये और नथुने फड़क उठे । उसने कलिंग की महारानी की मयूर पर आरूढ़ कार्तिकेय से उपमा देकर कलिंग की प्रजा की उपमा देवताओं के दल से दी और रण-क्षेत्र से भागती अशोक की सेना की उपमा राक्षसों के पराजित दलों से । उसने कलिंग की प्रजा को ललकारा—पराजय मृत्यु है ।..........तू मृत्यु से लड़ । अपना पेट भरने वाली धरती की रक्षा के लिये, जन्म देने वाली वृद्धा माँ की कोख को चोट से बचाने के लिये, अपनी सन्तान को स्तन पिलाती अपनी पत्नी के लिये शत्रु के बाणों को अपने चौड़े सीने पर झेल । अरे कलिंग के सिंह, आततायी को फाड़ डालने के लिए अपना पंजा उठा ! भीड़ साधु-साधु कह कर झूमने लगी ।

मोद के हाथ की कूची रुक गई और वह लोहित की उपमाओं को ध्यान से सुनने लगा । उसके हाथ फिर तोरण के फलक पर काम करने लगे । उस ने मयूर पर सवार देवताओं के सेनापति कार्तिकेय के मुख को कलिंग की महा-रानी की मनुहार दे दी और देवताओं की सेना में, मंच के नीचे खड़ी भीड़ में से लोहित, अम्ब, किस्सल, गुम्फ आदि के मुखों की कृतियाँ बना दीं । भीड़ पर अद्भुत उन्माद छा गया । लोग ऊंचे स्वर में मगध के राजा अशोक को युद्ध के लिये ललकारने लगे । कुछ लोग समीप की दुकान से मद ले आये और लोहित और मोद को पिला कर, खम ठोक कर और एक दूसरे की पीठ पर थपकी देकर पुकारने लगे—"नित्य मांस खा कर और मद पी कर मत्तगज की-सी शक्ति इन बांहों में आ जायगी तो मगध के उस जंगली भैंसे को सींगों से पकड़ कर पीछे ढकेल देने में क्या लगेगा ।"

दूसरों ने कहा—"इस बार उस भैंसे को पीछे ढकेल देने से ही नहीं होगा । उसे बलि करके देवता को तृप्त करना होगा ।"

युद्ध के उत्साह का रंग छा जाने पर भीड़ के लोग एक दूसरे को मल्लयुद्ध

के दांव-पेच बताने लगते। पथों और मार्गों पर ही जोड़ छूट जाते। कुछ लोग लकड़ियां और तलवारें निकाल लाते और आत्मरक्षा के और शत्रु पर आक्रमण करने के पैंतरे सीखने लगते। जनसाधारण स्वयं ही युद्ध के लिये तैयार होने लगे।

बिट्ठल ने नगरपाल की सहायता से मोद को राजप्रासाद के मंदिर का शृंगार करने के काम से बुलवा कर तोरण बनाने के काम पर लगा दिया था तो मोद को यह परिवर्तन बहुत खला था। सब से बड़ा दुःख था हिता से मिल सकने का अवसर छिन जाना परन्तु दासत्व के भाग्य के सामने सिर झुका कर सह जाने के अतिरिक्त और उपाय न था। तोरण पर काम करते समय उसके मन में हिता का रूप और कानों में हिता के शब्द गूंजते रहते। सोचता रहता कि वह भी उतनी ही व्याकुल हो रही होगी परन्तु जब तोरण के नीचे खड़ी हो जाने वाली भीड़ के सम्मुख अपनी कला का प्रदर्शन करने का भाव जाग उठा तो वह अपने काम में इतना डूब गया कि हिता की बात सोचने का व्यवधान ही न मिलता। जब लोहित के आजाने से तोरण के नीचे युद्ध की उत्तेजना का वातावरण बन जाने लगा तो मोद भी उसमें समा गया। हिता की याद उसे केवल रात में ही व्याकुल करती और इसके लिये उसे अशोक पर क्रोध आता।

हिता कई दिन तक मोद को देखने का अवसर न पाकर अवश हो गई थी। रहा न गया तो कंचुकी मामा के सम्मुख युवराज्ञी के लिये बिट्ठल जेठ्ठक के यहां से खिलौने ले आने का बहाना बता कर और एक कंचुकी को रक्षा के लिये साथ लेकर वह नगर में गई। मोद बिट्ठल के कर्मान्त में न था। समाचार पाकर हिता राज-पथ की ओर गई। उसने मोद को ऊंचे मंच पर तोरण बनाते हुए देखा और नीचे लगी भीड़ को भी देखा। ऐसी अवस्था में वह क्या कर सकती थी? वह विवश लौट आई परन्तु एक और सप्ताह बीत जाने पर वह फिर व्याकुल हो गयी। विश्राम के लिये युवराज्ञी के दोपहर में सोते ही उसने मां वापी से कहा—"अम्मा, युवराज्ञी अभी सोयी है। उठ कर पुतली के विवाह का खेल खेलेगी। मैं कंचुकी मामा से कह दूं कि आचार्य और आर्य की हवेलियों से बालिकाओं को बुलवालें। मैं जाकर जेठ्ठक बिट्ठल के यहां से नयी पुतली ले आऊं। मां मुझे दोपल विलम्ब भी हो जाये तो तू राजकुमारी को बहलाये रखना।"

बेटी के प्रति आशंका से और उसे बरजने के लिए वापी की आंखों में आँसू आ गये थे परन्तु हिता मां के आँसुओं को देख कर भी रुक न सकी। रक्षा के लिए कंचुकी को साथ ले वह बिठ्ठल के यहाँ पहुंची। मोद को न पा कर भी उसने नयी पुतलियाँ लीं और फिर काँपते हुए कदमों से राजपथ की ओर चल दी। इस बार उसे दूसरे ही चौराहे पर मोद मंच पर दिखाई दिया। भीड़ पहले से भी कुछ अधिक ही थी। हिता ठिठकी, कुछ सोचा ; क्या मोद सचमुच मुझे भूल गया है ? मन और भी उद्विग्न हो गया। निश्चय किया एक बार उससे बात तो करुं, बात क्या है ? वह राजप्रासाद में क्यों नहीं आता ? हिता तोरण के नीचे पहुंच गई। तोरण की ओर मुख उठाये बेसुध भीड़ उसे मार्ग न दे रही थी। वृद्ध कंचुकी को पुकारना पड़ा—"भले लोगो, राजदासी को मार्ग दो।"

पुकार सुन कर मोद ने नीचे झाँक कर देखा। हिता की क्षुब्द उदास आँखों से उसकी आँखें मिलीं। हिता का पीला मुख देख कर उस का हृदय बिंध गया। हिता की आंखों में भरी पीड़ा की उपेक्षा वह न कर सका। वह तुरन्त मंच से उतर आया। मंच के नीचे खड़े लोगों से उसने कहा—"एक हथियार लेकर अभी आधी घड़ी में लौटता हूं और वह हिता और कंचुकी के पीछे लम्बे-लम्बे पग रखता चल दिया। कुछ ही दूर जा कर उसने देखा, हिता और कंचुकी धीमे-धीमे जा रहे थे और हिता घूम-घूम कर देखती जा रही थी'।

मोद के पास कुछ न कुछ कार्षापण रहते ही थे। बिठ्ठल उसके प्रति कृपा प्रकट करने के लिए उसे जब-तब कुछ देता रहता था परन्तु इतना कभी नहीं कि मोद भाग जाने का साहस कर सके। हिता के सुझाने से मोद ने कंचुकी को मद्य पी सकने के लिए कुछ कार्षापण दे दिये। कंचुकी प्रसन्न होकर तुरन्त समीप की मद्य की दुकान की ओर लपक गया और मोद हिता को एक सूनी गली में ले जा कर बात करने लगा। मोद ने राजप्रासाद के काम से हटाये जाकर तोरण बनाने के काम में लगाये जाने के प्रसंग में बताया कि नगर में समाचार है कि चंड अशोक बहुत बड़ी सेना लेकर आ रहा है। बहुत भयंकर युद्ध होगा। अब युवराज्ञी के अभिषेक के समय अदास होने की प्रतीक्षा का अवसर नहीं है। सुना है, चंड अशोक पूरे नगर को जला देगा और सब प्रजा को मगध का दास बना लेगा। साहस है तो तू प्रासाद से भाग कर आ

जा। हम दोनों प्राणों की बाजी लगा कर कहीं चले जायेंगे या मैं तोरण बनाने का काम पूरा करके राज्य से शस्त्र लेकर सैनिक बन जाऊँगा। कई लोग यह भी कहते हैं कि महाबलि-यज्ञ के पश्चात महामात्य सैनिक बन जाने वाले दासों को युद्ध की समाप्ती पर अदास कर देने की आज्ञा दे देंगे।

मोद की बात सुन कर हिता व्याकुल हो गई। मोद के शस्त्र लेकर युद्ध में जाने की कल्पना उसे ऐसी ही लगी जैसे शस्त्रों का प्रहार स्वयं उसके शरीर पर हो रहा हो। हिता ने मोद को समझाया, ऐसा न करना, मैं मर जाऊँगी। भगवान स्थविर का आशीर्वाद और चमत्कार ही युद्ध से कलिंग की रक्षा करेगा। महारानी एक सहस्र भिक्षुओं से परित्राण-दिवा-सेना का पाठ करायेंगी। तू कुछ दिन प्रतीक्षा करा महारानी तुझे मन्दिर का श्रृंगार पूरा करने के लिए फिर स्मरण करेंगी।

कंचुकी के मद्य पीकर लौटने में और हिता के मोद से सैनिक न बनने का अनुनय-विनय करते रहने में बिलम्ब हो गया। प्रासाद की ओर जल्दी-जल्दी कदम रख कर लौटती हुई हिता चिंतित थी कि बिलम्ब हो जाने से युवराज्ञी खिन्न हो रही होगी। कहीं उसे पुकारा तो नहीं जा रहा होगा?

बालिका युवराज्ञी दोपहर में नींद से उठी तो आचार्य महामात्य और आर्य महासेनापति के परिवार की बालिकाओं ने उन्हें पुतली का व्याह रचाने की बात याद दिलाई। हिता अभी लौटी न थी। प्रौढ़ा वापी ने ब्याह की वेदी वैसे ही बना दी जैसे हिता बनाया करती थी। बेटी के इतने समय तक न लौटने से वापी का मन चिंता से बैठा जा रहा था। उसने पुराने गुड्डे और गुड़ियों को ही विवाह के लिए वेदी पर बैठा दिया।

अमिता पुराने गुड्डे-गुड़िया देख कर संतुष्ट न हुई। मचल कर बोली—"पुरानी पुतलियों का विवाह नहीं करेंगे। हितू को बुलाओ। हितू नई पुतलियाँ देगी।" अमिता का विश्वास था कि हिता उसकी सब इच्छायें पूरी कर सकती है।

वापी और भी चिंतित हो गई। वह राजकुमारी के हठ को जानती थी। आशंका हुई कि उसकी बेटी के प्रति अबोध राजकुमारी की कृपा बेटी का काल न बन जाए। हिता के पुकारे जाने पर उसकी खोज होने लगेगी। हिता को प्रासाद से गए तीन घड़ी समय बीत चुका था। ऐसी अवस्था में हित

पर जो भी बीत जाता, थोड़ा होता। दासों का नायक दण्डक हिता से प्रसन्न नहीं था। हिता ने दण्डक को सन्तुष्ट करना स्वीकार नहीं किया था। वापी ने बेटी को संकेत से समझाया भी था कि प्रासाद के दास-दासियों का सुख-दुख दण्डक के ही हाथ में है। महारानी और राजकुमारी की कृपापात्र होने पर भी कभी न कभी तो दण्डक के हाथ पड़ना ही होगा। दासी-पुत्री को अभिमान शोभा नहीं देता क्योंकि उसका अभिमान निभ नहीं सकता। सभी लड़कियों की माताओं की तरह वापी को भी विश्वास था कि उसकी बेटी की आयु बीस वर्ष की हो जाने पर भी वह भोली है।

वापी ने अमिता को बहुत स्नेह और अनुनय से समझाया—"अम्मे महारानी, हितू महारानी के लिये नई पुतलियाँ लेने गई है, अभी आती होगी। तब तक महारानी खेलें।"

अमिता ने हठ से मचल कर अपना पूरा शरीर हिला दिया और केशों के कुंडल छिटका कर अस्वीकार किया—"हमें नहीं चाहिए नई पुतलियाँ। हम नहीं खेलेंगे। हितू को बुलाओ।"

वापी ने और भी दुलार से मनाया—"महारानी शीघ्र आयें! हम गुड़िया बेटी का ब्याह करा दें, नहीं तो शुभ मुहूर्त टल जायगा। भद्रे लेखा भी आयें।"—वापी ने महामात्य की पौत्री को सम्बोधन किया।

अमिता ने फिर भी हठ से शरीर को हिला कर आग्रह किया—"कैसे? हितू पुतली की मां है। मां के बिना पुतली का ब्याह कैसे होगा?"

वापी ने महासेनापति की पौत्री सीता के सिर पर हाथ रख कर सुझाया—"भद्रे सीता पुतली की माँ बनेगी।"—सीता प्रसन्नता से उछल पड़ी, "हां, हम पुतली की मां बनेंगी।"

अमिता ने हठ से अस्वीकार कर दिया—"नहीं नहीं, पुतली की मां तो हितू है। उसे अच्छी माँ बनना आता है। उसे बिदाई का रोना अच्छा आता है। पुतली की बिदाई के समय कौन रोयेगा?"

वापी ने विश्वास दिलाया—"अम्मे महारानी, इस दासी को खूब रोना आता है। हिता को मैंने ही रोना सिखाया है। पुतली की मां यह दासी बनेगी। दासी खूब रोयेगी।"—वापी गुड़िया के सिर पर स्नेह से पुचकार कर बोली, "यह मेरी बिटिया है"—और फिर रुआंसे स्वर में बोली, "मेरी राजकुमारी

बिटिया को अनाम देश का राजकुमार ब्याह कर सात नदी और सात समुद्र पार ले जायगा। मैं अपनी दुलारी बिटिया को याद करूंगी।"—वापी अपनी आँखों पर आंचल का छोर रखकर रोने का अभिनय करने लगी।

अमिता वापी के अभिनय से हंस पड़ी परन्तु क्षण भर में ही फिर हिता की याद आ जाने से पुकार उठी—"हितू को बुलाओ, हितू कहाँ गई ?"

अमिता की पुकार से वापी का मन दहल रहा था। लोग यह पुकार सुनेंगे तो क्या होगा ! वापी ने अमिता को गोद में उठा लिया और बोली—"हम तो महारानी को लेकर नाचेंगे !" और वह अमिता को हंसा देने के लिये उसे गोद में उठा कर वेग से चक्कर काटने लगी। अमिता वापी के यत्नों से बहली नहीं, झुंझला कर उसने कहा—"हमें छोड़ दो !"

युवराज्ञी वापी की गोद से उतर कर हिता के न आने के क्रोध में भूमि पर लोट-लोट कर रोने लगी। वापी विवश थी। वह चाहती थी यदि राजकुमारी उसके प्राण लेकर, उसके प्राणों का खिलौना बना कर भी बहल जाये तो वह अपने प्राण दे दे। किसी प्रकार उसकी अल्हड़ बेटी पर आया संकट टल जाये परन्तु अमिता ऊंचे स्वर में हिता को पुकार कर रोने लगी।

सहसा कक्ष के बाहर अलिंद से क्रोध भरी पुकार सुनाई दी—"बेटी क्यों रो रही है ?"—स्वर महिराजमाता, अमिता की दादी का था। वापी के पांव तले से धरती निकल गई। वापी की दृष्टि कक्ष के द्वार की ओर गई। महिराजमाता एक दासी के कंधे का और दूसरी दासी की बांह का सहारा लिये कक्ष में चली आ रही थीं। उन्हों ने झुंझला कर क्रोध प्रकट किया—"दुष्टा बेटी को रुला क्यों रही है ?"

वापी काठ की तरह स्तब्ध रह गई। उसके होठों से शब्द न निकल सका। दादी के लाड़ से अमिता और भी मचल कर ऊंचे स्वर में रो कर पुकार उठी—"हितू को बुलाओ ! हितू को बुलाओ !"

युवराज्ञी के रोने के शब्द से अलिंदों और आँगन में से कई दासियाँ और यवनियां भी आ पहुंची। राजमाता का क्रोध बढ़ गया। उन्होंने ऊंचे स्वर में पुकारा—"कहां गई है वह पिशाची बिटिया को छोड़ कर ? दंडक से कहो, उस डायन का कठोर शासन करे !"

अमिता के रोने की पुकार सुन कर कंचुकी उद्दाल भी आ गया था। उस

ने मचलती हुई अमिता को उठा कर कंधे से लगा लिया और आश्वासन दिया—"अम्मे महारानी, हितू महारानी के लिये बहुत सुन्दर पुतली ला रही है। हितू कुरंग शावकों को कोमल दूब खिला रही है। चलें, महारानी वहां ही चलें। भद्रे लेखा और भद्रे सीता भी चलें।"

कंचुकी अमिता को गोद में और लेखा और सीता को भी साथ लेकर आंगन में चला गया। राजमाता भी दासियों का सहारा लिये हिता की उच्छृंखलता के प्रति क्रोध में बड़बड़ाती और उसे उचित दंड मिलने की इच्छा प्रकट करती प्रमद-उद्यान की ओर गईं। स्तब्ध वापी ही कक्ष में अकेली रह गई। राजमाता के चले जाने के पश्चात ही उसे भय से कांपने का साहस हुआ। उसका शरीर जल की वेगवान धार में उगे हुए कास की भांति थरथरा उठा। आँगन और अलिंदों से दासियों की पुकारें सुनाई दे रही थीं—"हिता को बुलाओ !.... दुष्टा कहां गई !....उसे शीघ्र बुलाओ !"—अपनी बेटी के प्रति भय और उस की मूर्खता के प्रति क्रोध से वापी के नेत्रों से न तो आंसू ही टपक सके न मुख से शब्द ही फूट सका।

हिता विलम्ब हो जाने के कारण सहमते हुए राजप्रासाद की ड्योढ़ी में आई। उसके गेहूएं रंग के उभरे हुए गालों पर भय का पीलापन और बड़े-बड़े नेत्रों के श्वेत कोयों में चिंता स्पष्ट झलक रही थी। अपने आंचल में सम्भाली हुई पुतलियों और खिलौनों को वह सहारे के लिये हृदय पर दबाये थी, मानों भय और संकट में और तीक्ष्ण दृष्टियों से युवराज्ञी के खिलौने ही कवच बन कर उसकी रक्षा कर सकते थे।

द्वार पर भाले और ढालें लिये चौकसी के लिये खड़े सैनिकों में से एक ने हिता की ओर कटाक्ष किया—"नगर में अभिसार कर आई?" और हिता के साथ के कंचुकी को मद्य पिये देख कर उसने कहा—"और इस कापालिक को तो देखो, यह उसकी छाया से ही उन्मत्त हो रहा है।

हिता का सिर तनिक और झुक गया और वह मौन रह आगे बढ़ गई। पीठ पीछे से उसे दूसरे सैनिक का स्वर सुनाई दिया—"अभी तो अन्त:पुर में इसे पुकारा जा रहा था।"—पीठ पीछे से यह शब्द सुन कर हिता के पांव लड़खड़ा गये।

हिता अन्त:पुर की ड्योढ़ी पर पहुंची तो द्वारपाल यवनी ने उसे क्रोध में

ललकारा—"पिशाची तू झूठ बोल कर गई थी। तूने कहा था कंचुकी मामा की आज्ञा से जा रही थी....।"

हिता उत्तर देने को थी कि उस की मां भीतर के आंगन से ड्योढ़ी की ओर आती दिखाई दी। वापी क्रोध और भर्त्सना में चिल्ला उठी—"मर जाय तू! इतना विलम्ब कैसे हुआ तुझे? चल, युवराज्ञी तेरे बिना मचल रही है।"

हिता भय के कारण कांप गई। उस से कुछ उत्तर देते न बना। वह शीघ्रता से अलिंद की ओर बढ़ने लगी परन्तु दूसरी यवनी ने आकर उसे पकड़ कर खींचते हुए कहा—"इसे दंडक ने अनुशासन के लिये बुलाया है। राजमाता की आज्ञा है इसका कठोर शासन किया जाये।"

हिता ने कांपते हुए कातर स्वर में विनय की—"मैं कंचुकी मामा के आदेश से युवराज्ञी के लिये पुतलियाँ लेने जेठ्ठक के यहां गई थी।"

वापी ने आगे बढ़ कर बेटी को दूसरी बांह से अपनी ओर खींचते हुए यवनी से प्रार्थना की—"स्वामिनी, इस मूर्खा को जाने दो। युवराज्ञी इसके बिना रो रही है। पहले युवराज्ञी को मना ले, फिर तो आयगी ही, जायगी कहां?"

यवनी ने वापी को धक्का देकर पीछे हटा दिया और हिता को कलाई से खींचती हुई अन्तःपुर और बाहर के आंगन के बीच दासों पर अनुशासन रखने वाले दास-नायक दंडक के छोटे आंगन में ले गई। दासों के अनुशासन का छोटा आंगन पत्थर की भीतों से घिरा था। मुख्य द्वार से सामने कच्ची भूमि का आंगन था और आंगन के आगे पत्थर का नीचा अलिंद। अलिंद के भीतर से काठ के भारी किवाड़ लगी कोठड़ियाँ दिखाई देती थीं। अलिंद की भीत में कंधे की ऊंचाई पर कई खूंटे गड़े थे। खूंटों से लोहे की सांकलें, रस्सियां और कोड़े लटके थे। इस स्थान का ध्यान आते ही प्रासाद के छः सौ दास-दासियां के शरीर भय से कंटकित हो जाते थे। अलिंद के बायें कोने में काठ के तख्त पर एक कपड़ा बिछाये दासनायक दंडक कोहनी का सहारा लिये लेटा था। एक दासी प्रासाद के उपयोग से जीर्ण हो चुके चिकनी लकड़ी के बेलन से उसकी जाँघें दबा रही थी।

हिता को बांह से खींच कर लाती हुई यवनी आंगन से ही बोल उठी—"स्वामी, यह पिशाची, अभी नगर में अभिसार करके लौटी है। पूरे अन्तःपुर, उद्यान और बाहर आँगन में भी कहीं नहीं थी।"

दंडक ने अधिकार की मुद्रा में हिता की ओर देखा परन्तु नेत्रों की तृष्णा न छिपी। हिता ने हाथ जोड़ कर कातर स्वर में प्रार्थना की—"स्वामी, दासी कंचुकी मामा के आदेश से कंचुकी पिक की रक्षा में भगवती युवराज्ञी के लिये यह पुतलियां लेने"—अपनी झोली दिखा कर उसने कहा, "जेठ्ठक बिठ्ठल के यहां गई थी।"

दंडक नेत्रों में तृष्णा और स्वर में अधिकार का पुट देकर बोला—"हम सब समझते हैं। युवराज्ञी की परिचर्या दासी होने का बहुत अहंकार है तुझे इसलिये हमारी अवज्ञा करती है। नहीं जानती, पानी में रह कर मगर से अहंकार नहीं निभता।"—धमकाते-धमकाते दंडक के होठों पर मुस्कान आ गई, "अच्छा, यहाँ तो आ। हमारी जांघे तो दबा।"

हिता हाथ जोड़कर अति कातर स्वर में बोली—"स्वामी, युवराज्ञी दासी को पुकार रही हैं, रुष्ट हो जायंगी।"

दंडक क्रोध में अपने हाथ का सहारा लेकर तख्त से आधा उठ गया और बोला—"युवराज्ञी को स्पर्श करने का इतना अभिमान है तुझे! हमारी जांघों में तुझे कांटे जान पड़ते हैं!"

हिता के पीछे खड़ी यवनी ने हंस कर उसे दंडक की ओर ढकेल दिया। दंडक ने बांह बढ़ा कर उसकी कलाई पकड़ ली और अपनी ओर खींचा। हिता ऊंचे स्वर में पुकार उठी—"क्षमा हो स्वामी, क्षमा हो! युवराज्ञी पुकार रही हैं, रुष्ट हो जायंगी! मुझे भय लगता है।" उसके स्वर में कातरता थी परन्तु उसने अपनी बांह मरोड़ कर और जोर से झटका देकर दण्डक से छुड़ा ली।

दण्डक तख्त पर सीधा हो होंठ चबा कर बोला—"भय ही तो तुझे नहीं है। आज तू हमें पहचान ले कि हमारी अवज्ञा करने से क्या होता है।" दण्डक ने यवनी की ओर देखा, "चार कशा (कोड़े) इसकी पीठ पर लगा दे।"

हिता कांप उठी। यवनी मानो ऐसे अवसर की प्रतीक्षा में ही थी। उसका हाथ तुरन्त खूंटे पर लटके कोड़े की ओर बढ़ गया। यवनी ने कोढ़े को उतार वायु में लहरा कर हिता की पीठ पर दे मारा। कोड़े की रस्सी हिता की

पीठ को लपेटती हुई उसकी ठोढ़ी को भी छू गई । हिता एक ही चोट में धरती पर गिर कर चीख उठी—"हाय अम्मा !"

दंडक क्रोध में आंखें निकाल कर भयंकर कुत्ते की तरह गुर्रा उठा—"तू चिल्लाती है ? तेरा इतना साहस !" उसने यवनी पर क्रोध प्रकट किया—"मूर्खा, तूने इसका मुख क्यों नहीं बांधा ?"

यवनी मुंह बांधने का कपड़ा लेने के लिये खूंटे की ओर लपकी । उसी समय छोटे आंगन की भीत के परे से युवराज्ञी की पुकार सुनाई दी—"हितू, ओ हितू !"

दण्डक तुरन्त तख्त से उठ खड़ा हुआ । उसने हाथ के संकेत से यवनी को हिता का मुंह बांधने से रोक दिया और हिता की ओर घूर कर बोला—"मौन ! नेत्र पोंछ !"

भीत के परे से फिर वृद्ध उद्दाल और युवराज्ञी की पुकार सुनाई दी—"हितू, ओ हितू !"

दण्डक के संकेत से यवनी ने कपड़े से हिता का मुख पोंछ दिया और वह उसे बांह से खींचती हुई आंगन के द्वार की ओर ले गई और आंगन के द्वार के बाहर धकेल दिया ।

हिता ने देखा सामने वृद्ध उद्दाल और उसके पीछे युवराज्ञी को गोद में लिए उसकी माँ खड़ी थी । यवराज्ञी के ओंठ उसे पुनः पुकारने के लिए खुल रहे थे । हिता पीड़ा सह जाने के लिए अपने होठ दाँत से दबाये और युवराज्ञी को गोद में ले लेने के लिए बांहें फैलाये उसकी ओर बढ़ गई । अमिता वापी की बांहों से हिता की गोद में आ गई । अपने आंसू भरे नेत्र अमिता से छिपाने के लिए राजकुमारी की ठोढ़ी स्नेह से अपने कन्धे पर रख ली और पीड़ा से डगमगाते कदमों से अलिंद की ओर चल दी ।

हिता ने अपनी रोई हुई आंखें और ठोढ़ी की चोट अमिता की आँखों से बचाने का बहुत यत्न किया परन्तु राजकुमारी ने पूछ ही लिया—"तू रोई है ?"

हिता मौन रह गई ।

अमिता ने अपनी गोल कोमल बांहें हिता के गले में डाल कर और उसके गले से लिपट कर पूछा—"दण्डक ने तुझे मारा है ?"

हिता ने स्वीकृति में सिर झुका दिया और नेत्र आँचल से पोंछ लिए।

अमिता के नेत्र विस्मय और करुणा से फैल गए। उसने पूछा—"क्या तू ने किसी से कुछ छीना था ; तू ने क्या किसी को डराया था ; तूने क्या किसी को मारा था ?"

हिता ने युवराज्ञी के केशों में स्नेह से उँगलियां डाल कर इनकार में सिर हिला कर मुस्कराने का यत्न किया।

अमिता ने और भी विस्मय से पूछा—"तो दण्डक ने तुझे क्यों मारा ?"

अमिता के भोलेपन से हिता के होठों पर मुस्कान आ गई। उसने युवराज्ञी की ठोढ़ी स्नेह से उँगलियों की पोरों में लेकर उत्तर दिया—"अम्मे महारानी, मैं खेलने चली गई थी।"

अमिता का विस्मय और भी बढ़ गया। उसने पूछा—"तू किससे खेलने गई थी ?"

हिता की मुस्कान में लाज की लाली मिल गई—"अपने प्रेमी से, महारानी !"—उसने उत्तर दिया।

अमिता ने फिर अपनी बाहें हिता के गले में डाल दीं और उत्सुकता से पूछा—"तूने कैसा खेल खेला था ?"

हिता ने अमिता की आंखों में स्नेह से देख कर उत्तर दिया—"प्यार का खेल।"

अमिता हिता के गले से और भी चिपट गई और अनुरोध से बोली—"प्यार का खेल हमें भी सिखा दे, हम भी खेलेंगे !"

हिता ने अमिता के कपोलों पर प्यार कर उत्तर दिया—"मेरी महारानी, जब समय आयगा, प्यार का खेल स्वयं आ जायगा।"

अमिता के कोमल, बाल मुख पर चिंता का भाव आ गया। उसने पूछा—"तब क्या हमें भी कोई मारेगा ?"

हिता ने राजकुमारी को हृदय से चिपका लिया और सान्त्वना दी—"दासी महारानी पर सौ बार बलि-बलि जाये, युवराज्ञी को कोई नहीं मार सकेगा।"

अमिता ने अविश्वास से पूछा—"तो दण्डक ने तुझे क्यों मारा?"

हिता ने हृदय से उठती हूक को दबा कर उत्तर दिया—"महारानी, दासी तो दासी है।"

अमिता ने क्षण भर चिंता में मौन रह कर हिता को शिक्षा दी—"हितू, तू फिर प्यार का खेल मत खेलना।" और पूछा, "तू क्या फिर खेलेगी?"

हिता मुस्कराकर पल भर चुप रह गई और फिर बोली—"हाँ महारानी, खेलूंगी!"

"तो दण्डक तुझे फिर मारेगा।"—अमिता ने सहानुभूति से कहा।

हिता ने सहसा उत्तर दिया—"महारानी, प्यार के खेल में मार भी मीठी लगती है।"

अमिता और भी कौतूहल से बोली—"तो हम भी खेलेंगे प्यार का खेल।"

हिता ने युवराज्ञी का मुख स्नेह से हाथों में दुलराकर कहा—"हाँ महारानी, समय आयगा तो खेलोगी ही, रह नहीं सकोगी।"

उसी समय राजमाता दासी के कंधे का सहारा लिए प्रमद-उद्यान में मन न लगने के कारण लौटती हुई अलिंद में से जा रही थी। द्वार से अमिता को हिता के साथ सन्तुष्ट खेलते देख कर उन्होंने पोती को स्नेह से पुचकार कर पूछा—"आ गई तेरी हितू? खूब खेलो बेटी! शतायु हो मेरी दुलारी!" दासी के प्रति उनका क्रोध भूल भी चुका था।

युवराज्ञी दौड़ कर दादी के घुटनों से लिपट गई और बोली—"महि-अम्मा, हितू प्यार का सुन्दर खेल जानती है। हितू कहती है, हमें भी प्यार का खेल आ जायेगा।"—और तुरन्त ही दादी को छोड़ फिर हिता से आ लिपटी।

हिता ने अपनी भूल समझ भय से सिमिट कर लज्जा से सिर झुका लिया और युवराज्ञी को गोद में उठा कर महि-राजमाता से ओट कर ली।

दादी ने बिना दांत के पोपले मुख से पौत्री को पुचकारा—"हां मेरी बेटी, हां मेरी चांद, हमारी बेटी सूर्य-सा प्रतापी वर पायेगी। हमारी पोती अखंड, एकछत्र राज करेगी।"

## उत्सव निषेध

राजसखा-नगर श्रेष्ठी सौमित्र के दान-पुण्य की कीर्ति कलिंग में पहले भी बहुत थी। नगर में देवराज की तुष्टि के लिए महाबलि-यज्ञ की तैयारियां आरम्भ होने पर वह ख्याति और भी बढ़ गई। नगर में धूम थी कि राज्य की ओर से प्रतिदिन एक सहस्र पशु की बलि दी जाने पर नगर के बड़े सामन्त, आचार्य और सेट्ठी लोग भी प्रतिदिन कोई पांच कोई दस कोई पच्चीस पशु और उतने ही घट मद्य की बलि वेदियों पर देंगे। कहते थे कि सौमित्र अपनी मान-मर्यादा के अनुकूल प्रतिदिन एक-सौ एक पशु और एक-सौ एक घट मद्य की बलि देगा। यह संवाद पा कर आचार्य और महासेनापति भी सन्तुष्ट थे।

सेठ सौमित्र की हवेली की ड्योढ़ी के भीतर फुलवाड़ी से सजा बडा आंगन था। आंगन के पश्चात कक्षों से घिरे बाहर और भीतर के आँगन। दोपहर के समय बाहर के आंगन के बड़े कक्ष में सेठ के कर्मान्त लोग (कारिन्दे) गद्दियों पर बैठे व्यवसाय का काम कर रहे थे। कुछ लोग गहना रख कर धन उधार लेने आये थे कुछ उधार लौटा कर गहना लौटाने। गद्दियों पर अनेक व्यवसायों के भाव-तौल हो रहे थे। भीतर स्वयं सेठ की गद्दी पर पुण्य-कार्य के लिए सेठ की ओर से दी जाने वाली बलि के सम्बन्ध में प्रसंग चल रहा था। उससे भीतर के आंगन में उस दिन पूर्णिमा होने के कारण एक-सौ एक भिक्षुओं के भिक्षा ग्रहण करने के लिए ऊन के एक-सौ एक आसनों के सम्मुख एक-सौ एक चौकियाँ पर भिक्षा का प्रबन्ध किया जा रहा था। अन्त:पुर की

ओर से आँच पर उबलते घी और सुगन्धित चावलों के दूध में औटाये जाने की सुगन्धियां आ रही थीं।

बड़े आँगन में स्थान-स्थान पर शोभा के लिए मीठे शब्द बोलने वाले पक्षी पिंजरों में बन्द लटके हुए थे परन्तु आँगन में पक्षियों का कोलाहल एक कोने में रखे हुए बड़े-बड़े पिंजरों में बंद जंगली पक्षियों के चीखने के कारण था। प्रति पूर्णिमा को सौमित्र भिक्षुओं को भिक्षा देने से पूर्व एक-सौ एक पक्षिओं को बन्धन मुक्त करने का पुण्य लाभ भी करता था। रीति के अनुसार ही शोभा के लिए पिंजरों में बन्द पक्षी लटके हुए थे और रीति के अनुसार दूसरे एक-सौ एक पक्षी बन्धन-मोचन की प्रतीक्षा में छटपटा रहे थे। सब व्यापार अपने अपने-अपने स्थान पर रीति से चल रहे थे परन्तु सेठ एक समस्या के कारण क्षुब्ध था। यह समस्या उठ खड़ी हुई थी पशुओं के व्यापारी शंख के रीति का मार्ग भंग कर देने के कारण।

सेठ के मन में क्षोभ उत्पन्न करने वाली घटना का आरम्भ लगभग दो मास पूर्व हुआ था। तब बलि-यज्ञ की सम्भावना जन-साधारण के मन में नहीं थी। इस योजना की चर्चा केवल महामात्य के आसपास के लोगों और सामन्त वर्ग में चल रही थी। उसकी कुछ भनक महामात्य के पुत्र आर्य मयंक, सूर्यकीर्ति और सामन्त सुधन्वा से सौमित्र के कानों में पड़ चुकी थी। तभी राजद्वार में सेठ सौमित्र के प्रभाव के कारण तीन महासेठों के सार्थ का धन युद्धकोष में न जा कर विहार में सुरक्षित हो जाने की बात भी नगर में फैल गई थी। राज्य के सेठों में सौमित्र का आदर बहुत बढ़ गया था। उस समय कलिंग का प्रसिद्ध बनजारा शंख राजाज्ञा से कठिनाई में पड़ जाने के कारण सहायता मांगता सौमित्र के यहां आया था।

शंख के कुल में दो पीढ़ी से पशुओं का व्यापार होता था। पिछले चार वर्ष से कलिंग में अहिंसा धर्म का प्रचार अधिक हो जाने से बलि की प्रथा के प्रति जन की विरक्ति बढ़ गई थी। इसलिये दूध और खेती के काम न आ सकने वाले पशुओं का कोई उपयोग नहीं रह गया था। ऐसे पशुओं का मूल्य गिरता गया और उन्हें खरीदने वाला कोई न था। ऐसे पशु मनुष्यों के लिये गले का बोझ बन गये। शंख संकट में था, क्या करे? पूर्वजों के व्यापार से उस का निर्वाह नहीं हो रहा था। तब उसे एक उपाय सूझा कि कलिंग में अनुपयोगी

हो कर बोझ-मात्र बन जाने वाले पशुओं को नाम-मात्र मूल्य में खरीद कर बन-बन चराता गौड़ देश ले जाये। गौड़ देश में उस समय भी बलि की प्रथा और भोजन की रीति थी। वहां शंख पशुओं को अच्छे मूल्य पर बेच कर वहां का वस्त्र अथवा दूसरे पदार्थ कलिंग ले आता। अहिंसा के प्रचार से उस पर आ गया दुर्भाग्य सौभाग्य में परिणत हो गया था। पशुओं का बड़ा सार्थ ले जाते समय उसे ऋण लेना पड़ता। तीन मास में ही लौट कर वह निश्चित समय पर व्याज सहित ऋण चुका देता। शंख उस बार श्रावण मास में पशुओं का सार्थ ले कर गौड़ की ओर जा रहा था तो सीमान्त के शौल्किक ने उसे सीमा पार करने की आज्ञा नहीं दी। उसे कहा गया कि अब राजाज्ञा से पशुओं का कलिंग से बाहर जाना निषिद्ध है।

शंख राजद्वार में सौमित्र के प्रभाव की ख्याति सुन कर सहायता मांगने सेठ के यहाँ आया और प्रार्थना की कि सेठ राजद्वार में उस पर दया करने की प्रार्थना कर कलिंग के लिये बोझ-स्वरूप उसके सार्थ को राज्य से बाहर जाने दें। शंख की समस्या सुन कर सौमित्र ने विवशता प्रकटी की—"भाई, मैं क्या कर सकता हूं। मैं भी तुम्हारी तरह राज्य की प्रजा हूं। महामति आचार्य किस प्रयोजन से क्या करते हैं; यह हम लोग क्या जानें? उनकी आज्ञा का पालन करना ही अपना धर्म है। तुम पशुओं को हिंसा के लिये, उन्हें बेचने के लिये ही गौड़ और कामरूप ले जाना चाहते हो, मैं हिंसा के काम में कैसे सहयोग दूं?"

शंख की ओर से बात करने के लिये सेठ वासल साथ आया था। उसने कहा—"जेठ्ठक ठीक कहते हैं। जेठ्ठक को हिंसा से विरक्ति है परन्तु यह सहस्रों पशु कलिंग में भूखे मर जायंगे तो कौन पुण्य होगा? उन्हें बांध कर खिलाते रहने का सामर्थ्य तो शंख में नहीं है। सौमित्र ने करुण स्वर में कहा—"भगवान की पृथ्वी पर सब के लिये स्थान और भोजन है। उन जीवों को हिंसा के भय से मुक्त करने का पुण्य प्राप्त करो। स्वर्ण ही तो सब कुछ नहीं है।"

वासल ने सुझाया—"यदि शंख इन पशुओं को यों ही इधर-उधर हांक दें और यह राज्य के खेत चरते फिरें तो भी किसी का क्या कल्याण हो जायगा? पशु का उपयोग न हो सकने पर उसका क्या मूल्य? उसे खिलाने के लिये कौन अपना धन मिट्टी करेगा? हम कहते हैं कि जेठ्ठक प्रति-पूर्णिमा

एक-सौ एक पक्षी खरीद कर बंधन मुक्त करते ही हैं। जेठ्ठक को अहिंसा का पुण्य हो जाय इस लिये शंख को लागत का औना-पौना मूल्य दे दें और यह पशु बनों में छोड़ दिये जायें। शंख को तो निश्चित तिथि पर ऋण चुकाना ही होगा। उसने तो लाभ की आशा से बेचने के लिए यह पशु खरीदे थे। पुण्य के संकल्प से नहीं।"

सौमित्र ने मुस्कराकर उत्तर दिया—"पक्षियों को बंधन-मुक्त करने की रीति है। पशु खरीद कर मुक्त करने की रीति सुनी नहीं। अभी कुछ नहीं कह सकूंगा। कुछ समय पश्चात सोचेंगे।"

शंख के बहुत अनुनय करने पर और वासल के वचन की जमानत पर सौमित्र ने शंख के चार सहस्र पशुओं का लागत मूल्य आंक कर उसका पौना मूल्य छः सहस्र धरण ब्याज पर तीन मास के लिये उधार दे दिये थे और कह दिया था, इस मूल्य में शंख के पशुओं की सम्पत्ति सौमित्र के यहां बंधक रही। पशु तब तक शंख के ही रहें। शंख सौमित्र से पाया धन ऋण में देकर भी चिंतित था कि इतने पशुओं का वह करेगा क्या? वह कभी किसी सामन्त और कभी किसी आचार्य के द्वार पर जा कर अनुनय करता रहा कि उसे पशुओं को राज्य से बाहर ले जाने की अनुमति दे दी जाये। उसके चरवाहे पशुओं को कभी एक बन में ले जाते और कभी दूसरे में। यह सम्पत्ति शंख के लिये आपत्ति हो रही थी। प्रायः एक मास इसी प्रकार बीता होगा कि राज्य में महाबलि-यज्ञ की धूम मच गई। अनेक लोगों ने छोटे-मोटे पशु खरीद-खरीद कर बलि के लिये अपने घरों के सामने बांध लिये। इन्हें देख अनुकरण की बाढ़ चल पड़ी। जिसके घर के द्वार या आंगन में बलि के लिये बंधा पुष्ट पशु दिखाई न देता वह दूसरे के सामने ओछा अनुभव करने लगता। राज्य की ओर से भी बड़े-बड़े पशु खरीद कर बाड़ों में एकत्र किये जा रहे थे। पशुओं, घास और दाने-भूसे के दाम बहुत बढ़ गये थे।

शंख देवराज इंद्र की इस कृपा से निहाल हो गया। वह प्रतिदिन सौ-डेढ़-सौ पशु बनों से मंगा कर बेचता रहता। इसे पशुओं का मूल्य पांच-छः गुणा अधिक मिल रहा था। ज्यों-ज्यों महाबलि-यज्ञ का समय समीप आ रहा था, पशुओं का मूल्य बढ़ रहा था। सौमित्र ने भी प्रतिदिन एक-सौ एक पशुओं का प्रबंध करने के लिये शंख को बुला भेजा था।

शंख ने जब सौमित्र से अपने पशुओं का मूल्य, एक मास पूर्व सेठ द्वारा लगाये गये मूल्य से पांच-छः गुणा अधिक मांगा तो सौमित्र को क्रोध आ गया। सेठ ने दावा किया—"पशु तुमने बेचे कैसे ? वह तो हमारी धरोहर थे ?"

शंख संकट से मुक्त हो चुका था। उसने निर्भयता से उत्तर दिया—"यदि सेठ ने पशुओं को अपनी सम्पत्ति मान लिया था तो उनके पोषण का उत्तर-दायित्व क्यों नहीं लिया था ? मैंने जितना पशुओं को खिलाया है, उसका मूल्य सेठ देंगे ? सेठ अपना मूल और ब्याज लें। धरोहर का कोई प्रश्न नहीं है। पशुओं का मूल्य तब कुछ था अब दूसरा है। तब मूल्य निश्चय करना सेठ के हाथ की बात थी, अब मेरे हाथ की बात है।"

सौमित्र ने समझाया—"यह व्यवसाय का नियम और धर्म नहीं है। व्यव-साय का मूल वचन का पालन करने में ही है। वैश्य का सिर गिर जाये, वचन नहीं गिर सकता।"

शंख इस पर भी न माना। उस ने हठ किया—"जेट्ठक, व्यवसाय कुछ लाभ के लिये ही किया जाता है, हानि के लिये नहीं ! जेट्ठक पशुओं को अपनी सम्पत्ति मानते हैं, तो उन्हें खिलाने और सेवा का मूल्य मुझे दें अन्यथा आज के मूल्य पर पशु खरीदें !"

शंख को तर्क से परास्त न होते देख कर सौमित्र दूसरे ढंग से बोला—"देखो भाई, इस समय हमें धर्म-कार्य के लिये पशु चाहिये, लाभ के लिये नहीं। व्यापारी को व्यापारी का ही सहारा होता है। ऐसा न हो, परस्पर-कलह में पछताना पड़े.........."

सौमित्र की बात पूरी नहीं हो पायी थी कि बाहर के कक्ष से उसके एक कर्मान्त ने आ कर सूचना दी—"विहार से पालकी लौट आई है। संदेश है कि स्थविर असंद अत्यन्त खिन्न हैं। वे तीर्थ यात्रा के लिय कलिंग नगर का त्याग करने का विचार कर रहे हैं। स्थविर के न आने से शेष एक-सौ एक भिक्षु भी नहीं आयेंगे......।"

सौमित्र और भी भयानक धर्म-संकट में पड़ गया। यदि भिक्षु संकल्प की हुई भिक्षा स्वीकार न करेंगे तो अनर्थ हो जायगा ? उसने मौन ही रह कर शंख को लौट जाने का संकेत कर दिया और कुछ पल विचार कर आदेश दिया—"दो-पहर टल जाने पर तो श्रमण भिक्षा ग्रहण नहीं करेंगे। समय

अधिक नहीं है। श्रमणों के सत्कार के लिये प्रस्तुत की गई सम्पूर्ण भिक्षा तुरन्त विहार में पहुंचाई जाये।"

सौमित्र स्वयं तुरंत पालकी में जा बैठा और पालकी को अति शीघ्र गति से विहार की ओर चलने का आदेश देकर स्थविर असंद की खिन्नता के कारण का अनुमान करने लगा। स्थविर असंद की खिन्नता साधारण बात न थी। विहार के अनुशासन और रीति-नीति में स्थविर की बात का विशेष प्रभाव था।

सेठ सौमित्र की पालकी के कहार विहार में अति शीघ्र पहुंचने के लिए प्रायः दौड़ते हुए पालकी को गलियों के मार्ग से लिये जा रहे थे। विहार के समीप जब वे एक बाजार में पहुंचे, राज-पुरुषों ने पालकी को गली में ही रुक जाने का संकेत कर दिया। महारानी की सवारी विहार की ओर जाने वाली थी। उत्तर टेकरी की घटना के पश्चात से महामात्य का आदेश था कि महारानी की सवारी नगर में से निकलते समय पथों पर भीड़ न होने दी जाये। सौमित्र को पहचान कर और यह जान कर कि विहार के लिये भिक्षा जा रही है, राजपुरुषों ने सेठ को विहार की ओर बढ़ जाने दिया। सौमित्र चिंता में अनुमान कर रहा था, उनकी किस उपेक्षा के कारण स्थविर उनसे विरक्त हो गये हैं।

स्थविर असंद की खिन्नता का मूल एक दूसरी ही घटना में था। घटना गत संध्या ही नगर के एक पथ पर घट गई थी।



भगवान तथागत ने भिक्षुओं के लिये 'विनय' का उपदेश दिया था कि भिक्षु सदा दृष्टि मार्ग पर रख कर चलें। अनेक भिक्षु विनय और शील के इस नियम का पालन करते भी थे परन्तु कलिंग के विहार में भिक्षुओं की संख्या सहस्र से अधिक हो चुकी थी। धर्म और संघ की शरण आने वाले सभी लोग सुख का मोह और दुख का भ्रम तोड़ने की इच्छा से संघ की शरण नहीं आये थे। ऐसे लोगों की संख्या भी बहुत थी जो गृहस्थ जीवन और संसार के संघर्ष को दुखमय और सन्यास के कठिन मार्ग को चिन्ता रहित और

सुखमय समझ बैठे थे। वे केवल ऐसे सुखों की उपेक्षा करना चाहते थे जिनके मूल्य में दुख सहना पड़ता है। वे बिना मूल्य सुख चाहते थे। ऐसे भिक्षुओं के लिये प्रत्येक पग पर विनय और शील के कठिन नियमों के बोझ से गर्दन झुकाये चलना सुखकर नहीं था। वे नगर के पथों, मार्गों और गलियों में से आते-जाते समय सदा मन को मार कर दृष्टि को भूमि पर गड़ाये रखने के नियम की चिंता नहीं करते थे। स्थविर असंद की दृष्टि भी सदा मार्ग पर नहीं झुकी रहती थी परन्तु उनके इस अनियम का कारण नियम की उपेक्षा नहीं, नियम के पालन के लिये अति सतर्कता ही थी। उन्हें यह चिंता रहती थी कि दूसरे भिक्षु नियम को भंग न करें अथवा कलिंग के नागरिकों की प्रवृत्ति धर्म की ओर बढ़ रही है या नहीं।

स्थविर असंद ने विनय के नियमों का विशेष अध्ययन और मनन किया था। जैसे विहार के संघ-स्थविर धर्म के मूल सिद्धान्तों का विशेष अध्ययन करने और समाधि, साधना का विशेष अभ्यास करने के कारण 'धम्मधर' और स्थविर मुद्गल सुत्तों का अध्ययन और मनन करने के कारण 'सुत्तधर' थे वैसे ही स्थविर असंद विनय और संघ के अनुशासन के नियमों का विशेष अध्ययन करने के कारण 'विनयधर' थे। स्थविर असंद की प्रवृत्ति आत्म-चिंतन द्वारा निर्वाण प्राप्ति की अपेक्षा बहुजन को धर्म की शरण में लाकर उनका कल्याण करने और धर्म की प्रतिष्ठा बढ़ाने की ओर थी। स्थविर के सद्धर्म का प्रचार करने के परिणाम में कलिंग के बहुत से लोगों ने बुद्ध, धर्म और संघ की शरण स्वीकार की थी इसलिये विहार और नगर में असंद का विशेष आदर और स्थान था। असंद अंतेवासियों और श्रमणों सहित पथ या बाजार से निकलते तो कोलाहल शांत हो जाता और उपासक तथा जन-साधारण हाथ बांध कर खड़े हो जाते। कुछ उपासक भूमि पर सिर रख कर भी उन्हें प्रणाम करते। स्थविर असंद आशीर्वाद देकर उन लोगों के कल्याण की कामना करते जाते। इन सब बातों का ध्यान रखने के कारण स्थविर असंद की दृष्टि पथ पर नहीं गड़ी रह सकती थी।

परन्तु महाबलि-यज्ञ के समारोह की तैयारियों से जन-समुदाय की भावना और नगर के वातावरण में परिवर्तन आ गया था। महामात्य ने राजपुरुषों को आदेश दे दिया था कि युद्ध समाप्त होने से पूर्व पचास वर्ष से कम आयु के किसी भी व्यक्ति को सिर मुंडा कर, पीला चीवर धारण कर लेने की

अनुमति नहीं है। राजपुरुष युवा भिक्षुओं को देख कर पूछ बैठते —"अरे कायर, यह चीवर कब धारण किया है ?"

जैसे प्रजा महारानी की धर्म और संघ के प्रति श्रद्धा देखकर धर्म और संघ का आदर करने लगी थी वैसे ही राजपुरुषों को स्थान-स्थान पर भिक्षुओं को टोकते देख कर प्रजा के मन से धर्म और संघ के प्रति प्रतिष्ठा कम होने लगी। नगर में सहस्रों भिक्षुओं के होते हुए भी बलि का प्रसाद, मांस और मद्य नगर में बंटने लगे। कौतुक और विनोद की आशा ने जन-साधारण के मन से भिक्षुओं का आदर और आतंक दूर कर दिया। लोग धर्म के अनुशासन से स्वच्छन्दता अनुभव करने लगे। वे भिक्षुओं को देखकर भी अनदेखा कर जाते। पहले युवा भिक्षुओं को यौवन में ही काम का त्याग करने वाले मान कर उनका आदर किया जाता था अब उन्हें कायर और भगोड़े समझ कर लोग उन पर विद्रूप से हंसने लगते। अनेक भिक्षु और विशेष कर स्थविर असंद, राज्य और नगर में यह परिवर्तन देख कर चिंतित और खिन्न थे। उन्हें जन समुदाय के महाबलि-यज्ञ के उत्सव की प्रसन्नता और उच्छृंखलता में पाप की प्रवृत्ति दिखाई देती थी। बलि के लिये उत्साह और आनन्द में अभिधर्म का ह्रास और अपमान जान पड़ता था।

स्थविर असंद किसी कारण से दोपहर पश्चात् चैत्य गये थे और साँझ के झुटपुटे अंधेरे में चार अंतेवासियों के साथ महाबोधि विहार लौट रहे थे। राजपथ से एक मार्ग के संगम पर बलि वेदी के लिये बनाये गये तोरण के समीप पथ पर साधारण लोगों की भीड़ गोल बांधे खड़ी थी। मृदंग कड़ाके से बज रहा था और उसके साथ भीड़ के केन्द्र से "वाह रे भट्ट ! यह मारा ! ऐसे मार !" पुकारें उठ रही थीं। लकड़ियों के आपस में टकराने की खटपट और अट्टाहास भी सुनाई दे रहा था। स्थविर असंद कुछ दूर से उस भीड़ की ओर देखते कल्पना कर रहे थे कि उनके समीप पहुंचते ही लोग घबरा जायेंगे, और भीड़ कैसे छट जायगी। स्थविर असंद शिष्यों सहित भीड़ के समीप पहुंच कर ठिठक गए परन्तु अपने विनोद में बेसुध भीड़ का ध्यान उनकी ओर नहीं गया और न भीड़ हिली।

स्थविर के एक शिष्य ने नागरिकों की इस अभद्रता से खिन्न हो कर क्रोध में दो बार पुकारा—"अरे मूर्ख लोगो, भन्ते के लिए मार्ग दो।"

युवा भिक्षु की क्रोध भरी ललकार सुनकर भीड़ ने भिक्षुओं की ओर ध्यान दिया। भीड़ आनन्द और विनोद में ललकार दी जाने से सहमी हुई थी कि भीड़ में से एक व्यक्ति अट्टाहास कर पुकार बैठा—"अभी बहुत है मटकी में, इन मुंडियों को भी पिलाओ।"

भीड़ का सम्भ्रम टूट गया और लोग छंट जाने की अपेक्षा खिलखिला कर हंस पड़े। आदर पाने के लिए अभ्यस्त युवा भिक्षु ने इस अनादर और उपेक्षा से और भी क्रुद्ध होकर समीप खड़े लोगों को धक्का देकर स्थविर के लिए मार्ग देने के लिए धमकाया। धक्का पाने वाला व्यक्ति दाँव-पेंच और युद्ध की तैयारी की उमंग में था। उसने धक्का देने वाले भिक्षु को टंगड़ी देकर गिरा दिया। तब तक दूसरे लोग सावधान हो गए। उन्हें भिक्षु का अनादर न करने का ध्यान आ गया। लोगों ने धृष्टता करने वाले को पकड़ कर एक ओर हटा दिया और लाठियाँ लेकर दाँव-पेंच करने वाले भी मार्ग से एक ओर हट गये।

स्थविर असंद ने आनन्द में उन्मत्त होकर अविनय करने के लिए भीड़ की प्रतारणा की। भीड़ के कुछ लोग सिर झुका कर क्षमा माँगने लगे परन्तु लोहित ऊंचे स्वर में बोल उठा—'साँड़ और साधु से क्या झगड़ा। इन्हें मार्ग दे देना ही ठीक है।"

भीड़ के खिलखिला कर हंस पड़ने पर वह फिर बोला—"भन्ते, समुदाय के आनन्द-विनोद से क्यों खिन्न होते हैं ?" और वह ऊँचे स्वर में गाने लगा—"जैसे रोग का भय होने पर वैद्य की खोज होती है वैसे ही संसार से निराश होने पर परलोकदाता की चाह होती है। हमें तो सामने रखे भोजन और हाथ की तलवार का परलोक की अपेक्षा अधिक विश्वास है।" लोग फिर खिल-खिला कर हंसने लगे।

स्थविर असंद ने उत्सव के आनन्द में उन्मत्त होकर माया के भ्रम में फंसने के लिए भीड़ की प्रतारणा की परन्तु भीड़ हंसती ही रही। स्थविर क्रोध में पाँव पटकते हुए विहार की ओर चल दिये।

उस रात स्थविर असंद ध्यानावस्थित होने के लिए समाधि से बैठे तो भीड़ से अपमान पाने की पीड़ा के कारण ध्यान केन्द्रित न हो सका। विश्राम के लिए चटाई पर लेटे तो भी सोचते रहे—"कलिंग में धर्म की विजय के

स्थान पर सहसा धर्म का ह्रास क्यों हो गाया ? जन-समुदाय में अधर्म का भय और धर्म का आदर क्यों नहीं रहा ? चार वर्ष तक शनैः-शनैः जो कुछ बन पाया था, वह पन्द्रह दिन में ही सब लोप हो गया ? सहसा उन्हें कारण समझ आ गया—यह सद्धर्म-विरोधी महामात्य सुकंठ का धर्म विरोध है। समुदाय को भ्रम मे डालने के लिए, ब्राह्मणों का छल है। जन को तृप्ति की आशा और भ्रम रहेगा तो कोई धर्म और परलोक की चिंता क्यों करेगा ? भिक्षु और संघ धन, द्रव्य और सब सांसारिक भोगों को छोड़ कर आदर भी न पायेगा तो धर्म की विजय कैसे होगी''''''''

स्थविर असंद ध्यान और समाधि के लिए बनाई गई गुफा में चटाई पर चिंता की मुद्रा में बैठे थे। दर्शन की अनुमति पाकर सौमित्र उनके सम्मुख आया। सेठ ने भक्ति-भाव से भूमि छूकर, प्रणाम कर, अपनी भिक्षा अस्वीकार कर दी जाने का कारण और अपना अपराध जानने के लिए विनय की।

स्थविर ने सेठ की धर्म-भावना से सान्त्वना पा कर उत्तर दिया—"विनय का उपदेश है कि मन चिंतित होने पर भिक्षु को अन्न ग्रहण करना उचित नहीं। ऐसा अन्न शरीर में राग उत्पन्न करता है।"

सेठ के मन खिन्न होने का कारण पूछने पर स्थविर ने गत संध्या नगर में घटी घटना सुना दी, कैसे नगर में धर्म की हानि हो जाने पर मार्ग में भीड़ ने भिक्षुओं का अपमान किया और उन पर हंसती रही।

स्थविर और श्रमणों के अपमान की बात सुन कर सौमित्र को स्थविर से भी अधिक दुख हुआ। सेठ कुछ समय इस दुख से मौन रहा और फिर नेत्रों में परिताप भर कर बोला—"भन्ते, नगर में बलि की हिंसा की योजनाओं का ही यह प्रभाव है। भन्ते, यह तो अभी पाप की छाया-मात्र है। जब नित्य सहस्र-सहस्र पशुओं का रक्त और सहस्र-सहस्र कलश मदिरा के बहेंगे तब इस राज्य और नगर में रसातल तक खोजने से भी धर्म न मिलेगा। तब हिंसा और पाप से दुखी होने वाले भिक्षु इस राज्य में कैसे निवास कर पायेंगे ?"

सेठ का स्वर और भी व्याकुल हो गया—"भन्ते और संघ के उपदेश और दयामयी महारानी के प्रभाव से अहिंसा धर्म में विश्वास करने वाले लोगों को भी नित्य पशु-बध के पाप का भागी बनना होगा। युवाजन धर्म में श्रद्धा होने पर भी धर्म का मार्ग ग्रहण नहीं कर सकते। महामात्य पशुओं के रक्त और मद्य के प्रवाह से प्रजा को उन्मत्त कर रहा है। संसार से विरक्त महारानी अपने अधिकार की चिंता नहीं करतीं। बालिका युवराज्ञी को भला क्या ज्ञान? उनकी इस उपेक्षा में राजसिंहासन भी आचार्य का ही समझिए। प्रजा को युद्ध से असमर्थ हुआ देख कर वह राजसिंहासन भी सम्भाल लेगा तो उसका विरोध कौन करेगा?"

असंद ने निराशा से उत्तर दिया—"जिस राज्य और नगर में इस प्रकार पाप की बढ़ती हो रही हो तो उसका नाश होना ही उचित है। ऐसे पाप में भिक्षु क्यों रहे?"

सौमित्र क्षण भर विचार में मौन रह कर बोला—"भन्ते के चित्त की शांति के उपाय के लिये भन्ते का पापी देश को त्याग देना उचित होगा परन्तु भन्ते तो केवल अपने निर्वाण की चिंता न कर समुदाय के कल्याण, बहुजन-हिताय, बहुजन-सुखाय की चिंता करते आये हैं? सहस्र भिक्षुओं के इस संघाराम का क्या होगा? महाविहार के लिए संचित लाखों धरण धन को भी क्या भन्ते आचार्य को सौंप जायेंगे? धर्म से विमुख होकर राज्य की प्रजा का क्या होगा? भन्ते, यह तो पाप और हिंसा को प्रश्रय देना होगा।"

स्थविर ने क्रोध से उत्तर दिया—"जिस राज्य और नगर की प्रजा वासना के लिये धर्म और परलोक की चिंता नहीं करती, धर्म और संघ का आदर भी नहीं करती, वह अपने किये का फल पायगी। कर्म फल ही तो मनुष्य को बाँधता है। जिसका जैसा कर्म है, वह वैसा फल पायगा।"

सौमित्र ने कर जोड़ कर प्रार्थना की—"भन्ते, आज्ञा दें तो उपासक निवेदन करे। यह राज्य आचार्य का नहीं है। राज्य कलिंग के राजवंश का है। महारानी हिंसा को प्रश्रय नहीं देना चाहतीं। महारानी के अज्ञान में हिंसा का पाप राज्य को डुबो रहा है। महारानी यह भी नहीं जानती कि उनके राज्य में साधना-रत भिक्षुओं का अपमान हो रहा है। यह केवल धर्म-विरोधियों की अभिसंधी है। धर्म की रक्षा की सामर्थ्य भन्ते में ही है।"

महास्थविर जीवक और स्थविर असंद और आनन्द द्वार के भीतर दिखाई न दिये। एक-सौ एक बहंगियों में लाई गई भिक्षा की ओर भी किसी ने ध्यान न दिया। चारों ओर सूनेपन और आशंका का वातावरण था। उस सूनेपन में विहार के भीतर दोपहर की वायु से हिलते पीपल के बड़े वृक्ष के पत्तों की खड़खड़ाहट महारानी को हाहाकार की भाँति दारुण अनुभव हुई। द्वार पर खड़े दो मौन भिक्षु महारानी को मार्ग दिखाते हुए महास्थविर के स्थान की ओर ले चले। महास्थविर अपनी ध्यान-गुफा में एक आसन पर विचार की मुद्रा में बैठे थे।

महारानी के प्रणाम के उत्तर में महास्थविर ने आशीर्वाद देकर आसन ग्रहण करने का संकेत किया। महारानी के साथ आई एक दासी ने महास्थविर के सम्मुख भूमि पर उन का आसन बिछा दिया। दूसरी दासी ने उस पर कुशासन रखा। आसन पर बैठ कर महारानी ने हाथ जोड़ कर विनय की—"भन्ते, संघ के लिये उपासिका की भिक्षा स्वीकार करें।"

महास्थविर ने महारानी के मुख की ओर देख कर उत्तर दिया—"परमभगवती उपासिका की धर्म में श्रद्धा से महारानी का कल्याण हो परन्तु संघ के लिये महारानी की भिक्षा का उपयोग नहीं है। भिक्षु के लिये पाप और हिंसा में रत यजमान के घर की भिक्षा स्वीकार करना उचित नहीं।"

जीवक के शब्द सुन कर महारानी का शरीर भय से सिहर उठा। उसे अनदेखा कर के जीवक कहते गए—"स्थविर असंद और संघ के अनेक भिक्षु राज्य और नगर में फैल गई प्रचंड हिंसा और धर्म के नाश से व्यथित होकर धर्म-रक्षा के लिए निराहार रह कर तथागत का ध्यान कर रहे हैं। धर्म और संघ की शरण के लिए संसार का त्याग करने वाले भिक्षुओं को सैनिक कार्य की हिंसा के लिए हाँका जा रहा है। राज्य में तथागत के अनुयायी, संसार त्यागी, भिक्षु अपमानित हो रहे हैं। प्रतिदिन सहस्र-सहस्र पशुओं की बलि की हिंसा में संघ का सम्पूर्ण धर्म डूब जायगा। धर्म पर आये संकट से रक्षा के लिए भिक्षु निराहार रह कर परित्राण-दिवा-सेना का पाठ कर रहे हैं। जब तक संघ और राज्य से अधर्म का संकट दूर न होगा, संघ भिक्षा ग्रहण न कर निराहार रहेगा।"

महारानी का गौर वर्ण पीला पड़ गया। हाथ जोड़ कर उन्होंने विस्मय

प्रकट किया—"राज्य और संघ पर अधर्म का संकट·······? ज्ञानधन भन्ते, उपासिका का अज्ञान दूर करें ?··· उपासिका का अपराध बतायें ?"

महास्थविर ने उत्तर दिया—"शास्ता ने पशु बलि को हिंसा-कर्म और पाप कहा है। बलि के लिए दूसरों को बलात् विवश करना उससे बड़ा पाप है। भिक्षु-वेश और धर्म का निरादर होने से राजा अपराधी होता है। नित्य सहस्र-सहस्र पशुओं की हिंसा संघ और इस राज्य को ले डूबेगी। ऐसी हिंसा परित्राण के लिए धर्म की शक्ति रुद्र रूप धारण करती है। पाप की उस अग्नि में राज्य स्वाहा हो जायगा।"

महास्थविर के शब्दों से महारानी का शरीर कांप उठा। नेत्र मूंद कर दोनों हाथ जोड़ कर तथागत के धातु-पात्र को स्मरण कर वे बोलीं—"उपासिका के अज्ञान और उपेक्षा से पाप की वृद्धि हुई। उपासिका उसके लिए दुखी है। भन्ते, धर्म के मार्ग का अनुशासन करें।"

जीवक निष्पलक दृष्टि से महारानी के नेत्रों में देख कर बोले—"परम भगवती उपासिका आज सूर्यास्त से पूर्व राज-आज्ञा की घोषणा करें कि राज्य और नगर में बलि नहीं होगी। सैनिक कार्य के लिए किसी को विवश किया जायेगा।"

महारानी मौन रह कर जीवक की ओर देखती रहीं और फिर कातर स्वर में बोलीं—"भन्ते अभयदान दें। आश्वासन दें कि तथागत की शरण में आततायी के आक्रमण से राज्य की रक्षा होगी।"

महास्थविर के मुख पर विद्रूप की मुस्कान आ गई। वे बोले—"संशयात्मा भगवान की कृपा नहीं पाता। वह परम लक्ष को भी प्राप्त नहीं कर सकता। मगध और कलिंग जिस शक्ति की लीला के अणुमात्र हैं, वह परम शक्ति क्या नहीं कर सकती? जो तथागत संशय करने वालों का भ्रम दूर करने के लिए आकाश खण्ड में अनेक द्वीप निर्माण कर एक नासा से अग्नि की और दूसरी नासा से जल की वर्षा कर सकते हैं, जिनके एक नेत्र के कटाक्ष से अमृत की और दूसरे नेत्र के कटाक्ष से विष की वर्षा हो सकती है, जो धर्म और शरणागतों की रक्षा के लिए अनेक योनियों में जन्म धारण करते हैं, देव और दानव दोनों ही जिनकी आज्ञा में हैं, जो पृथ्वी, सूर्य, अग्नि, आकाश और वायु के नियामक हैं, गुरु-निर्देष से उनकी कृपा पाकर उनके तत्व में समा

जाने से क्या शेष रह जाता है ? मनुष्य का अहंकार ही उसके विश्वास की शक्ति को निर्बल कर उसके लिए सम्भव-असम्भव की सीमा लगा देता है। उपासिका संशय मुक्त होवें !"

महारानी ने भक्ति से सिर झुका कर स्वीकार किया—"भन्ते का अनुशासन अवश्य पूर्ण होगा। ज्ञानी स्थविर और संघ चिंता त्याग कर भिक्षा ग्रहण करें।" महारानी के नेत्रों से उनकी पालथी में बंधी अंजली में आँसू टपक पड़े। निचला होंठ दांत से दबा कर उन्होंने अपने आप को वश में किया और चित्त स्थिर करने के लिए तथागत के धातु-पात्र का ध्यान कर नेत्र मूंद लिए। महारानी ने चित्त स्थिर कर नेत्र खोले तब भी उनकी पलकों से आंसू लटके हुए थे।

महास्थविर ने महारानी की ओर निष्पलक दृष्टि से देख उत्तर दिया - "तथास्तु ! उपासिका की धर्म भावना से महारानी का धर्म संकल्प पूरा हो।"

महारानी को मौन रहते देख कर जीवक फिर बोले—"महारानी मन की चिन्ता कहें।"

महारानी के नेत्र पुनः छलक आये। विह्वल स्वर में उन्होंने पूछा—"भन्ते, उपासिका का चित्त कब शांत होगा ? हमारी साधना कब पूर्ण होगी ? हमें चमत्कार का दर्शन कब होगा ? राज्य भय से कब मुक्त होगा ?"

महास्थविर ने उपासिका को स्थिर दृष्टि से बेंधते हुए उत्तर दिया— "जब उपासिका का चित्त अहं और भय से मुक्त हो जायगा, जब उपासिका को शरीर और राज्य का मोह और अहंकार नहीं रहेगा, तब उपासिका चित निर्मल होने पर चमत्कार का दर्शन पा कर बुद्धत्व प्राप्त करेंगी।"

महारानी का समाधान नहीं हुआ। कातरता से हाथों की अंजली स्थविर की ओर बढ़ा कर उन्होंने पूछा—"भन्ते, ऐसा कब होगा ?"

जीवक ने उत्तर दिया—"जब उपासिका की भक्ति पूर्ण गुरुचरणों में होगी।"

महारानी पल भर के लिए मौन रही और फिर उन्हों ने महास्थविर के सम्मुख भूमि पर सिर रख दिया और दृढ़ निश्चय से बोलीं—"उपासिका अपने शरीर को और इस राज्य को, गुरुचरणों में, तथागत, धर्म और संघ

के निमित्त अर्पण करती है। अब उपासिका चमत्कार का दर्शन न पाकर विहार से न लौटेंगी।"

महारानी का मस्तक भूमि परथा परन्तु उनके पीछे खड़ी दोनों दासियों ने देखा, महास्थविर का शरीर सहसा सिहर कर स्थिर हो गया। जीवक ने पल भर के लिये नेत्र मूंद लिये और फिर महारानी की ओर देख कर बोले—"उपासिका चमत्कार का दर्शन करने के लिये चित को निर्मल करे। इस प्रयोजन से पूर्ण त्याग के संकल्प से छत्तीस घड़ी तक मौन और ध्यानावस्थित रहे। उपासिका राज्याडम्बर के बिना विहार में मध्य-रात्रि प्रवेश करे। तब उपासिका चमत्कार-दर्शन द्वारा सिद्धि लाभ करे।

महारानी ने भूमि से माथा उठा कर जीवक को उत्तर दिया—"भन्ते का जो आदेश हो। उपासिका भन्ते का अनुशासन पूर्ण कर छत्तीस घड़ी पश्चात निर्देश के अनुसार सेवा में उपस्थित होगी।" महारानी ने फिर एक बार माथे से भूमि स्पर्श कर महास्थविर को प्रणाम किया और आसन से उठ गईं।

महारानी की पालकी महाबोधि विहार से राजप्रासाद के अन्त:पुर में पहुंचते ही उन्होंने प्रासाद के कर्मान्तधिष्टायक सामन्त प्रताप को स्मरण किया। वे अपने कक्ष में न जा सामन्त की प्रतीक्षा में आंगन में ही खड़ी रहीं। सामन्त के सेवा में उपस्थित हो कर प्रणाम करते ही महारानी ने आज्ञा दी—"राज्य और नगर में इसी क्षण घोषणा की जाये, कलिंग के धर्म-राज्य में यज्ञ में जीव-बलि का निषेध है। किसी व्यक्ति को सैनिक कार्य के लिये बलात् नहीं धरा जायगा। धर्म और संघ की शरण पाने में कोई बाधा नहीं होगी। धर्म और संघ की सेवा के लिये अर्पित धन युद्ध की हिंसा के लिये आयत्त नहीं होगा। सब लोग अहिंसा धर्म का पालन कर श्रमणों और स्थविरों का आदर और सत्कार करें। हम कोष्ठ के अलिंद में प्रतीक्षा करेंगी। नगर में यह दुन्दुभी-घोषणा सुन लेने पर ही कक्ष में पांव रखेंगी।"

सामन्त प्रताप धर्म और कर्त्तव्य के विकट द्वन्द्व में पड़ गया। उसे महामात्य का आदेश था कि राजप्रासाद की प्रत्येक गति-विधि की सूचना महामात्य को पहले दी जाये। उनकी अनुमति के बिना कुछ न हो सके परन्तु महारानी अपना आदेश पूर्ण होने की प्रतीक्षा में राजप्रासाद के दूसरे तल के

अलिंद में नगर की ओर दृष्टि लगाये खड़ी थीं। सामन्त किस की आज्ञा माने ? प्रताप के पास एक ही समाधान था, महामात्य राज्य-सत्ता के प्रतिनिधि हैं, महारानी स्वयं राज्य-सत्ता हैं। राज्य-सत्ता के मुख से मिले आदेश की उपेक्षा कैसे की जा सकती थी ? धर्म और कर्त्तव्य का पालन करते जो सामने आता ? भाग्य की ऐसी रेखा से त्राण कहाँ था ?

महारानी नगर की ओर देखतीं प्रासाद के दूसरे तल के अलिंद में खड़ी थीं। पाव घड़ी के पश्चात उन्हें राज-पथ से भेरी का शब्द सुनाई दिया। उन्होंने देखा, एक ऊंट पर भेरी बज रही थी। ऊंट के सम्मुख एक घोड़े पर सवार व्यक्ति ने नरसिंहा उठा कर बजाया और फिर दूसरे ऊंट पर राज-पताका लिये चारण ने घोषणा की —

"परम भट्टारिका, परमभगवती, धर्मनिष्ठ कलिंग की राजेश्वरी की जय हो ! पौरजन और कलिंग की प्रजा सुने ! कलिंग के धर्म-राज्म में राज्यादेश से पशु बलि का निषेध है। प्रजापालक महारानी प्रजा को आश्वासन देती हैं, राजपुरुष प्रजा से बलात् सैनिक सेवा नहीं लेंगे, धर्म और संघ की शरण जाने वालों को बाधित नहीं करेंगे। धर्म और संघ की सेवा के लिये अर्पित धन युद्ध के लिये आयत्त नहीं होगा। सब लोग अहिंसा धर्म का पालन कर श्रमणों और स्थविरों का मान और सत्कार करें। इस के विरुद्ध कर्म राज्यद्वार से दंडित होगा। ऐसा परमभगवती का आदेश है।"

महारानी ने तीन बार घोषणा सुन कर सान्त्वना का श्वास लिया और अपनी अंक-दासी धारा की ओर देख कर बोलीं—"हम छत्तीस घड़ी साधना में मौन रहेंगे। हमारे कक्ष में कोई नहीं आयेगा ! इस समय क्या घड़ी-पहर है ?"

धारा ने उत्तर दिया—"परमभगवती, दूसरा पहर बीत कर आधी घड़ी गई है।"

महारानी बोली—"छत्तीस घड़ी बीतने पर, रात्रि का दूसरा पहर शेष होकर आधी घड़ी जाने पर विहार के लिये शिविका प्रस्तुत हो। सेवक, शरीर-रक्षक और चारण नहीं जायेंगे। तू विहार के द्वार से लौट आयेगी।"

धारा का शरीर सिहर उठा। महारानी फिर बोलीं—"हिता से कहना

युवराज्ञी को एक बार,"·······नहीं इस समय नहीं ; कल रात्रि में, जिस समय हम आंगन में शिविका पर बैठें, बेटी को लाकर हमार आशीर्वाद ले ले।

धारा काठ की भाँति स्तब्ध रह गई। महारानी ने अपने कक्ष में जा कर तथागत के धातु-पात्र के सम्मुख भूमि पर मस्तक रख कर प्रणाम किया और फिर ध्यानावस्थित हो गईं।

महामात्य की हवेली की ड्योढ़ी पर प्रतिहारी ने दिन के तीसरे पहर की पहली घड़ी समाप्त हो जाने की टंकोर गजर पर दी ही थी कि राजप्रासाद के कर्मान्तधिष्टायक वृद्ध सामन्त प्रताप ने वेग से दौड़ते आते अपने घोड़े को ड्योढ़ी के सामने रोका। प्रताप ने घोड़े की पीठ से कदने से पहले ही प्रतिहारी को आज्ञा दी—"प्रभु आचार्य की सेवा में तुरंत निवेदन किया जाये। अत्यन्त आवश्यक सम्वाद है।" एक प्रतिहारी तुरंत भीतर दौड़ गया।

आवश्यक सम्वाद की सूचना देने पर भी प्रताप को महामात्य के आंगन के द्वार पर प्रायः आधी घड़ी तक, कभी एक पांव पर और कभी दूसरे पांव पर खड़े रह कर प्रतीक्षा करनी पड़ी। जिस समय प्रताप ने आचार्य के कक्ष में प्रवेश कर उन्हें प्रणाम किया, राज्य के कोषाध्यक्ष आचार्य अश्वत्थ और दो दूत आचार्य को प्रणाम कर बिदा ले रहे थे। प्रताप को पुनः एकान्त के लिये प्रतीक्षा में श्वास रोक लेना पड़ा। अवसर मिलते ही उसने विह्वल स्वर में निवेदन किया—"प्रभु अभयदान दें। सेवक से विवशता में अपराध हुआ है परन्तु दूसरा उपाय नहीं था। परमभगवती महारानी ने महाबोधि विहार से प्रासाद में लौटते ही नगर में तुरंत बलि-निषेध की घोषणा की जाने की आज्ञा दी। सेवक राज्यादेश की अवहेलना नहीं कर सका। महारानी के कक्ष में प्रवेश करते ही सेवक सूचना देने के लिये आया है।"

आचार्य ने प्रताप को तीव्र दृष्टि से बेंधते हुए पूछा—"नगरपाल को घोषणा के लिये आदेश देने से पूर्व यह सम्वाद यहां नहीं आ सकता था ?"

प्रताप ने उत्तर दिया—"स्वामी क्षमा हो, ऐसा अवसर नहीं था। महारानी अलिंद में खड़ी थीं। उनका आग्रह था, राजपथ पर अपने कानों से घोषणा सुन कर ही वे अपने कक्ष में प्रवेश करेंगी। राजप्रसाद के चारणों द्वारा ही घोषणा का प्रबन्ध कराना पड़ा। तीन बार घोषणा सुन कर ही

परमभगवती ने अपने कक्ष में प्रवेश किया। तभी सेवक आचार्य की सेवा में प्रस्तुत हो सका।"

आचार्य ने विस्मय प्रकट किया—"घोषणा तत्काल कर भी दी गई?" और फिर अपनी श्वेत दाढ़ी को दाहिने हाथ से सूतते हुए चिंता के स्वर में बोले, "ऐसे परस्पर-विरोधी राज्यादेशों से प्रजा हतबुद्धि हो जायगी। महारानी ने विहार से लौटते ही ऐसी आज्ञा दी?··· विहार में क्या हुआ था?"

प्रताप ने उत्तर दिया—"स्वामी, सेवक ने यह जानने के लिये प्रतीक्षा नहीं की। प्रतीक्षा करने से और विलम्ब होता। सेवक प्रासाद लौट कर तुरंत सम्वाद भेजेगा।

आचार्य ने चिंता के स्वर में कहा—'राज्य-प्रबंध में भिक्षुओं के हस्तक्षेप से अनर्थ ही होगा।"—और प्रताप को सम्बोधन किया, "विहार में क्या हुआ, पूरा ब्योरा तुरंत भेजा जाये।"

सामन्त प्रताप को महामात्य की ड्योढ़ी से लौटे प्रायः एक घड़ी बीती होगी, नगरपाल चित्ररथ ने आकर महामात्य के दर्शन की प्रार्थना की। चित्ररथ ने वही सम्वाद दिया जिसकी आचार्य आशंका कर रहे थे:—

दोपहर से पूर्व भिक्षा के लिये नगर के बाजारों और गलियों में आये भिक्षु बलि-निषेध और संघ और भिक्षुओं के आदर-मान के पुनः स्थापना की राज्यादेश की नयी घोषणा को सुन कर आपस में चर्चा करने लगे। विहार में समाचार सुन कर अनेक भिक्षु भी अपना कौतुहल पूरा करने के लिए नगर के बाजारों और पथों पर आगये। कुछ दिन पूर्व नागरिकों से पाये अपमान को याद कर उन्हें क्रोध आगया। भिक्षु नागरिकों से पाये उस अपमान के लिये और बलि के उत्साह में उन्मत्त होकर धर्म को भूल जाने के लिये नागरिकों की प्रतारणा करने लगे।

अनेक नागरिक जो बलि-यज्ञ के लिये समय पर पशु न खरीद सकने के कारण चिंतित थे, इस अवसर पर बलि-यज्ञ के विरुद्ध अपना क्रोध प्रकट करने के लिये भिक्षुओं के साथ आ मिले और चौराहों पर बलि-यज्ञ के लिये बनाई गई वेदियों और तोरणों को खींच-खींच कर गिराने लगे। वेदियों और तोरणों को अपने हाथों से तोड़ने और गिराने में इन लोगों को पाप

के दमन और धर्म की रक्षा का संतोष अनुभव हो रहा था। ऐसे लोग अहिंसा और धर्म में अपनी निष्ठा प्रकट करने के लिये बलि-यज्ञ की तैयारी करने वालों को गालियां देकर उनका सिर तोड़ देने की धमकी देने लगे। भिक्षु अपना अधिकार और आदर अनुभव करने के लिये शान्ति रक्षा के लिये पुकारने वाले राज-पुरुषों का भी अपमान करने लगे।

नगरपाल चित्ररथ ने महामात्य के सम्मुख चिंता प्रकट की—"स्थान-स्थान पर राज पुरुषों को नियत कर दिया है कि उत्पात न बढ़ने पावे परन्तु यदि भिक्षुओं को राज्योदेश से पूज्य मानकर उनके उत्पात का अनुशासन न किया जायगा, प्रजा को सिर झुका कर उत्पात सहना पड़ेगा तो न्याय के प्रति जन की आस्था नहीं रहेगी।"

महामात्य ने क्षरण भर विचार कर उत्तर दिया—"उत्पात आरम्भ हो ही गया है तो राजपुरुष कुछ समय दूर रहें। महारानी अपने आदेश का परिणाम देख लें। उत्पात आरम्भ करने वालों का उन्माद दूर होना चाहिये। भिक्षु राज्य के प्रश्रय के उन्माद में मूढ़ हो गये हैं तो वे प्रजा का बल भी देख लें। राजपुरुष अभी केवल प्रासाद की रक्षा करें। भिक्षुओं को प्रजा का क्रोध बढ़ाने दो। भिक्षु ही रक्षा के लिये पुकारेंगे। कल मध्यान्ह तक देखो।"

उत्पात करने वालों के मार्ग में कोई बाधा न होने के कारण उनका उन्माद बढ़ता ही गया। कुछ नागरिकों ने बलि-निषेध का राज्यादेश सुनकर और बलि की इच्छा करने वालों का अपमान होते देख कर भय से, बलि के लिये खरीद कर अपने द्वारों, आंगनों में बंधे हुए पशुओं को खोल दिया। यह उन्मुक्त पशु अहिंसा की विजय के चिन्ह-स्वरूप बाजारों और गलियों में दौड़ने-भागने लगे। भिक्षु और उनके साथ जुड़ गया दल अहिंसा की प्रतिष्ठा के लिये और अपनी भुजाओं की शक्ति की तृप्ति के लिये जिस किसी द्वार पर खूब खिला-पिला कर बलि के लिये पुष्ट किये पशु को बंधा देखते, उसे खोल कर गली-बाजार में हाँक देते। अपने पशु खोल दिये जाने में आपत्ति करने वाले लोग उनके हाथों पिटने लगे। कोई बाधा न देखकर इस दल का साहस और भी बढ़ा। वे बलि के लिये बधे पशुओं को स्वतन्त्र करने के साथ-साथ पशुओं के स्वामियों की बलि की इच्छा और उनके हिंसा के संकल्प का दंड भी देने लगे। वे मद्य की दुकानों में घुसकर मद्य के मटकों को तोड़ने लगे।

बलि और हिंसा की इच्छा का दंड देने वाले दल के साथ ऐसे लोग भी आ मिले जो मद्य के मटके छीन कर, स्वयं मन भर पीकर, मटकों को तोड़ कर मद्य बहाने लगे। जो मद्य उनके लिये दुर्लभ था उसे अपने हाथों बहा कर उन्हें संतोष अनुभव हो रहा था। मद्य के स्वामी का दुखी होकर चीखना-रोना भी उन्हें अपनी शक्ति का संतोष दे रहा था। उत्पात बढ़ता ही गया। पशुओं की हिंसा की इच्छा और मद्य की लालसा के अपराध के लिये कई लोगों के घर और छप्पर भी जला दिये गये। कुछ लोगों ने प्राणों से भी हाथ धोये।

बलि के पाप का दंड देने वालों से भयभीत लोग आत्म-रक्षा के लिये विवश हो गये और उनके क्रोध ने प्रचंड रूप ले लिया। भिक्षुओं ने भाग कर विहार में शरण ली। तिस पर भी भिक्षुओं के पीत चीवर बाजारों में पावों से रौंदे जाते दिखाई देने लगे। अनेक भिक्षुओं के भी प्राण गये। बलि-यज्ञ की प्रतिष्ठा के लिये उन्मत्त लोगों ने चौराहों पर अग्नि-स्तूप जला कर, बाजारों में फिरते पशुओं को बलि कर उनका मांस भूनकर खाना और लूट-लूट कर मद्य पीना और बांटना आरम्भ कर, दिया। वे बलि का रक्त शरीर में पोत कर और मद्य पान कर हाथों में खड्ग और भाले लेकर बलि का विरोध करने वालों पर टूट पड़े। यह धर्म की रक्षा का दूसरा रूप था। बलि से पशुओं की रक्षा के लिये और पशुओं को बलि करने के अधिकार के लिये मनुष्य मनुष्य को बलि करने लगे। कलिंग के लोग अशोक के आसन्न आक्रमण को भूल कर, आपस में एक दूसरे को सब से बड़ा शत्रु समझ कर, परस्पर संग्रह करने लगे।

दूसरे दिन मध्यान्ह के लगभग महामात्य की आज्ञा से नगर में व्यवस्था स्थापित करने के लिये सैनिकों के दल सब ओर फैल गये। नगाड़ा और नरसिंहा बजा कर घोषणा कर दी गई कि सब नागरिक अपने-अपने घरों में शरण लें। कोई शस्त्र लेकर न चले। विहार की रक्षा के लिये विहार को सशस्त्र राजपुरुषों और सैनिकों ने घेर लिया। भिक्षु केवल प्राण देने के लिये ही बाहर निकल सकते थे। नगर के बाजार और गलियां सूनी हो गईं। उन में जहाँ-तहाँ केवल सशस्त्र सैनिक और छूटे हुए पशु ही दिखाई देते थ। बलि के भय से मुक्त कर दिये गये पशुओं को घास-भूसा देने वाला कोई न

था। भूख से व्याकुल होकर वे जहाँ-तहां मुंह मारते फिरते और मार कर भगा दिये जाते ।

## आचार्य की दुविधा

सम्पूर्ण नगर से अधिक क्षुब्ध और व्यथित था, आचार्य सुकंठ का मन और मस्तिष्क। असंख्य सेना लेकर कलिंग पर आक्रमण करने वाले अशोक और आत्मसंहार से व्यथित नगर की चिंता से अधिक उन्हें चिंता थी महारानी के व्यवहार के कारण। राजप्रासाद से समाचार मिला था कि महारानी विहार में कलिंग का राज्य महास्थविर और भिक्षु-संघ को अर्पण कर देने का संकल्प कर आयी हैं। वे उस दिन मध्य-रात्री में दिव्य-शक्ति का चमत्कार देख कर सिद्धि प्राप्त करने के लिये अकेली विहार में जायंगी। महामात्य अशोक की सेना के आक्रमण से महारानी और राज्य की रक्षा के लिये प्राण न्योछावर किये दे रहे थे और महारानी स्वयं अपने आप को और राज्य को समाप्त किये दे रही थीं।

महामात्य दिन के चौथे पहर राजप्रासाद पहुंचे और महारानी के दर्शन के लिए प्रार्थना की। भयभीत कर्मान्तिधिष्टायक ने उन्हें सूचना दी कि महारानी ने अपने कक्ष से छत्तीस घड़ी तक न निकलने का संकल्प लिया है। महामात्य के लिए महारानी के दर्शन की आवश्यकता अनिवार्य थी। वे महारानी के दर्शन के लिए महारानी के कक्ष के द्वार पर पहुंचे और दर्शन की प्रार्थना की। महारानी समाधि के आसन से न हिलीं। महामात्य अपमान का यह घूँट निगल कर अपनी हवेली में लौट आये और अपने कक्ष में काठ के तख्त पर अकेले बैठे सोचते रहे—महारानी और राज्य की रक्षा के लिए क्या उपाय और कौन मार्ग हो सकता है!

बलि के विरोध और बलि के अधिकार के लिए उत्पात की रात से अगली रात कलिंग नगर पर श्मशान का आतंक और सन्नाटा छाया हुआ था। बाजारों और गलियों में न भुना हुआ अन्न, मिष्टान्न और भुना हुआ मांस

बेचने वालों की पुकारें थी न फूल बेचने वालों की। लुहारों के बाजार में रात भर उठता रहने वाला कोलाहल भी न था। वेश्याओं के चौराहे पर भी कोई न दिखाई देता था। झरोखों और छज्जों पर दीप जलाकर बैठी वेश्यायें कुछ देर सूने पथों की ओर आशा भरी आँखों से देखती रहीं और फिर दीपक का तेल जलाना व्यर्थ समझ कर उन्होंने दीपक बुझा दिये और झरोखों के किवाड़ मूंद लिए। प्रायः पूरा नगर मौन अंधकार में डूबा हुआ था। केवल कहीं-कहीं मशाल और माला लिए राजपुरुष दिखाई दे जाते थे और पत्थर मढ़े बाजारों के फर्श पर उनके बल्लम की मूठ की ठोकर सुनाई दे जाती थी। इस उदासी और सूनेपन को लोहित के गले का स्वर और भी नक बना रहा था। वह सूने पथों पर अकेला घूमता गा रहा था—"बावरे पंछी, बादलों को चाँद ने ढंक लिया है तो तू क्रोध में अपने ही पंख क्यों नोच रहा है, आत्महत्या क्यों कर रहा है ?"

नगर में तो अन्धकार था परन्तु महामात्य की हवेली की ड्योढ़ी पर नित्य की अपेक्षा भी अधिक प्रकाश था। ड्योढ़ी के तोरण पर दो मशालें जल रही थीं और सामने पथ पर भी मशालें लिए कई सैनिक और प्रहरी खड़े थे। कई रथ और पालकियां वाहकों सहित पथ पर प्रतीक्षा में खड़ी थीं और बहुत से सशस्त्र सैनिक भी। ड्योढ़ी के भीतर के बड़े आंगन में भी मशालें जल रही थीं और बहुत से सैनिक, यूथप और सेनानी खड़े दबे स्वर में आपस में बातचीत कर रहे थे। तनिक-सी आहट पाकर सबकी आंखें भीतर की ड्योढ़ी के आंगन के द्वार की ओर उठ जाती थीं।

भीतर की ड्योढ़ी के प्रहरी ने बाहिर आंगन के लोगों को सावधान हो जाने के लिए संकेत किया। महामात्य, महासेनापति भद्रकीर्ति, धर्मस्थ आचार्य, भानु शर्मा और कोषाध्यक्ष आचार्य अश्वत्थ आंगन में आए। सब सेनापति और यूथप सावधान हो आदेश के लिए उनकी ओर देखने लगे। धर्मस्थ और कोषाध्यक्ष आचार्य और महासेनापति को प्रणाम कर आज्ञा ले विदा हो गये।

महासेनापति के संकेत से सेनापति सुधन्वा उनके समीप पहुंचे। सुधन्वा के समीप आकर अभिवादन करने पर महासेनापति ने आज्ञा दी—"तुरन्त एक सौ सैनिक लेकर पूर्वी प्राचीर पर श्रीष दुर्ग को घेर लिया जाये। दुर्ग में जो भी शरणार्थी अथवा दूसरे लोग हों, बाहिर हो जायें। बिना विशेष आज्ञा

के दुर्ग में कोई प्रवेश न करे।"—सेनापति सुधन्वा आज्ञा पा कर प्रणाम कर विदा हो गया।

महासेनापति ने सेनापति हरीत की ओर देखा। हरीत के समीप आने पर उन्होंने आज्ञा दी—"तुरन्त पांच सौ सैनिक लेकर विहार का घेरा दृढ़ कर दिया जाये। सूर्योदय से पूर्व कोई व्यक्ति विहार में न प्रवेश करे, न बाहर आ सके।"

इसके पश्चात महासेनापति ने सेनापति विक्रम की ओर देखा। विक्रम के समीप आने पर महासेनापति ने उसे दो सौ सैनिक ले कर प्रासाद के कर्मान्तिधिष्टायक सामंत प्रताप सहित राजप्रासाद के बाहिर आँगन में उपस्थित रहने की आज्ञा दी। इसके पश्चात भद्रकीर्ति स्वयं महामात्य के समीप पहुंचे और रहस्य के स्वर में उन्होंने कहा—"एक घड़ी पश्चात राजप्रासाद में।"

आचार्य से अनुमति का संकेत पा कर महासेनापति भी विदा ले कर चले गए।

रात्रि के दो पहर बीत चुके थे। राजप्रासाद के अन्तःपुर के आंगन में नीरवता थी परन्तु दासियां, यवनियां और कंचुकी सभी जाग रहे थे। निश्चित बेसुध सोई हुई थी केवल युवराज्ञी अमिता। दापी और हिता की दृष्टि बार-बार अमिता की ओर चली जाती। बालिका के नींद में बेसुध प्रसन्न मुख को देख कर उनकी आँखों में आँसू छलक आते और हृदय उमड़-उमड़ कर मुंह को आने लगता। वे पीठ फेर कर आँचल से आँसू पोंछ लेतीं। अलिंद में खड़े कंचुकी की श्वेत मूंछ-दाढ़ी भी बार-बार थिरक कर रह जाती।

महारानी के कक्ष के द्वार पर खड़ी उनकी अंक-दासियां धारा और नीमा भी बार-बार आंचल से आँसू पोंछ रही थीं। अलिंद में खड़ी यवनियों के हृदय भी दीर्घ निश्वासों से ऊपर नीचे हो रहे थे। सभी के कान मध्यरात्रि के पश्चात पहली टंकोर सुनने के लिए चौकन्ने थे। दासियों ने नीचे आंगन में

आहट सुनी। वे दबे पांव अलिंद में आ गईं और झाँक कर नीचे आंगन में देखा। दासी धारा से पाये आदेश के अनुसार महारानी की पालकी के वाहकों ने पालकी लाकर आँगन में रख दी थी। 'समय आ गया' अनुमान कर सभी के हृदय विह्वल हो गये। दासियों और यवनियों ने बह आये आंसू पोंछ लिए। हिता बिना आहट किये राजकुमारी के पलंग पर झुकी और नींद में बेसुध राजकुमारी को बाहों में उठा कर कंधे से लगा लिया। स्वप्न देखती राजकुमारी के मुंह से निकला—'अम्मा!' हिता ने बहुत कठिनाई से अपनी रुलाई को किसी तरह रोक लिया। वह सोच रही थी—राजकुमारी माँ को याद कर रोयेगी तो उन्हें कैसे रिझा पाऊँगी। वह नींद में बेसुध अमिता को कन्धे से लगाए अलिंद में आकर आँगन की ओर देखने लगी।

महारानी की पालकी आँगन में आये कुछ ही क्षण बीते होंगे कि अन्तःपुर की ड्योढ़ी पर प्रकाश दिखाई दिया। अलिंद में खड़ी दासियों और यवनियों की आँखें उस ओर जा लगीं। मशाल लिये एक सेवक दिखाई दिया और उसके पीछे सामन्त प्रताप दूसरे सेवक के साथ आये। उनके पीछे पालकी-वाहकों जैसे कपड़े पहने आठ व्यक्ति चुपचाप आ रहे थे। प्रताप ने पालकी के समीप बैठे मशालची और वाहकों को हट जाने का संकेत किया। सामन्त के साथ आया सेवक इन लोगों को लेकर चला गया। सामन्त के साथ आया मशालची और आठ व्यक्ति पालकी के डांडों के समीप बैठे गए परन्तु उनके बलिष्ठ अंगों के तनाव के कारण उनके बैठने का ढंग पालकी-वाहकों जैसा न जान पड़ा। यवनियाँ और दासियाँ विस्मय और आतंक से सोच रही थीं, यह क्या हो रहा है?

तीसरे पहर की पहली घड़ी समाप्त होने की टंकोर की गूंज निस्तब्ध रात्रि के अंधकार को चीरती हुई उठी और यवनियों और दासियों के हृदय में वाण की भांति गहरी बिंध गई। उस पीड़ा से उन्हें श्वास लेना कठिन जान पड़ा। हिता ने अपने कंधे पर सोई हुई युवराज्ञी को बाहों से हृदय पर दबा लिया। सब की दृष्टि महारानी के कक्ष की ओर घूम गई।

एक दासी मशाल लेकर महारानी के कक्ष के द्वार पर आ गई। धारा के पीछे महारानी कक्ष से निकलीं। मशाला के लाल-पीले प्रकाश में उनका गौर चेहरा गम्भीर और तेजोमय जान पड़ रहा था। नेत्र झुके हुए थे और ओंठ

मंत्र जाप में हिल रहे थे। धारा और नीमा आंचल से आंसू पोंछती हुई उनके पीछे चल रही थीं। महारानी सोपान से आंगन में उतरने लगीं। हिता भी अमिता को गोद में लिये उनके पीछे-पीछे आ रही थी।

महारानी आंगन में आ गईं। सामन्त प्रताप उन्हें दूर से ही अभिवादन कर अंधेरे में और पीछे हट गया। पालकी में बैठने से पहले महारानी ने पीछे घूम कर देखा। हिता सिर झुकाये नींद में बेसुध राजकुमारी को बांहों में लिये उनके समीप आ गई। महारानी ने वचन पाठ करते हुए अपना हाथ युवराज्ञी के माथे पर रख दिया। वाहकों ने पालकी कंधों पर उठा ली और चल पड़े। धारा और नीमा भी पालकी के साथ चलीं। सामन्त प्रताप पालकी के पीछे हो लिया। उसके पीछे युवराज्ञी को लिए हिता, वापी, यवनियाँ और दूसरी दासियां रुलाई रोकने के लिए दाँतों में आंचल दबाये चलने लगीं। अन्तःपुर की ड्योढ़ी पर प्रताप ने धारा और नीमा के अतिरिक्त सब लोगों को हाथ के संकेत से मौन रहने का संकेत कर पीछे रोक दिया। दासियां और यवनियाँ आँचलों में मुख छिपा कर सिसकती हुई खड़ी रह गईं।

पालकी मे बैठी महारानी नेत्र मूँदे वचन पाठ कर रही थीं परन्तु धारा और नीमा राजप्रासाद के आंगन में अनेक मशालों का प्रकाश देख कर विस्मित और आतंकित हो गईं। स्वयं महामात्य, महासेनापति और दूसरे दो और सेनापति कई घुड़सवार सशस्त्र सैनिकों सहित मौन खड़े थे। दोनों सेनापति चार सशस्त्र अश्वारोही सैनिकों के साथ महारानी की पालकी के आगे हो गए और महामात्य और महासेनापति पालकी के पीछे-पीछे चलने लगे। शेष सशस्त्र सैनिक पंक्तियों में पालकी के दोनों ओर हो गये। पालकी राजप्रासाद के मुख्य द्वार से बाहर होते ही अन्तःपुर में दासियाँ और यवनियाँ अपने आपको वश में न रख सकने के कारण पुकार कर रो उठीं। हिता भय से काँप उठी, युवराज्ञी की निद्रा न उचट जाये। वह उसे कंधे से लगाये उनके शयन-कक्ष की ओर दौड़ पड़ी।

नीरव निशा में महारानी की पालकी अनेक मार्गों से होती हुई चली जा रही थी। महारानी पालकी के पर्दों के पीछे नेत्रों पर पलकों के पर्दे डाले, गुरुचरणों का ध्यान किये मौन, मंत्र पाठ करती जा रही थीं। पालकी भूमि पर टिक गई अनुभव कर, महारानी ने एक बार और भगवान तथागत और

गुरुचरणों का ध्यान कर प्रणाम किया और नेत्र खोल कर पालकी से उतर आयीं।

महारानी ने विस्मय से देखा वे विहार में नहीं, अपरिचित स्थान में थीं। अपने चारों ओर मशालों के प्रकाश में उन्हें पीत चीवरधारी भिक्षु और स्थविर नहीं, सशस्त्र सैनिक, सेनापति, महासेनापति और महामात्य दिखाई दिये। आचार्य और भद्रकीर्ति उन्हें विनय से प्रणाम कर आज्ञा की प्रतीक्षा में मौन खड़े थे।

महारानी को विवश और क्षुब्ध होकर अपना मौन तोड़ना पड़ा—"हम विहार में नहीं हैं ?······हम कहां हैं ?"—उन्होंने आचार्य की ओर देखकर प्रश्न किया।

आचार्य ने उन्हें पुनः प्रणाम कर विनय से उत्तर दिया—"परमभगवती राजेश्वरी को राजप्रासाद में रहना स्वीकार नहीं है इसलिये महारानी शीष दुर्ग के एकान्त में हैं। परमभगवती यहां एकान्त में निर्विघ्न धर्म-साधना कर सकती हैं।

महारानी के माथे पर क्रोध की रेखाएं प्रकट हो गईं—"हम दुर्ग में नहीं विहार में जाना चाहती हैं। आचार्य ने हमारे साथ छल किया है। हम दिव्य-शक्ति के चमत्कार का दर्शन कर सिद्धि प्राप्त करने के लिये विहार में जाना चाहती हैं।"

आचार्य ने विनय से माथा झुका कर निवेदन किया—"परमभगवती सेवक का अविनय क्षमा करें। महारानी का स्थान विहार नहीं है। महारानी के विहार में जाने से उनका राजत्व-गुण नहीं रहेगा, जैसे जल में जाने से अग्नि का ताप-गुण नष्ट हो जाता है।"

महारानी का क्रोध बढ़ गया—"हमारा आदेश है, हम विहार में जायंगे। आचार्य हमें असहाय जान कर हमारे साथ छल कर रहे हैं। राज्य हमारा है। आचार्य केवल राज्य के सेवक हैं।"

आचार्य ने सिर झुका कर अविचलित स्वर में उत्तर दिया—"परमभगवती सत्य कहती हैं। आचार्य राज्य और कलिंग के राजकुल का सेवक ही है। राजसेवक का धर्म राज्य की रक्षा करना है। आचार्य छल नहीं करता, धर्म

का पालन कर रहा है। आचार्य को कोई परिग्रह नहीं है। वह राजसेवा धर्म का पालन कर रहा है। परमभगवती परिग्रह की भावना छोड़ कर विचारें, राज्य किसी व्यक्ति में नहीं, न किसी व्यक्ति का है। राज्य तो देश और प्रजा है। राज्य किसी को अर्पण अथवा संकल्प नहीं किया जा सकता। राज्य-सिंहासन की उत्तराधिकारी परमभगवती युवराज्ञी हैं। भगवती राजमाता की अनुमति से आगामी पूर्णिमा के शुभ लग्न में ही कलिंग के राजवंश की उत्तराधिकारी युवराज्ञी राजसिंहासन पर आरोहण करेंगी। इसी क्षण से ही महामहिमामयी, परमभगवती देव-रक्षित कलिंग की राजेश्वरी अमिता का आदेश कलिंग के राज्य का शासन करेगा। भगवती राजमाता राज्य और राजेश्वरी अमिता की कल्याण कामना से युद्धकाल तक यहां निवास करें, ऐसी राजपरिषद की प्रार्थना है।"

महारानी का अवश क्रोध द्रवित होकर नेत्रों से टपक पड़ा। दांतों से ओंठ काट कर वे ऊंचे स्वर में बोलीं—"आचार्य हमें छल से प्रासाद से हटा कर राज्य को बलि की हिंसा के पाप में डुबो देना चाहते हैं। हिंसा के पाप से राज्य का त्राण नहीं हो सकेगा।"

आचार्य के मुख का भाव और स्वर और भी विनीत हो गये। उन्होंने उत्तर दिया—"भगवती राजमाता राज्य और प्रजा का कल्याण चाहती हैं। भगवती पाप-पुण्य और हिंसा-अहिंसा किसी व्यक्ति के हठ और अहंकार पर निर्भर नहीं करती। उसका निश्चय प्रजा और राज्य का कल्याण और जन-समूह का संतोष और विश्वास करता है। पशुओं पर दया कर बलि-निषेध की महारानी की आज्ञा ने असंख्य प्रजा को क्षुब्ध, हताश और विमूढ़ कर दिया है। यह क्षोभ कई हत्याओं और परस्पर-हिंसा का कारण हुआ है। भगवती बहुजन की तृप्ति और संतोष ही पुण्य और बहुजन का असंतोष ही पाप है। जन-गण की इच्छा के विरुद्ध उन्हें निर्वाण पद देना भी उनकी हिंसा है।"

महारानी ने और अधिक क्रोध से कहा—"आचार्य अहंकार और मूढ़ता में भगवान और गुरु की अवज्ञा कर रहे हैं। आचार्य भगवान और गुरु की दिव्य-शक्ति को नहीं पहचानते। आचार्य नहीं जानते परमयोगी, महास्थविर जीवक को आकाश मार्ग से विचरण की सिद्धि प्राप्त है। भगवान का

साक्षात्कार प्राप्त महास्थविर ही चमत्कार की दिव्य-शक्ति से इस राज्य की रक्षा करने में समर्थ हैं। उनकी अवज्ञा कर राज्य का नाश······" उत्तेजना के कारण महारानी के मुख से शब्द न निकल सके।

आचार्य ने और भी अधिक विनय से मस्तक झुका कर निवेदन किया—"भगवती राजमाता, देवताओं की दिव्य-शक्ति सभी मनुष्यों के कर्मों में प्रकट और चरितार्थ होती है। देवता की शक्ति मनुष्य के विश्वास में है। मनुष्य का अज्ञान ही उसका भय है। यह युद्ध मगध और कलिंग के देवताओं में नहीं, मगध और कलिंग के राज्यों और मनुष्यों में है। राज्य और प्रजा अपनी रक्षा स्वयं ही कर सकेंगे। पक्षी भी आकाश मार्ग से विचरण करने में समर्थ है परन्तु वे दिव्य-शक्ति सम्पन्न नहीं होते, वे मनुष्यों के भाग्य का निर्णय नहीं कर सकते। प्रजा की दया और भिक्षा से निर्वाह करने वाला प्रजा की रक्षा और शासन क्या करेगा?"

महारानी ने गुरु-निन्दा सुनने के पाप से बचने के लिए अपने दोनों कान हथेलियों से दबा कर नेत्र मूंद लिए।

महामात्य और महासेनापति ने भूमि तक झुक कर उनका अभिवादन किया और उनकी ओर मस्तक झुकाते हुए वे दुर्ग के द्वार की ओर पीछे हटते चले गए।

×



# महामात्य का समाधान

अशोक का सैन्य दल कलिंग के उत्तर और पश्चिम के प्रदेश को जीत कर लूटता हुआ कलिंग राज्य की सीमा तक पहुंच चुका था। मगध की सेना से भयभीत और लुटे हुए लोग बहुत बड़ी संख्या में कलिंग राज्य के कई नगरों और राजधानी में शरण के लिये एकत्र हो गये थे। इन त्रस्त और पीड़ित लोगों के कारण राजधानी में विरूपता और आतंक छा गया था। यज्ञ-बलि के प्रश्न पर नगर में हो गये उत्पात ने प्रजा को और भी अवसन्न कर दिया था। अब सम्पूर्ण नगर आपस में लड़ कर घायल हो गये परिवार की तरह परिताप के दीर्घ निश्वास ले रहा था। महारानी के नगर त्याग के समाचार ने उन की अवस्था को और भी दुखी कर दिया था।

महामात्य सुकंठ ने राज्य और नगर के सम्पूर्ण आतंक और विषाद को अपने हृदय में समेट, अपने श्वेत दाढ़ी-मूंछों से ढंके होठों से मुस्कराकर प्रजा को अश्वासन दिया—"भगवती राजमाता राज्य की रक्षा और कल्याण के लिये ध्यान-साधना से दिव्य-शक्तियों का प्रसाद पाने के लिए तप कर रही हैं। महारानी की इच्छा है कि महाराज के आदेश के अनुसार विजय के शुभ लग्न में जन्म ग्रहण करने वाली देवतारूप युवराज्ञी अमिता, सिंहासनारूढ़ होकर, देश और प्रजा के कल्याण का भार सम्भालें। इसलिये कार्तिक शुक्ला अष्टमी से राजेश्वरी का राज्याभिषेक उत्सव आरम्भ हो।"

राजधानी की प्रजा आनन्द और उत्साह से उछल पड़ी। भवनों, अट्टा-लिकाओं और हवेलियों से मृदंग, झांझ, नूपुर, तूर्य और भेरी के शब्द उठने

लगे। वीथियों, बाजारों, राज-पथों, हवेलियों और राजप्रासाद में बन्दनवार और तोरण बंधने लगे। चौराहों पर विनोद और समारोह के लिए वेदियां बनने लगीं। घरों, अटारियों और हवेलियों के द्वारों पर जल के कलश रखे जा कर आंगनों में और द्वारों के सामने आलेपन और आलेखन किया जाने लगा। नगर का वातावरण धूप, अगर-तगर आदि सुगन्धित द्रव्यों के धूम और घी, तेल, अन्न, माँस आदि के अग्नि के सम्पर्क में आने की गंधों से बोझल हो गया। प्रजा आनन्द और उत्साह में झूमने लगी और उनके मन उत्साह से भर जाने के कारण अशोक के आक्रमण के प्रतिरोध के लिए युद्ध की तैयारी का काम दूने उत्साह से होने लगा। लुहारों के बाजार में मुख से निकले शब्दों का कान तक पहुंचना कठिन हो गया। महामात्य जानते थे, अपने दुख और संताप से अधमरा मनुष्य शत्रु के आक्रमण का प्रतिरोध नहीं कर सकता।

जब महामात्य की आयु पचपन वर्ष की थी तभी उन की पत्नी का देहांत हो गया था। तभी से वे पारिवारिक हवेली में रहते हुए भी परिवार, और अपनी व्यक्तिगत चिंताओं को भी छोड़ कर, वानप्रस्थ की वृत्ति से निर्वाह कर रहे थे। राज्य-कार्य की चिंता के अतिरिक्त वे अपना समय स्वाध्याय और मनन में ही व्यतीत करते थे। पुत्र, वधू और पौत्र-पौत्रियों को देखे उन्हें दो दो, तीन-तीन पक्ष बीत जाते परन्तु महारानी के राजप्रासाद से चले जाने के पश्चात उनके कन्धों पर बालिका युवराज्ञी की माता का कर्त्तव्य भी आ पड़ा। महामात्य इस बात के लिये भी चिंतित रहने लगे कि माँ के अभाव में बालिका युवराज्ञी दुखी और अधीर न हो।

महामात्य ने अपने पुत्र और पुत्रबधु को आदेश दिया कि वे युवराज्ञी के समवयस्क अपने पुत्र और पुत्री को लेकर राजप्रासाद में जाकर उनका विनोद कर उन्हें उदास न होने दें। ऐसा ही अनुरोध महामात्य ने महासेनापति, धर्मस्थ आदि के परिवारों से भी किया था। स्वयं भी वे जब-तब राजप्रासाद जाकर युवराज्ञी को देख आने लगे। आचार्य को इस विषय में सब से अधिक भरोसा था वृद्ध कंचुकी उद्दाल, प्रौढ़ा दासी वापी और युवराज्ञी की विशेष दासी हिता का। युवराज्ञी सम्भ्रम महासमान्तों की सूखी, कड़ी गोद की अपेक्षा हिता की कोमल मांसल गदबदी गोद में ही अधिक संतोष पाती थी। उसे महामात्य और महासेनापति के सुवासित दाढ़ी-मूंछ की उपेक्षा कंचुकी उद्दाल के चिर-परिचित श्मश्रु ही अधिक सान्त्वना देते थे।

राजप्रासाद के कर्मान्तधिष्टायक के आदेश के अनुसार हिता ने युवराज्ञी को विश्वास दिला दिया था कि राजमाता तीर्थ यात्रा का तप करने गई हैं। वे शीघ्र ही देश-विदेश की सुन्दर पुतलियां लेकर राजप्रासाद में लौट आयेंगी। दास-दासियों को धारा और नीमा से राजमाता के राज्य को धर्मार्थ संकल्प कर देने की बात की भी भनक मिल गई थी। राजमाता के तीर्थ जाने और धर्मार्थ राज्य संकल्प कर देने के समाचारों को मिला कर उन लोगों ने अनुमान कर लिया था कि संसार से विरक्त राजमाता राजत्याग कर तप करने के लिये चली गई हैं। हिता अमिता को बहलाये रहती। माँ की याद प्राया: न आने देती परन्तु कभी तो बालिका को मां की याद आती ही थी। तब हिता अमिता को बहलाने में सफल हो कर भी स्वयं अधीर हो जाती। राजमाता के राज्य-त्याग कर जाने से स्वयं उस का अपना भविष्य भी तो अन्धकारमय हो गया था।

महामहिमायी, परमभगवती, परमभट्टारिका, कलिंग की राजेश्वरी अमिता का राज्य-तिलक प्रजा और राजपुरुषों के लिए आनन्द, आल्हाद और उत्सव का अवसर था परन्तु महामात्य को उसमें भी पग-पग पर चिंता और समस्याओं का सामना करना पड़ रहा था। बालिका महारानी को बहुत देर तक, निश्चल राज्यसिंहासन पर बैठने की अपेक्षा हिता की उंगली पकड़ कर आंगन में उछल-कूद करना या बभ्रु के पीछे उद्यान में दौड़ना ही अधिक रुचिकर था। उसे न कलिंग की राजराजेश्वरी बनने में और न सिंहासनारुढ़ होने में कोई सुख जान पड़ता न इसका कोई लोभ ही था।

महारानी अमिता के राज्याभिषेक के उपचार और रीति-कर्म किये जा रहे थे तो उसे लग रहा था कि महामात्य, महासेनापति राजगुरु और दूसरे बड़े बूढ़े उनका खेल बना कर उसी प्रकार अपना मनोविनोद कर रहे हैं, जैसे वे स्वयं दूसरी बालिकाओं के साथ पुतली का ब्याह करके खेलती थी। यह उसे अच्छा न लगा। उस ने हठ किया—"हम राजेश्वरी नहीं बनना चाहतीं। हिता को राजेश्वरी बनाओ।"

राजतिलक के उपचार आरम्भ होने पर राजगुरु ने सात नदियों और सात सिन्धुओं का जल महारनी पर छिड़का। अमिता प्रसन्न होकर जोर से खिल-खिला कर हंस पड़ी और स्वयं भी वह पवित्र जल राजगुरु और दूसरे लोगों

पर छिड़क कर खेलने लगी राजतिलक और राजदंड धारण करने के उपचार समाप्त ही न हो रहे थे और बालिका एक स्थान पर बैठे-बैठे थक गई थी जैसे स्वच्छन्द पक्षी को पिंजरे में बन्द कर दिये जाने पर वह पर फड़फड़ाने लगता है, वैसे ही विवशता में सिंहासन पर बैठा दी गई अमिता व्याकुल हो उठ कर भाग जानी चाहती थी ।

महामात्य, महासेनापति और राजगुरु बालिका राजेश्वरी को समझा कर थक गये कि राजेश्वरी बन जाने से उन्हें असंख्य खेल खेलने के लिये मिलेंगे, सब लोग उनकी बात मानेंगे पर वह हठ से अपना पूरा शरीर झकोर-झकोर कर इनकार ही करती गई । तब हिता ने सहमते हुये आगे बढ़ कर महारानी के कान में समझाया—"महारानी, हमारी बात नहीं मानेंगी तो हम भी महारानी से नहीं बोलेंगे ।" हिता ने सम्भ्रान्त लोगों से आंचल की ओट कर अमिता को अपनी आंखों में आंसू दिखा दिये । अमिता उस के गले से लिपट गई और कुछ समय के लिए सिंहासन पर बैठने के लिए मान गई । अमिता सिंहासन पर तो बैठ गई परन्तु केवल महामात्य, महासेनापति, राजगुरु आदि वृद्ध, अति गम्भीर व्यक्तियों का उसे घेर लेना न सुहाया । अमिता ने हिता के सिंहासन के समीप बने रहने का आग्रह किया । महामात्य हिता को महारानी की चँवरधारिणी का पद दे देने के लिये विवश हो गये । हिता सहसा महत्त्व-पूर्ण और अनुपेक्षणीय बन गई ।

स्वर्ण का रत्न-जटित भारी मुकुट सिर पर रखा जाने पर भी बालिका महारानी ने आपत्ति की । वह मां को पुकार-पुकार कर रोने लगी । समझा-बुझा कर मुकुट पहना ही दिया जाने पर अमिता की आँखों में उस यातना से आँसू आ गये । महामात्य ने जिस महारानी को स्वामिनी कह कर, जिसके सामने सिर नवा कर उनकी स्वामि-भक्ति और आज्ञापालन की प्रतिज्ञा की उसी महारानी की आखों में आँसू देख कर महामात्य को उसे गोद में ले लेना पड़ा ।

महामात्य ने बालिका महारानी को रिझाने के लिए उस की ओर देख कर मुस्कराकर, दुलार किया—"परमभगवती राजेश्वरी की आंखों में आँसू नहीं आते ।" मन ही मन वे सोच रहे थे - यही है राजशक्ति की वास्तविकता, जैसे उपासक स्वयं देवता की प्रतिष्ठा कर उसे सर्वशक्तिमान मान लेता है !

राज्य और शासन को निबाहने का बोझ तो उनके ही कंधों पर रहेगा। महारानी के अबोध बालिका-मात्र होने से उनका कर्त्तव्य और भी अधिक कठिन होगा। महारानी तो उनकी शक्ति के मार्ग की मुद्रा-मात्र है। शायद उनकी मुस्कान का कारण यह विचार था कि जिस राज्य और सिंहासन के लोभ में चंड अशोक ने अपने निन्यानवे भाइयों का संहार किया है, राज-परिवार के पाँच सौ व्यक्तियों को रक्त में डुबा दिया है और दूसरे राज-सिंहासनों के लोभ में लाखों मनुष्यों का संहार कर चुका है और लाखों का संहार करने के लिये उद्यत है, उसका सुख क्या यही है कि एक बालिका दो घड़ी में उस से थक गई ? यह बालिका का अज्ञान है अथवा उस का निष्पाप हृदय ?

राजेश्वरी अमिता के राज्यभिषेक के उपलक्ष में कलिंग की प्रमुख नर्तकियां राजसभा में महारानी की मंगल-कामना का नृत्य कर रही थीं। महारानी राज-सिंहासन पर बैठे बहुत उकता गईं और प्रमद-बन में जाकर अपने कुते बभ्रु और कुरंग-शावको के साथ खेलने का हठ करने लगी। अपने आसन पर बैठे महा-मात्य देख रहे थे कि हिता, वापी और वृद्ध कन्चुकी उद्दाल ही महारानी को बहला कर बैठाए हुए हैं। वे अपने श्वेत दाढ़ी-मूंछ में छिपे होठों से मुस्कराकर सोच रहे थे—क्या अब इस राज्य की व्यवस्था चलाने के लिये महामात्य, महा-सेनापति और धर्मस्थ की अपेक्षा हिता, वापी और वृद्ध कंचुकी का ही महत्त्व अधिक होगा ?

हिता के चातुर्य से अमिता को नृत्य करती नर्तकियों के पावों में छनक-छनक करते नूपुरों में रस आने लगा। महारानी सहसा पुकार उठीं—"हम भी नाचेंगी।"

समीप बैठे महामात्य ने उन्हें धीमे स्वर में समझाया—"परमभगवती, प्रजा के सामने राजेश्वरी का नाचना उचित नहीं।"

महारानी ने बाल-बुद्धि से तर्क किया—"तो फिर तारा और रत्ना हमारे सामने क्यों नाचती हैं ? हम भी नाचेंगी। हमारा मन चाहता है।"

महामात्य ने अमिता को नाचने की अनुमति नहीं दी तो वह हठ कर बैठी—"हम अम्मा के पास जायंगी।"

राजनीति में कभी न थकने वाले महामात्य बालिका के हठ से थक कर बोले—"नहीं महारानी, आप नहीं नाच सकतीं।"

अमिता ने तर्क किया—"आचार्य काका, आप तो कहते थे, हम सिंहासन पर बैठ कर, मुकुट पहन कर राज-राजेश्वरी बन जायंगी तो सब लोग हमारी आज्ञा मानेंगे। आप हमें नाचने क्यों नहीं देते ? आप हमारी आज्ञा क्यों नहीं मानते ?"

कठिन परिस्थिति में विवश होकर महामात्य ने राजसिंहासन के पीछे चँवर लिये खड़ी हिता की ओर देखा। हिता ने महामात्य का संकेत समझ कर मुख और नेत्रों में गम्भीरता का भाव लाकर महारानी के कान के समीप मुख ले जाकर समझाया—"महारानी नाचने से बच्चों के पांव में मोच आ जाती है। महारानी के पांव में मोच आ जायगी तो दादी राजमाता और दंडक हिता को कोड़ों से पिटवायेंगे।" अमिता हिता के लिये मार के भय की बात सुन कर चिंता से चुप हो गई और राजसभा में नाचने का हठ उस ने छोड़ दिया।

राजेश्वरी के राज्याभिषेक के उपलक्ष में नगर और राज्य के सभी सेट्ठियों और जेट्ठकों (चौधरियों) ने स्थान-स्थान पर प्रजा के लिये खान और पान के मुक्त छत्र लगवा दिये थे। राजमाता के महा-बलि यज्ञ का निषेध कर देने से प्रजा तृप्ति की आशा खो कर क्रोध में उन्मत्त हो गई थी। राजेश्वरी अमिता की कृपा से वह तृप्ति पा कर, प्रजा बालिका महारानी के प्रति श्रद्धा और भक्ति से विभोर हो गई।

नगर में महारानी की शोभा-यात्रा के समारोह के दिन गलियों, बाजारों और राजपथ के दोनों ओर सभी भवन, अट्टालिकाएं और हवेलियां मौलिओं, बन्दनवारों, तोरणों, और रंगीन रेशमी और सूती वस्त्रों और बहु-मूल्य दुशालों से ढक गये। तोरणों में कलश, नारियल और सुपारियां लटकी हुई थीं। सभी द्वारों के सामने कदली-स्तम्भ सजाये गये थे और आलेपन कर चित्रित कलश रखे हुये थे सब ओर धूप और सुगन्धित द्रव्यों का धुआं उमड़ रहा था। पशुओं के सींगों को भी तेल से चमकाकर हल्दी और गेरु से सजा दिया गया था शोभा-यात्रा के मार्ग के दोनों ओर के घरों, अटारियों और हवेलियों की छतें और छज्जे गृह बन्धुओं के बोझ से चरमरा रहे थे। मार्गों में, दुकानों और भवनों के छज्जे पर कहीं तिलमात्र रख देने के लिये भी स्थान शेष न था।

महारानी की शोभा-यात्रा के आरम्भ में झूलों से सजे हुए ऊंटों पर अनेक

सैनिक महारानी का जय-घोष करते जा रहे थे। उन के पीछे ऊंटों पर नरसिंहे भेरियां, नगाड़े और झांझ, तासे बज रहे थे। उनके पीछे बंदी और चारण कलिंग के प्रतापी वंश की विरुदावली गाते जा रहे थे। उनके पीछे कई बैल-गाड़ियों पर कापालिक लोग खेल-तमाशे दिखा कर प्रजा का विनोद कर रहे थे। उनके पीछे दूसरी बैलगाड़ियों पर बंधे बड़े-बड़े मंच पर मंगला-मुखियां नृत्य करती जा रही थीं। मंगला-मुखियों के पीछे सूर्य की किरणों में चमकते बल्लमों पर राजपताकाएं लिये अश्वारोही यूथपों का दल था। उसके पश्चात सशस्त्र सेना-नायकों से घिरे हाथियों की पंक्ति थी।

सब से पहले एक विशाल हथिनी पर सुनहरी झूलें पड़ी हुई थीं और सोने से मढ़ा हौदा लगा था। इस हौदे में दो सेनापति शरीर-रक्षकों और वृद्ध उद्दाल और चंवरधारिणी हिता की रक्षा में राजेश्वरी अमिता थी। महा-रानी के पीछे हाथियों पर क्रमशः महामात्य आचार्य सुकंठ, महासेनापति आर्य भद्रकीर्ति, राजगुरू, धर्मस्थ, कोषाध्यक्ष, राजसखा नगर सेठ्ठी सौमित्र और राज-परिषद के दूसरे लोग थे। उनके पश्चात रथों और पालकियों और घोड़ों पर दूसरे राज-सम्मान प्राप्त लोग थे। महामात्य कलिंग की राजेश्वरी के वैभव का प्रदर्शन कर प्रजा में उनकी शक्ति और सामार्थ्य का विश्वास बैठा देना चाहते थे।

असंख्य कंठों से महारानी का जय-घोष उठ रहा था। भवनों, अटारियों और हवेलियों की छतों और छज्जों से महारानी पर फूलों, फूलमालाओं, खीलों और तिल-चावल की वर्षा हो रही थी और पथ से भी फूल, फूल-मालाएं, खीलें और तिल-चावल उनकी ओर उछाले जा रहे थे। बालिका महारानी को यह खेल बहुत भा रहा था। हौदा फूलों और फूलमालाओं से भर कर ढंक गया था। अमिता भी प्रतिकार में फूल और मालाएं प्रजा की ओर फेंक रही थीं। जो फूल उसे बहुत रुच जाता उसे कुछ समय के लिये रख भी लेती।

एक अटारी की छत से श्वेत फूलों की बहुत ही सुन्दर गुंथी हुई माला अमिता के सम्मुख होदे में आ कर गिरी। अमिता माला की सुगंध से बहुत प्रसन्न हुई। माला को उसने कंठ में पहन लिया और प्रतिकार में अपन कंठ से एक मोतियों की माला उतार कर फेंक दी। इसके पश्चात बालिका महारानी

मोतियों और रत्नों की मालाओं को तोड़-तोड़ कर फूलों के प्रतिकार में रत्न और मोती प्रजा की ओर फेंकने लगी। हिता बार-बार महारानी को रत्न फेंकने से रोक रही थी। महारानी हिता के कहने से भी फूलों के प्रतिकार में रत्न फेंकने का खेल छोड़ने के लिये न मानी। प्रजा महारानी की दानशीलता और उदारता देख कर श्रद्धा से विभोर होकर और भी ऊंचे स्वर में उनका जय-जयकार करने लगी।

प्रजा के ऊंचे स्वर में जय-जयकार करने से अमिता का रत्न फेंकने का उत्साह बढ़ता ही जा रहा था। कुछ समय पश्चात महामात्य के हाथी के साथ चलते कंचुकी ने महारानी की हथिनी के समीप आकर हिता और उद्दाल को संदेश दिया कि महारानी को रत्न फेंकने से रोका जाय। उद्दाल और हिता के बहुत अनुनय से समझाने पर भी अमिता ने हठ किया—"हम पर सब लोग फूल और अक्षत फेंक रहे है। हम भी उन की ओर फेंकेंगे।"

हिता और कंचुकी ने समझाया—"परमभगवती, फूल और अक्षत फेंकने के लिये ही हैं परन्तु रत्न और मणि-मुक्ता बहुमूल्य हैं। महारानी, पुष्प और अक्षत रख कर मणि-मुक्ता नहीं फेंके जाते।"

अमिता ने हठ किया—"नहीं, मणि-मुक्ता की अपेक्षा फूल अधिक सुन्दर हैं।" फूलों को नाक के समीप ले जा कर वह बोली—"देखो, फूलों में तो सुगंध हैं, वे कोमल हैं। मणि-मुक्ता तो निर्गंध और कठोर हैं।"

अमिता किलक-किलक कर रत्न और मणि-मुक्ता प्रजा की ओर फेंक रही थी और प्रजा महारानी की उदारता और दानशीलता का जय-घोष ऊंचे से ऊंचे स्वर में कर रही थी। राज्य-धन का इस प्रकार अपव्यय होता देख कर महामात्य को चिंता तो थी परन्तु महारानी की दानशीलता से प्रजा में जो श्रद्धा उमड़ी पड़ रही थी, उससे भी उन्हें कम संतोष न था। महामात्य के कंचुकी ने उन्हें संदेश दिया कि कोषाध्यक्ष आर्य अश्वत्थ राज्यधन के फेंके जाने से चिंता प्रकट कर रहे हैं। महामात्य ने उन्हें उत्तर भेजा—"यह राज्य-धन सदुपयोग ही है। कलिंग पर मगध के आक्रमण का प्रतिरोध करने में राज्य-कोश में पड़े रत्न और मणि-मुक्ता सहायक नहीं होंगे। हमारी महारानी के प्रति प्रजा की श्रद्धा ही उस आक्रमण का प्रतिरोध करने में सहायक होगी।"

महारानी का दर्शन पाने के लिये यों भी राजपथ पर अपार भीड़ थी। महारानी द्वारा प्रजा को उदारता से मणि-मुक्ता बांटने का समाचार वायु के प्रवाह के साथ फैलने वाली सुगंध की भांति तुरंत नगर के कोने-कोने में पहुंच गया। पथ पर प्रजा की भीड़ इतनी घनी हो गई कि शोभा-यात्रा की गति अति मंथर हो गई। महारानी को हौदे में बैठे-बैठे एक पहर के लगभग समय बीत चुका था। बैठे रहने की यातना से बालिका का अंग-अंग व्याकुल होने लगा था। वे बार-बार हिता और कंचुकी से भूमि पर उतार दिये जाने की इच्छा प्रकट कर रही थी। कंचुकी और हिता उन्हें जैसे-तैसे बहला कर बैठाये हुए थे। उसी समय एक अटारी से नीले कमल का एक अधखिला फूल महारानी के हौदे पर आ कर गिरा। अमिता का हाथ उस फूल की ओर बढ़ गया। हौदा फूलों से भरा होने के कारण नीले कमल का फूल फिसल कर नीचे पथ पर गिर गया और महारानी के हाथ न पड़ सका।

अमिता ने पुकारा—"हथिनी को रोको, हम फूल लेंगे!"

हिता और कंचुकी ने अमिता को बहुत समझाया कि इस से अधिक सुन्दर सैंकड़ों कमल महारानी के लिये राजप्रासाद में रखे हैं परन्तु बालिका नहीं मानी। अनुरोध पूरा न किया जाने पर वह क्रोध में हिता को मार कर स्वयं भी रो पड़ी।

यह अवस्था देख कर महामात्य ने कंचुकी और हिता की ओर क्रोध से देखा। कंचुकी ने अभयदान मांग कर उत्तर दिया—"बालिका महारानी तीन घड़ी से अधिक समय से हौदे में जकड़ी बैठी है। उस के कोमल अंगों और बाल प्रकृति के लिये यह विकट यातना है। उस का शरीर विवश हो गया है। अब वे सह नही सकतीं।"

महामात्य स्वयं भी एक पहर तक एक आसन से बैठे रहने की थकान अनुभव कर रहे थे परन्तु कर्त्तव्य पूरा करना आवश्यक था। बालिका तो उस कर्त्तव्य को समझती नहीं थी। महारानी का प्रजा के सामने रो पड़ना अशुभ अशकुन और राज्यशक्ति का अपमान होता। उन्होंने महासेनापति से परामर्श किया। अनुभवियों का कहना है राज हठ, बाल हठ और स्त्री हठ इन में से किसी एक का भी विरोध कठिन है। यहाँ तीनों हठ एक साथ हैं। महारानी

के प्रजा के सम्मुख रो देने की अपेक्षा उनका क्रीड़ा से पथ पर उतर कर फूल ले लेना ही अच्छा है।"

महामात्य की अनुमति से महारानी की हथिनी को बैठा दिया गया। कंचुकी और हिता पथ पर उतरे। महामात्य महासेनापति, राज्यपरिषद के तथा शोभा-यात्रा में सवारियों पर चलने वाले सब लोग भी महारानी के आदर में सवारियों से पथ पर उतर आये। कंचुकी ने अमिता को हाथी से उतार लिया।

महारानी को अपने बीच पा कर प्रजा ने और भी अधिक उल्लास से जय-ध्वनि की। महारानी के लिये स्थान करने के लिये सशस्त्र राजपुरुषों ने प्रजा को पीछे हटा दिया। प्रजा पीछे धकेली जाने पर भी अपनी महारानी का बालरूप समीप से देख कर गद्‌गद् हो कर भूमि छू-छू कर उन्हें प्रणाम करने लगी। महारानी क्रीड़ा और विनोद से गिरे हुए फूल को ढूंढ़ रही थी। राजपथ पर असंख्य कुचले हुए फूलों का कीचड़ हो रहा था। प्रजा सुन्दर से सुन्दर फूल महारानी को भेंट कर रही थी परन्तु अमिता हौदे से गिरे हुए नीले कमल को ही ढूंढ़ रही थी। प्रजा महारानी के भोलेपन पर तन-मन से न्योछावर हो रही थी।

नीले कमल का खोया हुआ फूल ढूंढ़ते समय महारानी की दृष्टि भीड़ में दबे हुए अपनी ही आयु के दो बालकों पर पड़ गयी। महारानी ने उन्हें पुकारा —"आओ! आओ!" और स्वयं ही उन की ओर बढ़ गईं।

दोनों बालक शरीर पर केवल झगले ही पहने हुए थे। वे महारानी के स्वर्ण-खचित वस्त्रों और रत्न-जटित मुकुट के तेज से आतंकित हो कर पीछे हटने लगे। महारानी ने उन्हें आश्वासन देकर पुकारा —"आओ, हमारे साथ खेलो? हम से भय क्यों करते हो। हम किसी से कुछ छीनते नहीं, किसी को डराते नहीं, किसी को मारते नहीं।"

प्रजा महारानी के इन शब्दों से गदगद होकर ऊँचे स्वर में जय-ध्वनि करने लगी। भयभीत बालकों को सान्त्वना देकर महारानी के समीप लाया गया। क्षण भर में अनेक बालकों ने भीड़ में से निकल कर महारानी को घेर लिया। अमिता को इस से पूर्व इतने बालकों को ऐसी अवस्था में देखने का अवसर नहीं मिला था। वह विस्मित थी और बालक महारानी के वस्त्र-आभूषण देख कर स्तब्ध थे। बालकों के लालायित नेत्र अपने वस्त्रों की ओर

लगे देख कर अमिता ने पूछा—"तुम्हें यह वस्त्र अच्छे लगते हैं ? तुम ऐसे वस्त्र क्यों नही पहनते ?"

एक साहसी बालक ने उत्तर दिया—"हमें ऐसे वस्त्र कौन देगा ?"

अमिता ने पल भर सोचा और बोली—"यह वस्त्र अम्मा देती है। अम्मा सब को देगी।"

महामात्य ने अवसर के अनुकूल महारानी की बात की व्याख्या की—"परमभगवती महारानी प्रजा को आश्वासन देती हैं, वह प्रजा की माता हैं, वे प्रजा का उचित पालन करेंगी।"

अमिता अपने वस्त्र और आभूषण उतार-उतार कर दरिद्र बालकों में बांटने लगी। आनन्द विह्वल प्रजा के जय-घोष से राजपथ के दोनों ओर की अट्टालिकाएँ कांप उठीं --"जय हो ! जय हो ! प्रजा-वत्सल धर्मावतार बाल महारानी की जय हो।" प्रजा को जान पड़ रहा था, सत्य ही कलिंग की रक्षा और कल्याण के लिए सृष्टि की पालक, आदि शक्ति माता ने बालिका रुप में कलिंग के राज्य सिंहासन पर पदार्पण किया है।

अमिता जिस फूल की खोज में हथिनी से नीचे उतरी थी, उसे भूल चुकी थी। वह चारों ओर खड़े बालक-बालिकाओं से झूले और गुड़िया की बातें करने लगी। महामात्य के संकेत से कंचुकी और हिता ने उस से राजप्रासाद लौट चलने का अनुरोध किया।

अमिता ने बालकों की भीड़ की ओर संकेत कर कहा—"इन्हें भी राज-प्रासाद में ले चलो। हम इनके साथ खेलेंगे।"

अमिता को समझाया गया, ऐसा उचित नहीं। उचित-अनुचित के तर्क से अमिता का समाधान न हो सकने पर हिता ने विवशता प्रकट की—"महारानी, हथिनी लक्ष्मी महारानी के अतिरिक्त किसी दूसरे को अपनी पीठ पर नहीं बैठायेगी।"

अमिता सदा हिता की बात का विश्वास करती थी परन्तु उस समय बालकों की संगति के लिये आतुर होने के कारण उसने हिता की बात से भी संतुष्ट न हो कर स्वयं हथिनी के समीप आकर उससे पूछा—"लक्ष्मी मौसी, तू हमारे सखा बालकों को अपनी पीठ पर नहीं बैठायेगी ?"

लक्ष्मी ने अपनी सूंड उठा और फिर झुका कर अनुमति दे दी । अमिता ताली बजा कर किलक उठी—"लक्ष्मी सब को बैठायेगी !" और उसने हठ किया, दूसरे सभी बच्चों के हथिनी पर बैठ जाने पर ही वह हौदे में बैठेगी ।

जितने बालक हथिनी पर बैंठ सकते थे, बैठ गये परन्तु बालकों की संख्या अधिक थी और बढ़ती जा रही थी । अमिता के हठ के कारण महामात्य और राज्यपरिषद के दूसरे लोगों के हाथियों पर भी बच्चों को बैठाया गया । कुछ बालक रथों पर भी बैठे और कुछ पालकियों पर । तब महारानी अमिता स्वयं हथिनी पर बैठीं ।

महामात्य के आदेश से यह शोभा-यात्रा नगर के अन्य भागों की ओर न जा कर राजप्रासाद की ओर लौट चली । शोभा यात्रा में विघ्न पड़ जाने के कारण राजगुरु, धर्मस्थ, कोषाध्यक्ष और सेठ सौमित्र ने महामात्य के सम्मुख चिंता प्रकट की । महामात्य ने उन्हें सान्त्वना दी—"देवता सचमुच कलिंग पर कृपालु हैं । देवताओं की इच्छा और विधान से ही राज्य की रक्षा के लिए असाधारण धटनाओं का यह चक्र चल रहा है । उन्होंने मन ही मन देवताओं की कृपा के लिए उन्हें प्रणाम किया । प्रजा ने इससे पूर्व कभी राज-सत्ता के प्रति इतनी श्रद्धा, स्नेह और ममत्व अनुभव न किया था ।

महामहिमामयी कलिंग की राजेश्वरी अमिता के प्रताप और महामात्य आचार्य सुकंठ के आयोजन से राज्य और नगर की प्रजा के लिए प्रत्येक दिन समारोह का और रात उत्सव की थी । प्रजा जान ही न पायी कि महारानी के राज्य-तिलक का उत्सव कब समाप्त हुआ और चंड अशोक के प्रतिरोध के लिये कलिंग की सेना के 'विजय-अभियान' का समारोह कब आरम्भ हो गया । राजपथों और वीथियों में अभी राज्य-तिलक के बन्दनवारों के पत्ते सूख कर झड़ नहीं पाये थे कि 'विजय-अभियान' के समारोह के बंदनवार बंधने और स्थान-स्थान पर नगाड़े और नरसिंहे बजने लगे ।

महामात्य प्रजा के उत्साह में विराम का समय न दे कर शत्रु का भय

और त्रास अनुभव करने का अवसर ही न आने देना चाहते थे। वास्तविक परिस्थिति का ज्ञान केवल महासेनापति और महामात्य को ही था। दो मास पूर्व ही सेनापति सामन्त सुबंधु और सामन्त दुर्जय सेनाएँ ले कर चंड अशोक को सीमा पर ही रोक लेने के लिये राजधानी से जा चुके थे। दूत नित्य ही समाचार ला रहे थे कि कलिंग के इन सेनापतियों को शत्रु के अपरिमित बल के दबाव से पीछे हटना पड़ रहा था।

महासेनापति ने राज्याभिषेक की रीति पूर्ण होते ही एक बड़ी सेना ले कर सीमांत के लिये प्रस्थान कर दिया था। आत्मरक्षा के लिये इस युद्ध की तैयारी का उत्साह राजधानी में ऐसा था मानो मगध को विजय करने के लिये कूच हो रहा हो। युद्ध-यात्रा के लिये नगर के चौराहों पर प्रजा को बिना मूल्य शस्त्र और भोजन-वस्त्र बंटता रहता। नगर और राज्य में डोंडी पिटती रहती—"परमभगवती महारानी की जय हो! प्रजा और पौरजन सुनें! धर्म और राज्य की रक्षा के लिये और देवताओं के प्रसाद के लिये सब द्विज और शूद्र, धनी और दीन; बाल-वृद्ध, रोगी, स्त्री और सन्यासी को छोड़ कर, कलिंग की महारानी की विजय-यात्रा में शस्त्र धारण करें! सब धनी अपने अन्न का एक तिहाई और स्वर्ण का दो तिहाई भाग और महाधनी अपने स्वर्ण का दस में से आठ भाग स्वेच्छा से राज्य के आयत्त करें! जो ऋणी और दास स्वेच्छा से शस्त्र धारण कर सैनिक बनें, वह ऋण और दासत्व से मुक्त हों..........।" प्रजा, महाशक्ति के बालिका अवतार कलिंग की राजेश्वरी के प्रति श्रद्धा और भक्ति से रण के नगाड़े, कड़खे और झांझ बजाती, झूमती अनवरत प्रवाह में राज्य की उत्तर-पश्चिम सीमा की ओर चली जा रही थी।

महामात्य आचार्य सुकंठ कलिंग की राजेश्वरी अमिता के नाम से भयंकर युद्ध की आयोजना कर रहे थे। कलिंग की मर्यादा की रक्षा के लिये चंड अशोक का प्रतिरोध करने में वे राज्य की सम्पूर्ण भूमि, प्रजा और स्वयं अपने आपको भी युद्ध के यज्ञ में आहुति दे देने के लिये तैयार थे परन्तु बालिका महारानी के सूर्य के ताप में दुखी हो जाने के समाचार से भी चिंतित हो जाते। बालिका अमिता ही अब कलिंग की राजसत्ता का मूल और प्रतीक थी। भविष्य में अमिता से ही कलिंग के राजवंश का वृक्ष प्रस्फुटित हो सकता

था। आचार्य प्रासाद के कर्मान्तधिष्टायक सामान्त प्रताप से नित्य ही महारानी की शारीरिक और मानसिक अवस्था के विषय में समाचार की प्रतीक्षा करते रहते। प्रताप इस विषय में हिता से जिज्ञासा करता रहता। चिंता का मुख्य कारण था अमिता का मां को याद कर अधीर हो उठना। कर्मान्तधिष्टायक से ले कर प्रासाद के नायक, प्रहरी, कंचुकी, यवनियां और दास-दासियां इसी यत्न में रहते कि महारानी विनोद में मग्न रहें और मां को याद करने का अवसर न आ पाये। उद्दाल और हिता के कौशल से अमिता प्रायः ही विनोद में उलझी रहती परन्तु बालिका को मां की याद कभी भी न आना कैसे सम्भव होता।

दिन का पहला पहर समाप्त होने से पूर्व ही महारानी चैत्य की पूजा से लौट कर बेटी को स्मरण कर उसे पूजा के पवित्र जल का आचमन करा कर आशीर्वाद देती थीं। वह समय आने पर अमिता मां को अवश्य याद करती और हिता से अनुरोध करती—"हितू, हमें आचमन कराकर आशीर्वाद दे दें।" हिता गले में भर आये आंसुओं का घूंट निगल कर अमिता की इच्छा पूरी कर देती। भोजन के लिये अनुरोध किया जाने पर, निद्रा के लिये पलंग पर लिटाये जाते समय या प्रातः नींद खुलने पर अमिता मां को याद कर पूछ लेती —"अम्मा तीर्थ यात्रा से कब लौटेंगी ? तीर्थ कहां है ? कितनी दूर है ?"

सामन्त प्रताप से सुन कर हिता ने अमिता को समझा दिया था कि महारानी राज्य और पुत्री की कल्याण कामना के लिये तीर्थ-यात्रा करने गई हैं। यात्रा समाप्त कर शीघ्र ही लौटेंगी। अमिता के मां के लिये अधीर होने पर हिता बालिका को कभी गुड़ियों के खेल में लगा देती, कभी प्रमद-उद्यान में ले जाती, कभी राजप्रासाद की छत पर ले जा कर नगर के दृश्य दिखाने लगती और कभी पालकी अथवा हाथी पर नगर विहार के लिये ले जाती। नगर में जाने पर हिता को आशा बनी रहती कि सम्भव है, मोद को देख पाने का अवसर मिल जाये। अपनी अनुपस्थिति में बालिका के अधीर हो जाने की आशंका से उसे दापी के हाथों में छोड़ कर मोद को मिलने चले जाने का अवसर अब हिता को कम ही मिल पाता था।

महामात्य के आदेश के अनुसार राज्य का सब से उत्तम अन्न पहले सैनिकों को दिया जा रहा था और बड़ी मात्रा में सैनिकों के लिये उत्तर पश्चिम में भेजा जा रहा था। साधारण प्रजा और विशेष कर राज्य के उत्तर-पश्चिम भागों से शरण के लिये राजधानी में भर गये लोगों को, मोटे और कुअन्न से निर्वाह करना पड़ रहा था। ऐसा अन्न खाने के कारण यह लोग पेट की अनेक व्याधियों से पीड़ित हो रहे थे। इनके संसर्ग में आने वाले लोग भी इन व्याधियों की लपेट में आ जाते। सर्वसाधारण में त्रास फैल गया था कि उत्तर-पश्चिम के लोगों पर देवता का कोप है। उन की संगति रोग का कारण है। महारानी के अभिषेक के उत्सव और विजय-अभियान के पर्व में जब वेदियों से मुक्त प्रसाद और मदिरा बंटने लगी तो राजधानी में इन लोगों ने और भी विकराल रूप ले लिया। नगर में विसूचि का रोग (हैजा) फैल गया। रोगी होकर लोग कुछ ही घड़ी में तड़प-तड़प कर मर जाते। इस अदृश्य शत्रु के भय से अथवा दैवी प्रकोप से लोग कांपने लगे। विहार के अनेक भिक्षु, नागरिकों से हुए झगड़े को भुला कर, स्वयं रोग की चिंता न कर रोगियों की सेवा करने लगे। वृद्ध और माताएँ आतंकित होकर अपनी संतान को सम्भावित भय से बचाने के लिये भिक्षुओं के आशिर्वाद के लिये भीड़ लगाने लगीं। भिक्षु उन्हें औषधि अथवा अभिमंत्रित जल का आचमन करा कर अभय का विश्वास दिलाते समय यह भी बताना न भूलते कि यह बलि की हिंसा के पाप का फल है। मनुष्य अपने कर्म से इसी प्रकार दुख भोगता है।

धनी वैश्य-कुलों में इस महामारी का कारण कुछ और ही अनुमान किया जाता था। लोग दबे-दबे स्वर में कहते—यह नगर के पाप से रुष्ट होकर महारानी के चले जाने के कारण दैवी अभिशाप है। ऐसी किंवदंतियां महामात्य तक भी पहुंचती। उन्होंने विचार कर आज्ञा दी—"रोग पाप है। पाप को भस्म करने की शक्ति वैश्वानर (अग्नि) देवता में है। नगर के जिस घर और मुहल्ले में रोग का प्रकोप हो, वहाँ के निवासी स्थान छोड़ कर बन में निवास करें और वह पाप युक्त स्थान वैश्वानर देवता की तुष्टि के लिये अर्पण किया जाये। राजपुरुषों ने रोग से आक्रान्त नगर के सभी रोग-ग्रस्त भागों और बस्तियों को जला दिया। वैश्वानर देवता के तृप्त हो जाने पर नगर एक सप्ताह में ही रोग के प्रकोप से मुक्त हो गया। जन-साधारण में

दूसरी ही किंवदन्ती फैल गयी:— ज्ञानी आचार्य को वैश्वानर देवता की सिद्धि प्राप्त है। उन्होंने देवता को संतुष्ट कर राज्य की रोग से रक्षा की है। बालिका महारानी का प्रताप और आचार्य का तप अशोक के सैन्य-दल को भी क्षण-मात्र में भस्म कर सकेगा।

## सौमित्र के सूत्र

सेठ सौमित्र राज्य-तिलक और विजय-अभियान के उत्सवों में उत्साह से सहयोग दे रहा था। महारानी के राज्यारोहण के अवसर पर उसकी ड्योढ़ी पर एक मास तक निरंतर मंगल वाद्य बजते रहे थे। एक मास तक सर्वसाधारण के लिये नृत्य-संगीत की खुली समज्या चलती रही थी। उस की हवेली से नित्य एक सहस्र प्रसाद बंटते थे। सेठ ने महारानी की सेना के उत्तर दिशा में विजय-अभियान के अवसर पर भी एक सहस्र गाड़ी अन्न राज्य-भंडार को दिया था। एक सहस्र भाले, खड्ग और धनुष आदि दिये थे और अपने ग्यारह दासों को सैनिक सेवा के लिये अर्पण कर दिया था। सौमित्र जब-तब महामात्य के दर्शन कर राज्य की सेवा के लिये अपनी तत्परता भी प्रकट करता रहता था। इन व्यस्तताओं के कारण सेठ को रात के दूसरे पहर तक भी विश्राम न मिल पाता।

रात्रि का दूसरा पहर समाप्त होने को था। सेठ सौमित्र अपनी हवेली के अन्तःपुर के आंगन के एक उज्ज्वल प्रकाश से भरे कक्ष में था। वह कोमल आसन से ढकी एक चौकी पर बैठा था। सामने श्वेत स्फटिक पत्थर की ऊंची बड़ी चौकी पर चांदी के बड़े थाल और छोटे-छोटे अनेक पात्रों में अनेक भोज्य पदार्थ रखे थे। सेठ की दोनों संतानों की माता भी समीप एक चौकी पर बैठी सेठ की रुचि भाँप कर सेवकों को कुछ और लाने का आदेश दे रही थी। सहसा कक्ष में सेठ की प्रौढ़ा दासी मौसी ने मुस्कराते हुए प्रवेश किया और सेठ के दूसरी ओर समीप ही भूमि पर बैठ गई। मौसी ने निःसंकोच सेठ

के थाल की ओर देखते हुए सेठानी को सम्बोधन किया—"स्वामिनी, यह क्या; बड़ियाँ नहीं बनवाती हो ? स्वामी को वही तो सब से अधिक रुचती हैं।"

"अब स्वामी को बड़ी रुचती ही नहीं। नित्य ही भोजन कम करते जाते हैं"—सेठानी ने खेद प्रकट किया।

मौसी ने आपत्ति की—"यह क्या करते हैं स्वामी ? माँस त्याग दिया है तो कुछ तो खायेंगे ? शरीर को कुछ तो पुष्टि चाहिए।"

सेठ ने मुस्कराकर मौसी की ओर देखा और भोजन से हाथ खींच लिया। मौसी ने मान किया—"स्वामी दासी की बात क्यों रखेंगे ?"

एक दासी जल-पात्र और हाथ पोंछने का वस्त्र लेकर आगे बढ़ आई और दूसरी दासी ने ताम्बूल की मंजूषा लाकर सेठानी के समीप रख दी। मौसी फर्श पर हाथ की टेक लेकर उठी और उसने हाथ पोंछने का वस्त्र अपने हाथ में ले लिया और बोली—"स्वामिनी आज्ञा दें तो स्वामी के लिए ताम्बूल दासी प्रस्तुत करे ?"

सेठानी से पहले सेठ बोल उठा—"हाँ, मौसी के हाथ का ताम्बूल खाये तो अवधि बीत गई। मौसी को अब अपनी विजया की दुकान का बहुत मोह हो गया है।"—सेठ मौसी का संकेत समझ गया था कि मौसी कोई सम्वाद लाई है और एकान्त में बात कहना चाहती है।

सेठ हाथ धो कर और पोंछ कर दूसरे कक्ष की ओर चला गया और मौसी ताम्बूल की मंजूषा उठा कर उसके पीछे-पीछे चली। जिस समय सेठ मौसी से बात करता, कोई सेवक विघ्न नहीं डाल सकता था।

सेठ सौमित्र की दासी मौसी की आयु सेठ से एक-दो बरस ही कम थी। किसी समय मौसी का नाम कली था। उस समय एक बार कली ने मौसी होने का अहंकार प्रकट किया था। सौमित्र उसे मौसी ही पुकारने लगा। दासी का कली नाम सभी भूल गये और वह सेठ से मौसी कहला कर जगत मौसी बन गई।

अब मौसी के सामने के दांत गिर कर होंठ कुछ भीतर की ओर हो गये थे। बड़ी-बड़ी आंखों पर पलकें झुक आई थीं परन्तु होठों पर पान की लाली, आंखों में चंचलता और मुख पर कोमलता और लावण्य के चिन्ह अब भी शेष

थे। बात करते समय वह अब भी ठुड्डी अथवा गालों पर उंगली रख कर मुग्धाओं और युवतियों की ही भाँति हाव-भाव से विस्मय और भय प्रकट करती थी। पड़ोस और परिवार के सभी बच्चे-बूढ़े उस से बात करना चाहते थे। परिवार का अंग न होने पर भी वह चालीस वर्ष से अधिक परिवार में रह चुकी थी। परिवार में उसका स्थान और अधिकार था। लोग उसे मौसी कह कर पुकारते थे परन्तु स्वर में भाव भाभी का रहता था।

जिस समय सौमित्र के पिता नगर सेठ चारुक की आयु लगभग अड़तीस वर्ष की थी, उन्होंने कली का रूप-लावण्य देख कर उसे विलास-दासी के रूप में खरीद लिया था। तब कली की आयु पन्द्रह वर्ष की थी। कली की मां निर्धन गणिका थी। अपनी बेटी को नगर सेठ के हाथ बेच कर उसने बेटी का भाग्य बना दिया था। उस समय सौमित्र भी सोलह-सत्रह वर्ष का किशोर था। तब उसने पिता की विलास-दासी के प्रति मुग्ध हो कर एक दिन कली को एकान्त में पकड़ कर उच्छृंखलता करनी चाही थी। कली नवयुवती थी और सौमित्र उसकी दृष्टि में केवल किशोर। कली ने दासी हो कर भी, स्वामी की कृपा के भरोसे स्वामी के पुत्र की प्रतारणा कर दी थी—"कुछ तो सोचो, मैं तुम्हारी माता के स्थान, मौसी तुल्य हूं।......तुम्हारे लिये और बालिका मंगवा दूं?"

सौमित्र चिढ़ कर तब से कली के मादक यौवन का विद्रूप करने के लिये उसे मौसी ही पुकारने लगा था। स्वामी-पुत्र के अनुकरण में दूसरे लोग भी कली को मौसी सम्बोधन करने लगे। मौसी, नवयुवक स्वामी पुत्र सौमित्र की वासना संतुष्ट न कर के भी रहस्य-वार्ता से उसे काम-केलि की शिक्षा देती रहती। वह उस का विश्वास पा कर उस पर अपना प्रभाव बनाये रहती। क्रीतदासी हो कर भी वह अपने चातुर्य के कारण स्वामी की उपपत्नी का आदर पाती थी।

सौमित्र के पिता उनसठ बरस की साधारण आयु तक जीवित रहे। मौसी के गर्भ से पहले एक पुत्र और फिर दो कन्यायें हुईं। सेठ चारुक ने मौसी के पुत्र को अपने जीवनकाल में ही अपनी व्यवसाय की गद्दी पर कारिंदा बना दिया था। मौसी की दोनों बेटियों को भी उन्होंने कुछ धन देकर नगर के निर्धन क्षत्रिय कुलों में ब्याह दिया था। सेठ चारुक की मृत्यु के पश्चात मौसी

ने आभूषण और श्रृंगार त्याग दिया था। वह विधवा कुलनारियों की भांति केवल श्वेत-वस्त्र पहनने लगी। अपने इस रूप में भी वह युवतियों के रूप को लजा देती थी। परिवार की सन्तानों का पालन अपने पेट की सन्तानों की भांति करती रहती। सौमित्र उस से हास-परिहास भी करता रहता। सेठ की प्रकृति गम्भीर हो जाने पर मौसी सेठ को काम-केलि की मंत्रणा ही नहीं, दूसरी अभिसंधियों में भी मंत्रणा देने लगी।

मौसी के प्रौढ़ा हो जाने के कारण, उसके नगर की गलियों और बाजारों में घूम आने में भी आपत्ति न थी। मौसी के व्यवहार में कुल-नारियों का सौम्य और दासी का निस्संकोच दोनों ही आकर्षक अनुपात में थे। हंसी-ठठोली का स्वभाव होने के कारण लोग उस से सभी तरह की बातें आत्मीयता से कर लेते थे। मौसी सब समाचार सौमित्र को देती रहती। जब से महामात्य ने महारानी की सवारी नगर में निकलते समय जनसाधारण के समीप आने पर और राजप्रासाद में लोगों के आने-जाने पर बंधन लगा दिये थे, सौमित्र ने मौसी को राजप्रासाद के सामने राजपथ पर विजया घोट कर बेचने और भुने हुए अन्न और मिष्टान्न की एक दुकान खुलवा दी थी। मौसी राजप्रासाद के प्रहरियों और दास-दासियों को सामने से आते-जाते देखती तो आदर से कुछ खाने-पीने का अनुरोध कर लेती। उधार देने में वह उदार थी, तिस पर उस की बातों का रस। लोग उस के यहाँ दो पल बैठना ही चाहते। इस सूत्र से मौसी को राजप्रासाद की गति-विधि का पूरा समाचार रहता; कौन दासी महारानी की मुंह लगी है, युवराज्ञी क्या खेल खेलती है, दण्डक किस दास से क्रुद्ध है, हिता का शासन के लिये दण्डक के हाथ पड़ना और चमत्कार से उस की रक्षा, हिता और मोद का अभिसार आदि सभी कुछ वह जानती थी।

एक दिन मौसी ने हिता को पुकार कर ममता और सहानुभूति प्रकट की —"किसी के प्रणय से ईर्षा करने वालों पर देवता का बज्र गिरे।" फिर मौसी ने हिता को एक तांत्रिक का नाम बताया, जिसका कवच कंठ में पहन लेने पर मनोवांछा पूर्ण होने में सन्देह नहीं रह सकता था। इसके पश्चात उस ने सहानुभूति में समझाया —"बेटी, क्या मैं नहीं जानती विरह का दुख कैसा होता है ?....तू बेचारी बिठ्ठल के कर्मान्त तक दौड़ी जाती है, तेरा संदेश मोद को मैं कह दिया करुं, वह यहाँ ही आ जाया करे...." राजप्रासाद के आंतरिक समाचार हिता से अधिक कौन जानता था ?

महारानी के राजप्रासाद से चले जाने के पश्चात बालिका महारानी को सदा बहलाये रहने का बोझ हिता के कंधों पर और भी अधिक हो गया था। अमिता के क्षण भर के लिये भी खिन्न होने पर सामन्त प्रताप हिता से क्रुद्ध हो जा सकता था। ऐसी अवस्था में हिता का मोद से मिलने के लिये अधिक समय के लिये राजप्रासाद से चला जाना और भी कठिन था। अब हिता मौसी की कृपा और सहायता के लिये और भी अधिक अनुगृहीत थी। महारानी के तीसरे पहर नींद लेते समय वह कभी आधी-पौन घड़ी के लिये मौसी के यहां आकर मोद से दो बातें कर सकती थी। हिता मौसी के प्रति अपनी मां से भी अधिक ममता और विश्वास अनुभव करती थी।

मौसी ने हिता के उत्तरदायित्व के प्रति चिंता प्रकट कर सेठ द्वारा की गई जिज्ञासा के सम्बन्ध में पूछा—"....बालिका महारानी राजमाता को तो क्या स्मरण करती होगी?....बच्चे तो भूल ही जाते हैं।"

हिता ने गहरा श्वास लेकर उत्तर दिया था—"मौसी क्या कहूं; कहना उचित नहीं पर कैसे हो सकता है, कि स्मरण न करे! मौसी, मैं ही जानती हूं, कैसे बहला कर रखती हूं। इतना न करूं तो राजप्रासाद और नगर में प्रति क्षण कोहराम मचा रहे....।"

रात्रि के दूसरे पहर मौसी सेठ की इसी विषय की जिज्ञासा का उत्तर देने आई थी। मौसी ने बालिका महारानी के विषय में स्वामी के कौतुहल का कारण अनुमान कर रहस्य के स्वर में महारानी की मां के लिये विह्वलता, हिता के हाथों में महारानी के पालतू जीव की भांति वश होने तथा हिता और मोद के प्रणय का रहस्य उसे बता कर कहा—छोकरी बिठ्ठल के दास के लिये उन्मत्त है, उसे पाने की धुन में वह आग में कूद जाने से भी न डरेगी।"

सेठ ने मौसी की बात ध्यान से सुनी। कुछ पल मौन रह कर सोचता रहा और फिर "हूं" कह कर मौसी को आदेश दिया—"तू दासी हिता से मिलती रहना। और समाचार देना!"

मौसी को बिदा कर सेठ शैया पर लेटा बहुत देर तक विचार करता रहा। उस ने निश्चय किया, स्वय राजप्रासाद में जा कर अवस्था क्यों न देखूं?

*

राजप्रासाद के प्रमद-उद्यान के वृक्षों से छन कर भूमि पर फैलती पहले पहर की घाम सुहावनी लग रही थी। प्रौढ़ा दासी वापी और दासी हिता महारानी अमिता को एक वृक्ष की डाल से बंधे झूले पर झुला कर बहला रही थी। महामात्य और महासेनापति के परिवार के पौत्र-पौत्रियां भी प्रातःकाल महारानी के विनोद में संगति देने आये हुए थे। कुत्ता बभ्रु कुछ दूर बैठा महारानी का झूला झूलना देख रहा था। बभ्रु सहसा ऊंचे स्वर में भौंक कर एक कदम्ब वृक्ष की ओर लपक गया। कुत्ते के भौंकने से अमिता की दृष्टि वृक्ष की ओर गई। उसने देखा आँगन से भाग कर आई एक बिल्ली छलांग मार कर कदम्ब पर चढ़ गई थी। बभ्रु बिल्ली को पकड़ लेने में असफल हो कर क्रोध और हिंसा की उन्मत्त उत्तेजना में वृक्ष के नीचे उछल रहा था। बिल्ली ऊपर एक शाखा पर चिपक कर बैठ गई थी और भय से कांप रही थी।

अमिता के हृदय में कातर बिल्ली के लिये करुणा उमड़ आई। उस का झूला झूलना रुक गया। उसने बभ्रु को धमकाया—"दुष्ट, तू निरीह बिल्ली को क्यों डरा रहा है? अम्मा कहती है किसी को डराओ मत!…"

अमिता अपनी बात पूरी न कह कर हिता को सम्बोधन कर पुकार उठी—"हितू, अम्मा तीर्थ से, कब आयेंगी? तू कहती थी, अम्मा तीर्थ से पुतलियां ले कर शीघ्र आयेंगीं!"

हिता ने अमिता को बहलाने के लिये कबूतरों को दाना चुगाने का खेल सुझाया परन्तु बालिका महारानी झुंझला उठी—"हम नहीं खेलेंगे, हम अम्मा के पास जायंगे!"

हिता ने दूसरा खेल सुझाने के लिये महामात्य के पोते आदित्य को सम्बोधन किया—"आज पुतली की राजसभा में कुमार आदित्य महासेनापति बनेंगे। हाय!"—हिता ने ठोढ़ी पर ऊंगली रख कर चिंता प्रकट की, "कुमार आदित्य के पास खड्ग तो है ही नहीं? महासेनापति पुतली महारानी का अभिवादन कैसे करेंगे?" और उसने फिर अमिता के सम्मुख चिंता प्रकट की, "महारानी, बेचारी नयी पुतली की राजसभा तो हुई ही नहीं। पुतली महारानी की शोभा-यात्रा के लिये दासी, जेठुक बिठ्ठल के यहां से, नया हाथी भी ले आई है।"

अमिता नयी पुतली की राजसभा का खेल खेलने के लिये मान गई। सब बच्चे हिता को घेर कर सभा-भवन में आ गये। अब कलिंग के राजप्रासाद का सभा-भवन अनेक प्रकार की पुतलियों, खिलौनों और फलों-फूलों से भरा रहता था।

अमिता नयी पुतली को सिंहासन पर बैठा रही थी तभी अलिंद से यवनी की पुकार सुनाई दी—"परमभगवती राजेश्वरी की जय हो! दासी को अभयदान मिले। दासी निवेदन करती है; राजसखा सेठ्ठियों के जेठ्ठक सौमित्र राजदर्शन के लिये राजद्वार पर उपस्थित हैं।"

हिता को आशंका हुई कि गुड़ियों की राजसभा के खेल में बहली हुई अमिता का मन खेल से उचट जाने पर उसे फिर बहलाना कठिन हो जायगा परन्तु यह भी जानती थी कि राजसखा सेठ्ठी सामन्त प्रताप से अनुमति लेकर आया है। उसे राजदर्शन से इनकार भी नहीं किया जा सकता। हिता ने अमिता की ओर से यवनी को उत्तर दिया—"राजसखा नगर सेठ्ठी ही राजेश्वरी की सेवा में उपस्थित हों।"

सौमित्र ने सभा-भवन में प्रवेश किय और भूमि स्पर्श कर अमिता को प्रणाम किया। सेठ के पीछे एक सेवक एक मंजूषा उठाये था। सेठ की ओर अमिता की पीठ थी। वह नयी पुतली को सिंहासन पर बैठा कर अपने हाथों उसे छोटा मुकुट पहना रही थी। अमिता ने पुतली को मुकुट पहना कर भी सौमित्र की ओर ध्यान नहीं दिया। उसने बच्चों की राजसभा को सम्बोधन किया—"सब लोग महारानी को प्रणाम करें!"

अब अमिता की दृष्टि सभा-भवन में एक ओर खड़े प्रौढ़ सौमित्र की ओर गई। सौमित्र ने अमिता के आदेश के अनुसार सब बच्चों के साथ भूमि स्पर्श कर पुतली को प्रणाम किया। प्रौढ़ सेठ को बच्चों के खेल में सम्मिलित होते देख कर अमिता प्रसन्न हो गई। सौमित्र एक ओर चुपचाप खड़ा बालिका महारानी के खेल को आदर पूर्वक ध्यान से देखने लगा।

युवती हिता को एक वयस्क व्यक्ति की उपस्थिति में बच्चों की तरह खेलने में संकोच अनुभव हो रहा था परन्तु महारानी के खेल को निबाहना भी कर्त्तव्य था। इसलिये उस ने सेठ को अनदेखा कर, संकोच से सिर झुकाये

एक बालक को बांह से पकड़ कर पुतली महारानी के सम्मुख उपस्थित कर प्रार्थना की—"अन्नदाता, यह दुष्ट चोर है। यह नागरिकों का धन छीन कर उनकी हत्या करता है। इसे नगरपाल ने दंड पाने के लिये राजद्वार पर भेजा है।"

अमिता ने गुड़िया का सिर हिलाया और पुतली-महारानी की ओर से आज्ञा दी—"महारानी आज्ञा देती हैं, दूसरों से छीनने वाले, दूसरों को डराने वाले, दूसरों को मारने वाले दुष्ट को धर्मस्थ दण्ड दें।"

हिता ने फिर घोषणा की—"सभा सुने, अब महारानी के सम्मुख नृत्य होगा।"

सौमित्र की उपस्थिति से हिता को अत्यंत असुविधा अनुभव हो रही थी। परन्तु खेल को निवाहे बिना भी चारा नहीं था। उसने सौमित्र की ओर पीठ कर, सिंहासन पर बैठी पुतली के सम्मुख ठुमक-ठुमक कर थोड़ा सा नाचा और भूमि स्पर्श कर बोली—"परमभगवती राजेश्वरी की जय हो! अन्नदाता, दीन नर्तकी को पुरस्कार मिले!"

अमिता ने पुतली का सिर स्वीकृति में झुकाकर उत्तर दिया—"महारानी नर्तकी से प्रसन्न हैं। नर्तकी को पुरस्कार देती हैं।"—अमिता ने समीप पड़ी एक माला उठा कर हिता की ओर फेंक दी।

नर्तकी को पुरस्कार देकर अमिता ने तर्जनी उंगली उठा कर पुतली-महारानी को सम्बोधन किया—"परमभगवती, राजेश्वरी राजसभा में नृत्य नहीं करना! नहीं तो आचार्य काका और महासेनापति काका रुष्ट हो जायंगे। राजेश्वरी समाज के सम्मुख नृत्य नहीं करतीं।"

अमिता का परिहास सुन कर सौमित्र का चेहरा सहसा गम्भीर हो गया। उस की दृष्टि हिता की ओर गई और हिता की आंखों से मिल गई। हिता ने सेठ की आंखों में विस्मय भांपा और सकुचा गई मानो बालिका महारानी का ऐसी बात कहना दासी का अपराध हो।

अमिता का ध्यान सेठ और हिता की ओर नहीं था। वह अपने खेल में व्यस्त थी। उसने महामात्य के आसन पर बैठे महामन्त्री के पौत्र को सम्बोधन किया—"आचार्य, यह पुतली-महारानी अच्छी नहीं हैं। यह भिक्षुओं को

बहुत भिक्षा देती हैं । यह यज्ञ का उत्सव नहीं करती । इन्हें पालकी पर बैठा कर तीर्थ-यात्रा के लिए भेज दो ! इनकी पुत्री महारानी बनेगी और अम्मा को स्मरण करेगी तब यह पुतली लेकर आयेंगी । फिर हम अम्मा से नहीं बोलेंगें ।"

अमिता की बात सुन कर सौमित्र के नेत्र विस्मय से फैल गए। एक गहरा निश्वास लेकर वह नेत्र झुकाये पल भर सोचता रहा । हिता बार-बार आँखें बचा कर सेठ की ओर देख लेती थी । सेठ के इस प्रकार विस्मित होने और विचार में डूब जाने से वह आतंक अनुभव कर रही थी । उस ने प्रसंग बदलने के लिए अमिता से प्रार्थना की—"महारानी यह तो बहुत सुन्दर गुड़िया है ।"

सौमित्र ने तुरन्त हाथ जोड़ कर अमिता के सम्मुख निवेदन किया—"परमभगवती, राजेश्वरी, अभयदान हो ! चतुर राजदासी का कहना ठीक है । यह पुतली सुलक्षण और सुन्दर है परन्तु सेवक महारानी के लिए तीन और पुतलियाँ सेवा में लाया है ।"

सेठ ने सेवक द्वारा प्रस्तुत मंजूषा में से एक पुतली निकाल कर निवेदन किया—"परमभगवती, यह चालुक्य देश की राजकुमारी है । यह कलिंग की राजेश्वरी को प्रणाम करने के लिए उपस्थित हैं ।"

सेठ ने दूसरी पुतली निकाल कर कहा—"यह गौड़ देश की राजकुमारी हैं ।" और तीसरी पुतली निकालते हुए बोला—"यह मद्र देश की राजकुमारी है । यह दोनों भी महारानी की सेवा में प्रणाम करती हैं ।"—सेठ ने पुतलियों के सिर सिंहासन के सम्मुख झुका दिये ।

अमिता कुछ पल पुतलियों की ओर देखती रही और फिर सहसा बोली—"इन राजकुमारियों की मातायें कहाँ हैं ? इन्हें अपनी अम्मा की याद नहीं आयेगी ?"

सौमित्र उचित उत्तर सोच ही रहा था कि अमिता ने फिर पूछ लिया—"क्या इनकी मातायें तीर्थ का तप करने चली गई हैं ?"

सेठ सोच रहा था, बालिका महारानी माता के वियोग में दुखी है । उसे मौसी की बात याद आई—दासी हिता कहती थी कि यदि वह महारानी को

सम्भाले न रहे तो प्रासाद और नगर में सदा कोहराम मचा रहे। यदि कोहराम मच ही जाय तो आचार्य विवश हो ही जायेंगे। दासी हिता ही स्थिति सम्भाले हुए है।

अमिता ने सेठ को सम्बोधन किया—"काका, हमारी अम्मा तीर्थ-यात्रा से कब लौटेंगी ?"

बालिका के प्रश्न ने गूढ़ चिंता में तने हुए सेठ के मस्तिष्क के ततुंओं को झंकार दिया। कई विचार एक साथ सामने आये, महामात्य का छल बालिका महारानी के सामने प्रकट कर दे परन्तु बालिका की सामर्थ्य क्या है ? महामात्य के कोप का भाजन बनने पर बालिका उसकी रक्षा नहीं कर सकेगी। महामात्य के छल की भित्ती को धक्का देकर गिराने से वह स्वयं ही पहले उस के नीचे दब कर मरेगा। सेठ ने विचार में पलक झुकाये ही उत्तर दिया—"परम भगवती राजेश्वरी धैर्य रखें। राजमाता शीघ्र ही तीर्थ यात्रा से लौटेंगी। महामात्य आचार्य शीघ्र ही राजमाता को बुलवा देंगे।"

अमिता को उत्तर देकर सेठ के नेत्र, उसकी ओर ही देखती हिता से मिल गये। हिता के नेत्रों की कातरता और मौन प्रार्थना को उस ने एक दृष्टि में समझ लिया। दासी के नेत्र प्रार्थना कर रहे थे—सेठ दया करके महारानी की माता के लिये अधीरता का रहस्य किसी से नहीं कहेगा।

अमिता का चेहरा उदास हो गया। वह बोली—"हम आचार्य काका से कहेंगे, अम्मा को शीघ्र बुला दो।" अमिता की दृष्टि सभा-भवन के द्वार से अलिंद में चली गई और सहसा उस के मुख का भाव बदल गया। वह किल्लोल से पुकार उठी—"वामन तामुल ! वामन तामुल आया ! वामन को घोड़ा बनायें !"

बालिका महारानी समीप खड़ी बालिका को बांह से खींचती हुई दौड़ पड़ी और भवन से बाहर चली गई। दूसरे बच्चे भी किल्लोल से—"वामन ! वामन !" पुकारते हुए उसके पीछे दौड पड़े। हिता बच्चों को महारानी के साथ जा सकने का अवसर देने के लिए एक ओर हो सिंहासन के समीप खड़ी रही। सभा-भवन के द्वार पर खड़ी वापी और दूसरी दासी भी बच्चों की ओर चली गईं। सेठ के सम्मुख हिता अकेली ही रह गई थी। वह भी द्वार की

ओर जा रही थी परन्तु सेठ को अपनी ओर अर्थ-पूर्ण दृष्टि से देखते पा कर ठिठक गई।

सेठ ने रहस्य के कोमल स्वर में हिता को सम्बोधन किया—"तुम्हारा परम सौभाग्य है। तुम्हें परम देवी के अवतार राजेश्वरी के बालिका रूप की सेवा करने और उनका विश्वास पाने का अवसर मिला है। तुम राजमाता के वियोग में महारानी को सान्त्वना देती हो। तुम्हारे जैसे राज-सेवकों के दर्शन से पुण्य होता है। राजभक्त प्रजा को तुम्हारा आदर करना चाहिए। प्रजा तुम्हारी इस राजसेवा के लिए क्या मूल्य दे !"—सेठ ने अपने बायें हाथ की कलाई में पहना रत्न-जटित कंगन उतार कर हिता की ओर बढ़ा दिया।

सेठ के अप्रत्याशित व्यवहार से हिता को रोमाँच हो आया। संकोच से हाथ जोड़ कर बोली "स्वामी आर्य, दासी इस का क्या करेगी ? स्वामी की दासी पर कृपा रहे।"

"आदर को ठुकराना नहीं चाहिए।"—सेठ ने समझाया। उस के नेत्रों में आत्मीयता और आदर का परन्तु स्वर में अधिकार का ऐसा भाव था कि हिता ने सोचा, सेठ को क्रुद्ध करना उचित नहीं। यदि सेठ महारानी के मुख से सुनी राजमाता के वियोग से दुखी होने की बात प्रासाद के कर्मान्ति-धिष्टायक यूथप अथवा महामात्य से कह दे तो ......

हिता के सेठ के सामने जोड़े हुए हाथ अंजली के रुप में फैल गये। सेठ ने रत्न-जटित कंगन उसकी अंजली में रख दिया। हिता ने साहस कर प्रार्थना की— "आर्य, दासी को तो स्वर्ण पाने का और स्वर्ण धारण करने का अधिकार नहीं है। यह दासी के किस प्रयोजन का है ?"

सौमित्र ने पल भर सोचा। उसके होठों पर मुस्कान आ गई। उस ने रहस्य के स्वर में उत्तर दिया—"भाग्य ने जिसे राजेश्वरी के विश्वास और स्नेह का पात्र बनाया है, उसका भाग्य और भविष्य क्या होगा ; यह कौन जानता है ? सम्भव है, किसी दिन कोई कुलवंत तुझ सुलक्षणा का वरण कर ले। भाग्य की लीला से तो शूद्र और दास भी सिंहासन पर बैठते हैं। भाग्य के लिखे से राजेश्वरी असहाय हो निर्वासित हो जाती है, दूसरे के हाथ की पुतली बन जाती है।"—अपनी बात कह कर भी सौमित्र पल भर तीक्ष्ण

और अर्थ-पूर्ण दृष्टि से हिता की ओर देखता रहा और फिर द्वार की ओर घूम गया।

हिता को अपने हाथों में थमे रत्न-जटित कंगन का बोझ असह्य जान पड़ रहा था। वह व्याकुल हो रही थी, लोग देखेंगे तो क्या समझेंगे, क्या कहेंगे ? समझ नहीं पा रही थी कि कंगन का क्या करे ? उसे कहाँ छिपा कर रखे ? दूसरा उपाय न देख उसने कंगन को अपने वक्ष पर कस कर बंधे कंचुकी वस्त्र में, स्तनों के बीच छिपा लिया और महारानी की सेवा में चली गई।

राज्य और नगर में सेठ सौमित्र की राजभक्ति, दानशीलता और राज्य-द्वार में प्रभाव की कीर्ति बढ़ती जा रही थी। राज्य-द्वार से विशेष कृपा चाहने वाले उसकी ड्योढ़ी को ही राजद्वार का मार्ग समझने लगे। सेठ के यहां केवल न्याय या राज्य कृपा की इच्छा करने वाले ही नहीं सभी तरह के लोग आते थे। राज्य की उत्तर सीमा के नगरों से भाग कर आये ऐसे लोग भी सेठ के यहाँ आते जो अशोक के सैन्य दल के भय से अपने घर-द्वार और भूमि पीछे छोड़ कर केवल सोना और बहुमूल्य रत्न समेट कर भाग आये थे। अब वे भोजन, वस्त्र और दूसरी आवश्यकताओं के लिये सोना और रत्न बेचना चाहते थे। ऐसे लोग भी सेठ के यहाँ आते जो आक्रमण के भय से दक्षिण की ओर भागना चाहते थे और अपना घर-बार भूमि, पशु बेच कर सुविधा से साथ ले जाने योग्य सोना और रत्न खरीदना चाहते थे। दोनों तरह के लोगों की आवश्यकताएं आपस में पूरी हो सकती थीं परन्तु वे सौमित्र के व्यवसाय की गद्दी द्वारा होतीं। ऐसे, दोनों ही तरह के लोगों के लिये सौमित्र के यहाँ अलग-अलग वस्तुओं के भाव थे। सोना और रत्न बेचना चाहने वालों को पदार्थों के रूप में बहुत कम मूल्य मिलता क्यों कि युद्ध के समय सोने और रत्न के ग्राहक कहाँ थे ? अन्य पदार्थ बेच कर सोना और रत्न खरीदने वालों को सोने और रत्नों का बहुत मूल्य देना पड़ता क्योंकि युद्ध के कारण सोना और रत्न बाजार में कहाँ थे ? सौमित्र के यहाँ जो भी आता, अपने धन का रूप बदलने के लिये धन का एक अंश छोड़ जाता।

दलाली का व्यवसाय करने वाला गोप, अगंध और सुवीर को ले कर सौमित्र के यहां आया था। बड़े कक्ष में दायें-बायें बेचने और खरीदने की गद्दियों पर सेठ के कारिन्दे लेवा-बेची कर रहे थे। दोनों ही तरह के ग्राहकों की भीड़ थी। गोप और उस के साथ आये लोग सौमित्र से ही परामर्श करना चाहते थे इसलिये उन्हें प्रतीक्षा करनी पड़ी।

सौमित्र ने तीनों अतिथियों को उचित आसन दिया। भीतर के कक्ष में साधारण क्रय-विक्रय करने वालों को नहीं बुलाया जाता था। सुवीर, सामन्त वंश का होने के कारण, सहायता की याचना करने के लिए आ कर भी सम्मान का अधिकारी था। सौमित्र उसे कक्ष में प्रवेश करते देख अपनी गद्दी से उतरा और अपने समान आसन पर बैठा कर साथ बैठा। अगंध को सेठ ने अपने साथ ही बाईं ओर स्थान दिया। गोप उन के सामने हाथ भर के अंतर से बैठ गया। सेवकों ने उनके सम्मुख ताम्बूल, सुगन्ध और मदिरा उपस्थित की। सुवीर प्रतीक्षा से उकता चुका था, बोला—"सेट्ठी के सत्कार से हम कृतार्थ हैं। हम तो इस संकट में जेट्ठक के आदेश के लिए आये हैं। जेट्ठक बतायें, हमारी रक्षा कैसे होगी ?"

सौमित्र ने तुरन्त उत्तर दिया—"युद्ध के संकट में देवताओं का आशीर्वाद, कलिंग की राजेश्वरी का प्रताप, महामात्य की बुद्धि, महासेनापति का शौर्य और प्रजा की राजभक्ति सहायता करेगी। संकट के समय ब्राह्मण का तप और ज्ञान, क्षत्रिय का बाहुबल और वणिक की दानशीलता सहायता करती है।"

गोप ने उत्साह से सौमित्र का समर्थन किया—"साधु ! साधु ! सेट्ठियों के अग्रणी सत्य कहते हैं। जो भी समझता है, यही कहेगा।"

सुवीर ने धीमे स्वर में सन्देह प्रकट किया—"जेट्ठक सत्य कहते हैं, युद्ध से तो महामात्य और महासेनापति रक्षा करेंगे ही। हम तो युद्ध के राज-कर से त्रस्त हैं।"

सौमित्र ने विस्मय प्रकट किया—"क्या कहते हैं सामन्त ? युद्ध के लिये राज-कर तो युद्ध की बलि का दान है।"

अगंध ने उत्तर दिया—"परन्तु दान तो श्रद्धा और सामर्थ्य के अनुसार

होता हैं। सम्पत्ति का दस में से आठ भाग देकर धनी का सामर्थ्य क्या रह जायगा ? तब उसे रक्षा की आवश्यकता ही क्या रह जायगी ? धनी के तीन अथवा आठ शरीर तो नहीं हैं। वह अपनी रक्षा के लिये इतना मूल्य क्यों दे ? जेठ्ठक राजद्वार में न्याय के लिये प्रार्थना करें.......।"

सुवीर ने अगंध का समर्थन किया --"सेठ्ठियों के अग्रणी, यही तो मैं कहता हूँ। धनी का सब कुछ राज्य-आयत्त हो जायगा तो राज्य धनी की क्या रक्षा करेगा ?"

सौमित्र का चेहरा गम्भीर हो गया उसने बहुत गम्भीरता से उत्तर दिया--"मित्र, यह अधर्म बुद्धि है। ऐसी बात द्विज को शोभा नहीं देती। धन तो जन का है, जन की आवश्यकता के लिये है। जैसे सूर्य पृथ्वी से जल ले कर पृथ्वी पर बरसा देता है, वैसे ही धनी का धर्म है। द्विज राजशक्ति की रक्षा में ही अपना धर्म निबाहता है, इसलिये राजभक्ति द्विज का परम धर्म है।"

गोप ने "साधु ! साधु !" कह कर उत्साह से सौमित्र का समर्थन किया। अगंध और सुवीर दीर्घ निश्वास लेकर चुप हो गये। सौमित्र ने उन्हें आश्वासन दिया—"देवता रूप महारानी के प्रताप और आचार्य महामात्य के न्याय में अन्याय का भय किसे है ? इस शरीर का तो धर्म ही राज्य और बंधुओं की सेवा है।"

सुवीर साहस पाकर बोला—"जेठ्ठक, राज-आज्ञा तो सभी को शिरोधार्य है। राजद्वार से केवल न्याय चाहते हैं। अपने पास सम्पत्ति के नाम जो थोड़ा बहुत है, भूमि और निवास के लिये घर के रूप में ही है। धनी को स्वर्ण सम्पत्ति का दस में से आठ भाग राज्यकोष में देने की आज्ञा है। आप देख लें, राजपुरुष भी देख लें सुवीर के पास स्वर्ण नहीं है। राजस्व के पुरुष भूमि की मिट्टी का मनमाना मोल आंक कर चालीस सहस्र मुद्रा मांगें तो सुवीर क्या करेगा ?"

सौमित्र ने गोप की ओर देख कर उत्तर दिया—"भूमि के ही गर्भ से तो धन और स्वर्ण उत्पन्न होता है। भूमि ही तो धन है, स्वर्ण उस धन का नाम है। स्वर्ण तो धन का प्रतीक है। राजस्व स्वर्ण का नहीं, धन का है।" और फिर सेठ ने अगंध और सुवीर की ओर देखा, "परन्तु राजद्वार से महामात्य के यहाँ न्याय से कौन वंचित रहा है।"

सेठ ने फिर गोप की ओर देखा और कहा—"स्वर्ण से यदि भूमि मिलती है तो भूमि से स्वर्ण भी मिलता ही है।"

सुवीर ने खिन्न स्वर में उत्तर दिया—"तो फिर जेट्ठक मेरी भूमि का एक भाग धरोहर रख लें और इस संकट से मुक्ति दिलायें।"

सौमित्र के मुख पर मुस्कान आ गई। संकोच के स्वर में उस ने उत्तर दिया—"इस घर में जो कुछ है, आज सब से पहले राज्य-सेवा निमित्त है। इस समय चालीस सहस्र धरण कहां है? आते-जाते में यदि बन पड़ेगा तो राज्य-आज्ञा पूर्ण करने के निमित्त सामन्त की सेवा से संतोष ही होगा। कभी सामन्त फिर पूछ देखें।"

सुवीर को उत्तर देकर सौमित्र ने गद्दी पर हथेली टेक कर तकिये से पीठ लगा ली। अनजाने में उस की हथेली से अगंध के कंधे पर पड़े दुपट्टे का छोर दब गया। अगंध, सुवीर और गोप के साथ ही जाने के लिये उठा तो उस का दुपट्टा खिंच गया।

सौमित्र का अनुमान ठीक ही था। चतुर वैश्य अगंध ने सौमित्र का संकेत समझा और कुछ समय पश्चात अकेला सेठ से मिलने आया। सौमित्र ने उसकी प्रतारणा की—"इसी बुद्धि से व्यवसाय करते थे तुम? पहले तुम ने युद्ध की बलि का राजस्व बचाने के लिये पूरे तीन ग्राम की भूमि क्रय कर ली। मानो स्वर्ण को धरती में छिपा देने से राजस्व के पुरुषों की आँखों में धूल डाल दोगे। और फिर बात करने आये तो गोप को साथ ले कर। तुम नहीं जानते वह वैश्य कुल में जन्म लेकर भी ओछा है। वह तो महामात्य का गुप्तचर है। महामात्य की कृपा की आशा में स्थान-स्थान से सूंघ कर महामात्य के यहाँ सच-झूठ लगाना ही उसकी वृत्ति है। हम ने सामन्त सुवीर को इन्कार तो किया नहीं। सामन्त कुल का इतना आदर तो करना ही होगा। उसे फिर अकेले में भेजना।"

सुवीर के फिर आने पर सौमित्र ने उस का और भी अधिक आतिथ्य किया और समझाया—"हमारे तुम्हारे बीच व्यवसाय में दलाल की क्या आवश्यकता? तुम गोप को लेकर आये उस की क्या आवश्यकता थी? माना बहुत नहीं वह चार सौ धरण ही लेता, परन्तु चार सौ धरण की हानि तुम क्यों

सहो। सामन्त का रक्त है न ; इसीलिये वैश्य की भांति नहीं सोच पाते —सौमित्र ने मुस्कराकर कहा —"चार सौ धरण में दो साधारण परिवार एक वर्ष निर्वाह करते हैं सामन्त ! एक स्वस्थ दासी बाजार में मिल सकती है।"

सुवीर ने चालीस सहस्र धरण के ऋण की प्रार्थना की तो सौमित्र ने आश्वासन दिया—"कठिन है परन्तु यत्न करने से हो भी सकता है।" सौमित्र ने चालीस सहस्र धरण के ऋण में निस्संकोच सुवीर की सम्पूर्ण भौमिक सम्पत्ति धरोहर रखने, ऋण काल में भूमि की आय का आधा भाग लेते रहने और चक्रवृद्धि ब्याज मिला कर साठ सहस्र धरण के ऋण का ताड़-पत्र लिख देने की शर्त सुना दी।"

सुवीर की आँखें विस्मय से खुली ही रह गईं। उसने अधीर स्वर में प्रश्न किया—"यह भी क्या मेरी सहायता है ? लाख धरण के मूल्य की भूमि चालीस सहस्र धरण में ? इसका तो अर्थ है, भूमि को तुम्हें संकल्प कर के राजस्व का ऋण पूरा कर दूं। अगंध ने किस संकट में फंसा दिया मुझे ?"

सौमित्र ने सुवीर की अधीरता की ओर लक्ष न कर उत्तर दिया—"इस समय कलिंग में भूमि की धरोहर पर ऋण देना गरजते मेघों के नीचे बड़ियां सूखने रखने के समान है। आज भूमि का मूल्य क्या है ? युद्ध का परिणाम क्या होगा, कौन जानता है ? चार-छः मास पश्चात यह भूमि हमारी-तुम्हारी होगी या चंड अशोक के किसी सामन्त की ? तब सौमित्र सुवीर से क्या ले लेगा ?" सौमित्र बोलता गया, "सामन्त जानते हो, व्यवसाय में तो हानि-लाभ का ही विचार रखा जाता है। मैं लोभ से नहीं कह रहा हूं। लोभ क्या करूंगा ? यह सब युद्ध के अंत में जाने किस का होगा ? पर व्यवसाय तो व्यवसायक रीति से ही किया जाता है ?"

सुवीर ने फिर अनुनय के स्वर में कहा—"सेट्ठियों के जेट्ठक की दानशीलता और उदारता की कीर्ति है। इस समय व्यवसाय के लिये ऋण नहीं मांग रहा हूं। संकट में सहायता मांग रहा हूं। आप की छाया में राज्य-कोप से त्राण चाहता हूं।"

सौमित्र ने कुछ उपेक्षा से उत्तर दिया—"मुझे ब्याज का लोभ नहीं है परन्तु ऋण होगा तो ब्याज भी होगा ही जैसे प्रकाश के साथ छाया भी चलती है। सामन्त व्यवसाय की बात न कर सहायता या सुझाव की बात

करें तो कहूंगा, राज्य-कोप से बचने के लिये ऋण लेना आवश्यक ही क्यों है ?''''''''सोचिये, उपाय मिल ही जायगा।"

सुवीर उत्साह से बोला—"इतनी बुद्धि अपने में कहाँ ? ऐसी सहायता के ही लिये ही तो सेट्ठियों के अग्रणी के यहाँ आया हूं। सेट्ठी उपाय बता कर सहायता करें।"

सौमित्र ने सेवक की ओर देखा। सेवक ने मद्य का एक और चषक सुवीर के सम्मुख रख दिया। इच्छा न होने पर भी सेठ के प्रति विनय प्रकट करने के लिये सुवीर ने पात्र को उठा कर पी लिया और आशा से सेठ की ओर देखने लगा। सेठ ने गर्दन सुवीर की ओर झुका कर धीमे स्वर में सुझाया:— "धर्म-कार्य के लिये संकलिपत सम्पत्ति पर युद्ध के राजस्व का निषेध है। आप अपनी सम्पूर्ण भू-सम्पत्ति को महाबोधि विहार या अन्य देव-स्थान के नाम संकल्प कर दें तो राजस्व के राजपुरुष सामन्त से क्या छीन लेंगे ?"

सुवीर को सौमित्र की बात से चोट-सी लगी। उस ने आहत विस्मय से पूछा—"क्या सम्पूर्ण भू-सम्पत्ति देव-स्थान अथवा संघाराम को संकल्प कर दूं ? सेट्ठी मेरी रक्षा का उपाय बता रहे हैं ? आप का प्रयोजन है, राजस्व के चालीस सहस्र न देने के लिये सर्वस्व स्वाहा कर दूं ?"

सौमित्र ने सुवीर की ओर अधिक झुककर आश्वासन दिया—"सेट्ठी सर्वस्व स्वाहा करने का सुझाव नहीं दे सकता। भू-सम्पत्ति संकल्प कर देने की विधि क्या बताई है मैंने ? सामन्त ध्यान से सुनें, ग्राम और भू-सम्मति महाबोधि विहार अथवा देवस्थान के निमित्त संकल्प करें और सामन्त जीवनकाल के लिये और सामन्त के पश्चात उन का वंश देवस्थान की ओर से उस सम्पत्ति के प्रबन्धक अथवा कर्मान्तधिष्टायक नियुक्त हों। कर्मान्तधिष्टायक निर्वाह-मात्र के लिए धन रख कर शेष लाभ देवता को अर्पण करे। सामन्त समझे ? सम्पत्ति से लाभ क्या होगा, यह तो सामन्त ही गणना करेंगे। तब सामन्त की सम्पत्ति का रक्षक राज्य नहीं देवता होगा। इतना ही तो अन्तर होगा।''''''''हाँ, तब देवता का प्रभाव भी सामन्त की सम्पत्ति का रक्षक होगा। सामन्त देवता के नाम से, देवता का प्रतिनिधि बन कर अपनी सम्पत्ति का स्वामी होगा।"

सामन्त सुवीर सौमित्र की चतुरता से चकित हो कुछ पल मौन रह सेठ की ओर देखता रहा। वह मन ही मन तौल रहा था, क्या यह सम्भव हो सकेगा ? अविश्वास से उसने शंका की—"क्या राजस्य के पुरुष और महामात्य इस में आपत्ति नहीं करेंगे ?"

सौमित्र ने अपने सिर के श्वेत और काले, मिले-जुले केशों में उँगलियाँ चलाते हुए स्वीकार किया—"करेंगे ही। वे तो सभी धर्म-कार्यों में आपत्ति करेंगे। परन्तु महारानी की आज्ञा तो धर्म के निमित्त संकल्पित सम्पति को युद्ध के लिए आयत्त न करने की ही है।"

सुवीर विह्वल होकर बोल उठा—"अब राजमाता महारानी कहाँ हैं ? वे तो तीर्थ तप करने के लिए राज्य से दूर हैं और राजेश्वरी पुतली से खेलती होंगी।"

सेठ ने चारों ओर देखा और धीमे स्वर में उत्तर दिया—"समर्थ लोगों की लीला समर्थ लोग ही जानते हैं। राजमाता आधी रात में तीर्थ-यात्रा के लिये गईं। लोग ऐसा भी कहते हैं, राजमाता युद्ध की हिंसा से क्षुब्ध हैं, उन्हें राज-प्रासाद और राज्याडम्बर से विरक्ति है इसलिए कहीं नगर में ही एकान्तवास कर तप कर रही हैं। परन्तु उन्हें प्रजा और नगर की अवस्था का क्या ज्ञान ? यदि समर्थ आचार्य लोग और सामन्त लोग महारानी के दर्शन कर प्रजा की अवस्था उन से कहें.......सामन्त, कुछ करने-कहने से ही तो होता है। हाथ ढील कर बैठ जाने से तो कुछ नहीं होता।"

सुवीर दोनों हाथों की ऊंगलियों आपस में फंसाये अनेक पल तक शून्य दृष्टि से भीत की ओर देखता रहा। और फिर बोला—"आचार्य को देव-सम्पत्ति राज्य आयत्त करने में भय होगा ?"

सौमित्र बोला—"प्रजा तो जानेगी की आचार्य देव-सम्पत्ति का भी आदर नहीं करता। किसान खेत में बांस के टुकड़ों को वस्त्र पहना कर और हांडी का सिर बना कर खड़ा कर देता है। उसका भी कुछ प्रभाव होता ही है। आचार्य देव-सम्पत्ति को हरण के पाप का भागी तो होगा। असहाय कुछ नहीं कर पाता तो देवता की शरण तो लेता ही है।"

सुवीर ने विचार कर कहा—"सामन्त जयन्त से बात करुंगा और अपनी भार्या के मामा से भी पूछ देखूं। फिर आकर जेठ्ठक से विचार करुंगा।"

सौमित्र ने समर्थन किया—"यही उचित है। चार समझदारों की अनुमति से चलना चाहिए ऐसा ही महाजनों ने भी कहा है।"

यही सौमित्र चाहता भी था कि सामन्त लोगों में भी महामात्य के अन्याय और महारानी के पुनः लौटाये जाने की बात उठे।

× ×

## दासी की बुद्धि

राजप्रासाद के द्वार पर प्रहरी ने रात्रि का पहला पहर समाप्त हो जाने की टंकोर गजर पर दे दी थी। महारानी को पलंग पर लिटा दिया गया था परन्तु अभी उसे नींद नहीं आई थी। बालिका को शयन-कक्ष में जाकर निद्रा आने से पहले मां से आशीर्वाद पाने का अभ्यास था। वह पलंग पर लेटी वापी से रोचक कथा सुनती हुई माँ के चरणों की आहट की प्रतीक्षा किया करती थी। राजमाता के तीर्थ-यात्रा के लिए चले जाने के पश्चात अमिता की दादी अपने कक्ष से आकर पोती को आशीर्वाद दे जाती थीं। दादी बालिका को बहलाने के लिए कुछ समय उस के पलंग पर बैठी भी रहतीं परन्तु स्वयं थकान और विश्राम की इच्छा अनुभव होने पर बालिका को निद्रागत करने का भार वापी और हिता पर छोड़ कर अपने कक्ष की ओर चली जातीं।

शयन-कक्ष के चा ों कोनों में ऊँचे दीवारों पर रखे बड़े दीपक बुझा दिये गए थे। केवल महारानी के सिरहाने फर्श पर एक दीपक, पात्र से ढका हुआ जल रहा था। कक्ष के फर्श पर केवल ठोकर से बचाने योग्य ही प्रकाश था। कक्ष के अलिंद में बैठे दो बन्दी वीणा और मृदंग पर मंद स्वर में कोई लय बजा कर, निद्रा के लिए महारानी का ध्यान केन्द्रित करने का यत्न कर रहे थे। वापी पलंग के दाहिनी ओर फर्श पर बैठी नागदेश की राजकुमारी की खोज में जाने वाले राजकुमार की रोमांचक कहानी रहस्य के धीमे स्वर

में सुना रही थी। पलंग की बांई पाटी के साथ फर्श पर बैठी हिता अमिता की ओर से हुंकारा भरती जा रही थी। वापी और हिता दोनों की ही दृष्टि बालिका की झुकती जाती पलकों की ओर थी। हिता एक हाथ से अमिता के शरीर को सहला रही थी और उस की दूसरी बांह बालिका के सिर के नीचे रेशम के तकिये के ऊपर फैली थी। हिता की बांह का स्पर्श अमिता के लिए रेशम के कोमल तकिये की अपेक्षा भी अधिक सान्त्वना-दायक था।

अमिता की आँखें मुंद गईं और श्वास निद्रा की समगति से चलता देख कर वापी ने द्वार पर खड़े प्रहरी को संकेत कर दिया। प्रहरी से संकेत पा कर बन्दियों ने संगीत समाप्त कर दिया। हिता महारानी को करवट दिला कर अपनी बाँह निकाल लेने का उपाय कर रही थी। अमिता ने सहसा पलकें उघाड़ दीं और बोल उठी --"हितू, सेठ काका ने कहा था, आचार्य काका अम्मा को शीघ्र बुला देंगे।"

"हाँ, अम्मे महारानी।"—हिता ने अनुमोदन किया।

"हम आचार्य काका के यहाँ जायंगे। आचार्य काका से कहेंगे अम्मा को शीघ्र बुला दें।"—अमिता ने कहा।

"हां, अम्मे महारानी।"—हिता ने अमिता की पीठ सहला कर आश्वासन दिया, "अभी राजपथ पर अन्धकार है। अभी महारानी सो जायें। कल सूर्य के प्रकाश में आचार्य काका को बुलवा लेंगी। अभी महारानी विश्राम करें।"

अलिंद से फिर वीणा और मृदंग की मधुर, मन्द लय सुनाई देने लगी।

अमिता ने आग्रह किया—"नहीं, हम स्वयं आचार्य काका की ड्योढ़ी पर जायेंगे। हमारी अम्मा नहीं है। हम सखी लेखा की अम्मा से मिलेंगे।"

"हाँ, महारानी।"—अमिता को शाँत कराने के लिए हिता ने स्वीकार कर लिया और उसकी पीठ पर थपकी देने लगी। कुछ क्षण में अमिता की पलकें फिर मुंद गईं। बालिका के गहरी नींद में सो जाने पर पहले हिता उठी और उस ने अमिता के पलंग के समीप ही फर्श पर एक कथरी बिछा दी और उस पर लेट गई।

वापी और हिता महारानी के पलंग के समीप ही सोती थीं। नींद में भी दोनों एक आंख और एक कान से सतर्क रहतीं। अमिता के स्वप्न में

बड़बड़ा देने या करवट लेने के शब्द से भी वे चौंक कर एक बार उस की ओर देख लेतीं। कुछ क्षण पश्चात वापी भी पलंग की पाटी छोड़ कर बेटी के साथ कथरी पर आ लेटी।

वापी मध्यान्ह से ही चिंतित थी। उसे बेटी कुछ अनमनी और व्याकुल-सी जान पड़ रही थी। हिता के अनमनी और व्याकुल होने का कारण अनुमान कर लेना माँ के लिए कठिन नहीं था। हिता को व्याकुल और अनमनी देख वापी को यही आशंका होती कि लड़की कलाकार दास से मिलने के लिए नगर में जाने का बहाना ढूंढ़ रही है। यह फिर अपने आप को संकट में डालेगी। बेटी की ऐसी व्याकुलता से वापी को क्रोध ही आया। मन चाहा ऐसी उच्छृंखल लड़की से न बोले। परन्तु पेट की लड़की की व्याकुलता की उपेक्षा कैसे कर जाती। यह भी शंका हुई कि उसके शरीर में पीड़ा न हो। दो बार एकान्त देख कर वह पूछने को हुई तो कोई आ गया या उसे किसी ने पुकार लिया।

वापी ने कथरी पर बेटी के साथ लेट मुख से कुछ बोले बिना उस का शरीर छू कर देखा। शरीर कुछ गरम जान पड़ा। वापी से रहा न गया। उस ने हिता के कान से मुख लगा कर पूछा—"क्या हुआ है तुझे? शरीर तो ठीक है?"

हिता के निश्चल मौन रह जाने पर वापी ने उसे अपनी ओर खींच कर फिर आग्रह से पूछा—"क्यों, क्या कुछ पीड़ा है?"

हिता मौन ही रही परन्तु अपने कंचुक-वस्त्र से कंगन निकाल कर उस ने मां के हाथ में दे दिया। वापी ने हाथ में पायी वस्तु को ओढ़े हुए कपड़े से बाहर निकाल कर ढंके हुए दीपक के धुंधले प्रकाश में देखा। उस के होंठ विस्मय से खुले रह गये। एक गहरे श्वास से अपने आप को सम्भाल कर उस ने होठों के शब्द से प्रश्न किया—"यह कहाँ से पाया? पाया था तो तुरंत कंचुकी मामा को क्यों नहीं सौंप दिया? मर जाय तू, चोरी के अपराध में शरीर की खाल खिचवायेगी।...तू क्या करेगी इस का?... तूने इसे उठाया ही क्यों?...सोता हुआ सांप हाथ में उठा लिया तूने! अब इसे फेंकेगी तब भी इस की चोट से नहीं बच सकेगी...." वापी व्याकुलता में कहती चली गई।

हिता ने कंठ में इकट्ठा हो गया अवरोध निगल कर कहा—"नगर सेट्ठी दे गये हैं।"

"मर गई तू"—क्रोध में वापी बोली, "सेट्ठी महारानी को भेंट दे कर गया था तो तूने उसी समय कंचुकी मामा को पुकार कर इसे यूथप के यहाँ कोष में क्यों नहीं भिजवा दिया ? तू मरेगी और मुझे भी मारेगी ! इस जीवित सर्प को हृदय पर रख तू कैसे बचेगी·······।"

हिता ने मां के मुख पर हाथ रख उसे चुप करा कर उत्तर दिया—"सेट्ठी ने अपने हाथ से मुझे ही दिया है। सेट्ठी कहता था, मेरी राजसेवा धन्य है। यह मेरी राजसेवा का पुरस्कार है।"

वापी कुछ पल बेटी की ओर ध्यान से देखती रह गयी और आतंक के स्वर में बोली—"जाने तेरे भाग्य में क्या है ? सेट्ठी के मन में ऐसी बात है तो उस ने यह तुझे क्यों दिया। तेरा मूल्य देना था तो सामन्त यूथप को देता। सेट्ठी नहीं जानता, राजप्रसाद के दास-दासी बिकते नहीं। राजाओं के योग्य भेंट दासियों को नहीं दी जाती। सेट्ठी जानता है तू सोना पहन नहीं सकती। इतना धन पहन कर पालकी और रथ के बिना कोई कहीं जा सकता है ? सेट्ठी की क्या इच्छा है ?······ सेट्ठी तेरा सर्वनाश क्यों कर रहा है ?"

हिता कुछ क्षण चुप रह कर बोली—"अभी जा कर इसे कुएं में डाल दूं ?"

वापी ने कंगन को हृदय पर दबा कर उत्तर दिया—"यह दो दासों, चार दासों के मूल्य से अधिक धन है।····जाने विधाता की क्या इच्छा है ?"

हिता ने उत्तर दिया—"सेट्ठी कहता था, भगवान ने जिसे राजेश्वरी का विश्वास-पात्र बनाया है, विधाता जाने उस का भाग्य क्या हो ?"

वापी ने शंका से पूछा—"सेट्ठी ऐसा कहता था ? वह क्या चाहता है ? सेट्ठी के पास अपार धन है परन्तु राजप्रासाद के दास खरीदे नहीं जा सकते ? जाने तेरे भाग्य में क्या है ? देख, सम्भल कर रहना। कोई दुस्साहस न कर बैठना। हाय, जाने हमारे भाग्य में क्या है !"

दूसरे दिन हिता महारानी के शैया से उठने से पहले से ही गहरे विचार में डूबी और खोई-खोई-सी जान पड़ रही थी। अमिता को कलेवा करवा कर खेल खिलाने के लिये वह सभा-भवन में ही ले आई। अमिता गुड़िया के ब्याह का खेल खेलना चाहती थी। हिता ने श्वेत मिट्टी के चेहरे वाली पुतली का विवाह रचाने की सूझ दी और नई पुतली बालिका की गोद में थमा दी।

सहसा अन्यमनस्क हिता से ऐसी चूक हो गई जैसी पहले कभी नहीं हुई थी। सदा सुघड़, सावधान हिता के हाथों से महारानी की बांह को झटका लग गया और नयी पुतली अमिता के हाथों से पत्थर के फर्श पर गिर कर चूर-चूर हो गई। अमिता के होंठ रुलाई के आवेग में फैल गये।

हिता ने तुरंत महारानी को गोद में उठा कर कंठ से लगा लिया और आश्वासन दिया—"अम्मे महारानी, चिंता न करें। दासी तुरन्त बिठ्ठल के यहां से इस से भी सुन्दर पुतली लेकर आती है।"

समीप खड़ी वापी देख रही थी और बेटी के साहस के कारण भय की आशंका से उसका हृदय मुंह को आ रहा था। वह आंखों ही आंखों में चेतावनी देने के लिये बेटी की ओर देख रही थी। हिता ने मां की दृष्टि को अनदेखा कर उतावली से सम्बोधन किया—"मां, भगवती महारानी को देखना मैं तुरंत महारानी के लिये नयी पुतली ले कर आती हूं।"

हिता मां को कुछ कहने का अवसर न देकर झपटती हुई कंचुकी उद्दाल की खोज में चली गई।

नगर की विचित्र-सी अवस्था हो रही थी। अन्न और वस्त्र महंगे हो गये थे। कुलीन लोग अपना उदात्त वसन ढंग (सफेदपोशी) निबाहने में कठिनाई अनुभव कर रहे थे। परम्परागत और पहले से क्रीतदासों को छोड़ कर सेवा के लिये सेवक नहीं मिल रहे थे। जौहरी और उत्तम वस्त्र बेचने वाले व्यापारी हाथ पर हाथ धरे बैठे थे परन्तु बाजारों में घूमने वालों की भीड़ बढ़ गई थी। भुन्ने हुए अन्न, मद्य, मिष्ठान्न, फूल-मालायें बेचने वालों की संख्या बढ़ गई थी। नगर के चारों ओर शिविरों में, प्रांत-प्रांत से एकत्र हुए सैनिक नगर क्षेत्र की ओर जाने से पहले कुछ समय नगर में खूब मनोविनोद कर लेना चाहते थे। अपरिचितों के सामने उन्हें किसी प्रकार का संकोच न

था। उन्हें अपने प्राणों की परवाह न थी तो अपने बोल-चाल अथवा व्यवहार की क्या परवाह होती ! इन लोगों की उच्छृंखलता और व्यवहार का प्रभाव साधारण नागरिकों पर भी पड़ रहा था।

मोद महाबलि-यज्ञ के लिये तोरण बनाने के पश्चात महारानी के राज्याभिषेक के उत्सव के लिये तोरण बनाने में लग गया था। राज्याभिषेक तोरण गिरने से पहले ही उसे विठ्ठल ने विजय-अभियान समारोह के लिये तोरण बनाने का, नगरपाल का आदेश दे दिया। वह भी समाप्त हुआ तो विठ्ठल ने उसे वैशाली की नर्तकी की पालकी बनाने में जुटा दिया था परन्तु उस काम में मोद का मन न लगता था। राजप्रासाद में जा कर धातु-पात्र के मंदिर को बनाने और हिता के समीप रहने की आशा पूर्ति की कोई सम्भावना नहीं रही थी। नित्य नगर के बाजारों और पथों पर सहस्रों सशस्त्र व्यक्तियों को अभिमान से घूमते देख कर और व्यवसायी समुदाय में गुप-चुप चलती भय की बातें सुन कर उसका मन चाहता था कि वह भी सैनिक-वेश सज कर दासत्व से मुक्त हो जाये। नगर और जन-समूह के लिये भय की आशंका का सामना शस्त्र ले कर साहस से करे। परन्तु जब भी वह मौसी द्वारा संदेश पा कर, उस की विजया की दुकान में जाता, हिता आंखों में आंसू भर कर अपनी शपथ दिला देती, नहीं तू प्रतीक्षा कर, महारानी लौटेंगी और महास्थविर की चमत्कार-शक्ति से मगध का चंड राजा क्षय हो जायगा। मोद मन की क्षुब्ध अवस्था में निश्चय नहीं कर पा रहा था, क्या करे ?

अनुभवी बिठ्ठल चारों ओर की अवस्था का प्रभाव मोद के मन पर भी अनुभव कर रहा था। यों भी वह सदा अपने चतुर कलाकार, बंधक सेवक अथवा दास को संतुष्ट और प्रसन्न रखने का ध्यान रखता। उसे नागरिकों जैसे वस्त्र पहनने के लिये और कुछ कार्षापण मद्य आदि के लिये देता रहता था। अब वह कुछ और अधिक स्नेह दिखा कर कुछ अधिक कार्षापण दे रहा था। मोद को अपने स्वामी के व्यवहार से विरक्ति ही अनुभव होती थी। वह उस के कर्मान्त में बैठा पालकी पर खुट-खुट हथियार चला रहा था। कर्मान्त के द्वार की ओर से आहट पा कर उसने समझा कि स्वामी देखने आया है कि वह काम कर रहा है या नहीं। काम में व्यस्तता दिखाने के लिये उस का सिर और भी अधिक झुक गया।

"सुनो तो !"—सुन कर मोद ने सहसा सिर उठाया और देखा सामने हिता कंचुकी पालित के साथ खड़ी थी। हिता की व्यग्रता पहली ही दृष्टि में उस ने देख ली। हिता बोल उठी—"महारानी की पुतली टूट गई है। महारानी बहुत व्याकुल है।"

हिता विट्ठल के यहाँ सदा पुतली लेने ही आती थी, यह सभी जानते थे परन्तु वह व्याकुल जान पड़ रही थी। पुतली मौसी की दुकान पर ले आने का संदेश न भेज कर वह स्वयं इतनी दूर क्यों दौड़ी आई? वह सोच रहा था परन्तु उस ने उत्तर दिया—"परमभगवती के लिये पुतलियों की क्या कमी है। बैठ कर सांस तो लो। दौड़ कर आई जान पड़ती हो। राजप्रासाद के लोगों के सत्कार का अवसर प्रजा को कब मिलता है?" कमर पर धोती की अंटी से कुछ कार्षापण निकाल कर वह कंचुकी की ओर देख कर बोला—"कंचुकी मामा के पीने के लिए एक पात्र तो ले आऊं या मामा स्वयं.......।"

कंचुकी पालित मोद की उदारता से परिचित था। हिता कंचुकी पालित या यवनी लिहा को ही रक्षा के लिए लेकर आती थी। पालित ने बात समाप्त होने की प्रतीक्षा न कर हंसी में टूटे हुए दाँत निकाल कर कार्षापण के लिए हाथ बढ़ा दिया। मोदक ने उस के हाथ पर मद्य के बड़े पात्र का मूल्य चार-छः कार्षापण रख दिये। पालित हाथ में दाम पाते ही मोद को सम्बोधन कर, सम्पन्न, स्वामी नागरिकों के योग्य अक्षय सुख और वैभव का आशीर्वाद देता हुआ समीप की मद्य की दुकान की खोज में चला गया।

एकान्त पाते ही मोद ने स्नेह स्वागत में बाहें फैलाकर पूछा—"ऐसी विह्वल क्यों हो? मौसी से संदेश भेज दिया होता। इतनी दूर........"

हिता ने दो कदम समीप आकर उसके कंधे पर सिर रख बाहें गले में डाल दीं। मोद ने उसे अधीर गूढ़ आलिंगन में बाँध लिया। कंचुकी में रखा रत्न-जटित कड़ा हिता के वक्ष के बीच गड़ा जा रहा था। वह पीड़ा भी उस के आलिंगन को शिथिल न कर सकी। कंगन की गड़न आलिंगन के सुख को और भी गहरा बनाये दे रही थी।

हिता ने साँस लेने के लिए अपनी बाहों को शिथिल किया और हाथ मोद के कंधे पर रख कर बोली—"सुनो!" और अपने कंचुक से कंगन निकाल कर मोद के हाथ में दे दिया।

ढ़ाई-तीन सहस्त्र धरण से अधिक मूल्य का रत्न-जटित कंगन देख कर मोद के नेत्र विस्मय से फैल गये। हिता के नेत्रों में आंखें डाल कर उसने पूछा—"यह क्या ?" इतना धन तो राजप्रासाद की दासी के लिए भी कहीं पड़ा पा जाना सम्भव न था। इस धन के कारण हिता पर आ सकने वाली विपदा की चिंता से उसने फिर प्रश्न किया—"यह क्या, कहाँ से, कैसे ?"

"तुम्हारे अदास हो जाने का, तुम्हारी मुक्ति का मोल !"—आवेश के कारण द्रुत चलते हुए श्वास से हिता ने रुकते हुए उत्तर दिया।

भय और चिंता के कारण मोद की उत्तेजना शिथिल हो गई थी। उस ने पूछा—"पर पाया कहाँ ?" पल भर सोच कर वह कहता गया, "राजप्रासाद में पड़ा हुआ भी पाया है तो प्रासाद का ही तो होगा। दास द्वारा पाया गया धन भी तो स्वामी का ही होता है। तूने अपने पास रखा ही क्यों ?"

हिता मौन रह गई। उसे मौन देख कर मोद ने अनुमान किया—हिता मेरे स्नेह में विवेक-शून्य हो कर मेरी मुक्ति के लिए यह धन प्रासाद से चुरा लाई है। सम्भव है अधीर होकर यह कंगन लेकर मुझे साथ भगा ले जाने का अनुरोध करने आई हो। ऐसा साहस करूं भी तो क्या सफल हो सकेगा ?

मोद सोच ही रहा था कि हिता पूछ बैठी—"यह कंगन तुम्हें दे जाऊं तो क्या यह बिट्ठल की सम्पत्ति हो जायगा ?"

"यही तो नियम है"—मेरा बन्धक तो अवधि समाप्त होने पर अथवा मुझे बंधक रखने वाले को अवधि का पूरा ब्याज दे देने पर ही छूट सकता है। दास न अपना मूल्य ले सकता है, न अपना मूल्य दे सकता है।"

हिता तत्परता के लिए दीर्घ निश्वास लेकर बोली—"सुनो, कंगन मुझे सेठी सौमित्र ने राजभक्ति के पुरस्कार में दिया है। कंचुकी लौटेगा तो तुम उसे कुछ समय बहलाये रखना। मैं सेठी सौमित्र के यहाँ जाऊंगी। मैं कंगन सेठी को लौटाकर सेठी से प्रार्थना करुंगी कि इस के बदले तुम्हारा मूल्य बिट्ठल को दे कर तुम्हें अदास करा दे।"

मोद मुग्ध हो विस्मय से हिता की ओर देख रहा था। जाने के लिये उसे कदम उठाते देख मोद ने चेतावनी दी""सावधान रहना, लोग कहते

हैं, नगर सेठ्ठी की नीति और अभिप्राय भाग्य की रेखा पढ़ने वाले भी नहीं जान सकते। जो धन तुम ग्रहण नहीं कर सकती, वह उस ने तुम्हें क्यों दिया होगा ?"

"नहीं, तुम निश्चिन्त रहना"—हिता मोद को धैर्य बंधा कर उस के कर्मान्त से चली गई।

हिता अधिक विलम्ब न करने की चिंता के कारण नगर की गलियों और मार्गों पर प्रायः दौड़ती हुई सेठ की हवेल में पहुंची। दिन का तीसरा पहर श्रीमानों के विश्राम का समय होता है परन्तु कलिंग पर आई हुई विपत्ति के कारण सेठ को और उसके कारिन्दों को विश्राम कहाँ था। दिन के पहले, दूसरे पहर में व्यवसाय के प्रयोजन से आये हुये अनेक लोग अभी तक अवसर के लिये प्रतीक्षा कर रहे थे और कुछ लोग विश्राम के समय कार्य सुविधा से और शीघ्र हो जाने की आशा में उस समय भी आ गये थे। बाहर के बड़े कक्ष में दायें-बायें लगी गद्दियों पर खूब भीड़ थी। व्यवसाय की बात-चीत के मरमर कोलाहल से कक्ष गूंज रहा था। सामने बीच में बड़ी गद्दी पर केवल तकिये पड़े थे।

हिता ने कक्ष में आ कर भीड़ को देखा और सामने की गद्दी सूनी देख कर अनुमान किया, सेठ भीतर के किसी कक्ष में व्यस्त है या विश्राम कर रहा है। उस की ओर किसी ने ध्यान न दिया। कमर में पट्टा बांधे, हाथ में खड्ग लिये द्वार पर खड़े प्रहरियों ने भी उस की ओर ध्यान न दिया था। हिता ने स्वयं ही प्रहरी को सम्बोधन किया—"नगर सेठ्ठी कहाँ है ? मैं नगर सेठ्ठी का दर्शन करना चाहती हूं।"

प्रहरी ने अपनी अधपकी, गिलहरी की पूँछ की तरह लटकती लम्बी मूंछों को सहला कर और मुख में भरी सुपारी के कारण विकृत स्वर में अवज्ञा से उत्तर दिया—"नगर ठ्ठी से तुझे क्या काम है ? तुझे जो कुछ लेना-देना हो वहां जा !" प्रहरी ने भित्तियों के साथ ऊंचे मंचों पर बैठे कारिन्दों की ओर संकेत कर दिया।

हिता ने आग्रह किया—"लेना-देना नहीं है। राजप्रासाद की दासी हूं।" उस ने अपने दासत्व का गर्व दिखाया, "मेरा नाम हिता……"

हिता को बात पूरी भी न करनी पड़ी। प्रहरी के चेहरे पर आदर और आतंक का भाव छा गया और उसके हाथ अंजली में बंध गये। नगर के लोगों ने महारानी की शोभा-यात्रा के समय, उन के हाथी पर उनकी चँवरधारिणी दासी को देखा ही था। प्रहरी आदर से सिर झुका कर तुरन्त भीतर समाचार भेजने चला गया।

सौमित्र जानता ही था कि वह हिता को जो कंगन दे आया है, वह एक दिन दासी को उस की हवेली तक खींच ही लायेगा। फल इतना शीघ्र होने से भी उसे कुछ विस्मय न हुआ। उस ने हिता को भीतर बुलवा लिया। राजेश्वरी की दासी का संवाद एकान्त में सुन पाने के लिये समीप खड़े दास और समीप बैठे लेखक को भी उस ने हट जाने का संकेत कर दिया। सेठ स्वयं अपनी गद्दी के किनारे खिसक आया और राजदासी को गद्दी के समीप काठ के तख्त पर बैठा कर आदर से उस की ओर झुक गया।

हिता ने प्रार्थना की—"कृपालु स्वामी रत्न-जटित कंगन लौटा लें और उस के मूल्य में जेठुक विट्ठल के बंधक कलाकार मोद को बंधक-मुक्त करा दें तो दासी अनुगृहीत हो।

सेठ ने हथेली पर कनपटी टेक विचार-पूर्ण मुद्रा में सहानुभूति से हिता की बात सुन कर और सहायता करने की इच्छा प्रकट करने के लिये पूछा— "बिट्ठल ने कितने वर्ष पूर्व, कितने धन में, कितने वर्ष के लिये मोद को बंधक रखा था? बिट्ठल मोद से कैसा व्यवहार करता है? मोद बंधक मुक्त हो जाने पर शूरसेन क्यों नहीं लौट जायगा? यदि नहीं लौट जायगा तो भी हिता तो राजप्रासाद की दासी है, वह प्रासाद में बंधी ही रहेगी?"

हिता ने आंसू पोंछते हुए महारानी के उसे वरदान देने की प्रतिज्ञा सेठ को बता कर अपनी आशा की बात बतायी।

सेठ ने गहरी गम्भीरता से सब कुछ सुन कर सहानुभूति से समझाया— "तुम्हारी राजसेवा के लिये कंगन का मूल्य या उस से अधिक भी दे देना कठिन नहीं है परन्तु बिट्ठल क्या ले कर मोद को बंधक-मुक्त करेगा, यह तो बिट्ठल ही जानता है, वह कम लोभी नहीं है? शूरसेन के सेठ्ठी ने कठिनाई में चार-सहस्र धरण ले कर ऐसे कलाकार को बंधक दे दिया परन्तु मोद

से लाभ उठाने का समय तो बिट्ठल के लिये अब ही आया है ? मोद क्या जीवन में आठ-दस मूर्तियाँ ही गढ़ेगा ? दास-दासी का मूल्य मांस के लिये पशु की भांति शरीर के तौल से निश्चय नही किया जाता। दाम का मूल्य तो उसकी श्रम कर सकने की शक्ति या उस के कौशल और चातुर्य मे लाभ की सम्भावना से ही निश्चय किया जाता है। यदि मोद का हाथ कट जाये या वह उन्मत्त हो जाये तो बिट्ठल उसे एक सौ धरण ले कर भी हांक दे····।"

सेठ बात बदल कर बोला—"तुम्हारे संतोष के लिये यदि मैं मोद को बंधक मुक्त कराने के लिये बिट्ठल का मुंह-मांगा धन भी दे दूं तो लाभ क्या ? उस के अदास होते ही आचार्य के राजपुरुष उसे सैनिक सेवा के लिये धर लेंगे। उन से कौन बच सकता है ? स्वयं महारानी उन के हाथों में छटपटा रही हैं। कल-कैसे विह्वल हो कर माता को स्मरण कर रही थीं महारानी····"—सेठ ने अपने कंधे पर पड़े दुपट्टे से नेत्र ढक लिये।

हिता ने चिंता प्रकट की—"आचार्य काका तो कहते थे, राजमाता शीघ्र ही तीर्थ-यात्रा से लौटेंगी।"

सेठ ने हिता की ओर झुक कर रहस्य के स्वर में समझाया—"बालिका महारानी को और कैसे बहलाया जायगा ? राजमाता को आचार्य शीघ्र क्यों बुलायेंगे ? तब उन का शासन कैसे चलेगा ?······ ब्राह्मण की कूट-नीति को लोग समझ नहीं सकते। सुना नहीं तुम ने, मगध के राजा नन्द के ब्राह्मण मंत्री ने उस का सिंहासन छीन कर शूद्र को राजा बना दिया था। ब्राह्मण त्याग का आडम्बर करता है परन्तु वह इस लोक और परलोक का भी शासन अपने ही हाथ में रखा चाहता है। धन के मद से शासन का मद अधिक बड़ा है। बेचारी पुतली से खेलने वाली बालिका महारानी की क्या सामर्थ्य है।··· हृदय कांप जाता है सोच कर, क्या होगा ? बालिका महारानी तो हठ से आज्ञा भी नहीं दे सकतीं ? इस समय तो केवल देवता की कृपा ही रक्षा कर सकती है। हां, यदि महारानी हठ कर बैठें तो महामात्य उन्हें कैसे चुप करा लेगा ? महारानी को तो तुम्ही मौन बनाये हो·······?

सेठ ने प्रसंग बदला—"अवसर आने पर हम से जो बनेगा तुम्हारे लिये करेंगे परन्तु तुम्हारे अदासी हुए बिना कुछ लाभ नहीं ? मोद को भी राज-आज्ञा ही मुक्त कर सकती है।"

हिता ने अधीर हो कर अंजली बांध प्रार्थना की—"स्वमी उपाय बतायें !"

सेठ ने धीमे परन्तु दृढ़ स्वर में कहा—"राजमाता के लौटने के दिन ही मोद बंधक-मुक्त हो और राजमाता तुझे अदासी करें !"

हिता सिर झुका कर बोली—"स्वामी वचन दें।"

सेठ ने आश्वासन दिया—"निश्चय ! उस से पहले लाभ ही क्या है ? बेचारे सुन्दर, स्वरूप युवक को मृत्यु की आग में धकेल देने से लाभ ही क्या ? देवता उस पाप से रक्षा करें।"

हिता ने स्वर्ण का रत्न-जटित कंगन सेठ को धरोहर के रूप में सौंप दिया और जाने की आज्ञा उठ कर मांगी। सेठ भी गद्दी पर उठ कर खड़ा हो गया।

सेठ ताम्बूल-वाहक को पुकार कर हिता से बोला—'राजसेविका क्या नगर-सेठ के यहाँ से ऐसे ही चली जायगी ?"

हिता के दासी होने के कारण सेठ उसे ताम्बूल प्रस्तुत नहीं कर सकता था। उस ने ताम्बूल-वाहक को आज्ञा दी—"राजदासी के लिये पांच धरण पुरस्कार दिया जाये।"

सेवक धरण लाने गया तो सेठ हिता के समीप झुक कर फिर बोला—"देवता की कृपा पर विश्वास रखना। मोद नगर के सम्पूर्ण देवालयों में जा कर राजमाता महारानी के शीघ्र लौटने के लिये शंख बजा कर वरदान मांगे। दुखी प्रजा को देवता से राजमाता के लौटने का वरदान मांगने को कहे। देवता तुम्हारी मनोवांछा पूर्ण करेंगे।

हिता सेठ की हवेली से लौटी तो उसकी गति और भी तीव्र थी। हांफती हुई वह मोद के यहाँ पहुंची। द्रुतगति से साँस लेते हुए उस ने मोद को सेठ के आश्वासन की बात बताई और नगर के देवालयों में जाकर शंख बजा कर राजमाता के शीघ्र लौटने के वरदान की भिक्षा मांगने का अनुरोध किया और तुरन्त पालित को ले हाँफती हुई राजप्रासाद की ओर दौड़ चली।



रक्त-ऊषा ने पूर्व के क्षितिज में उठ कर कलिंग के राजप्रासाद की ओर देखा। प्रमद-उद्यान और प्रासाद की प्राचीर के भीतर के वृक्षों पर बसेरा लेने वाले पक्षियों ने सचेत हो कर मंगल गान से प्रभात का स्वागत किया। प्रासाद पर उस का कुछ प्रभाव न पड़ा। बाल-सूर्य की सिंदूरी सुनहली किरणों ने ऊषा का आवरण हटा कर प्रासाद के कंगूरों को स्पर्श किया। इस स्पर्श से भी प्रासाद को चौंकते न देख सूर्य की किरणों ने वृक्षों की ओट से आँगन और अलिन्दों में झांका और नीचे उतर आईं। प्रासाद में तब भी शिशिर के प्रभात की आलस्य-जनित शान्ति का वातावरण क्षुब्ध न हुआ। कहीं भी बिलम्ब हो जाने की उद्विग्नता अथवा उतावली नहीं थी।

चेरी धर्म के मार्ग का अनुसरण करने वाली राजमाता ब्राह्ममुहूर्त से पूर्व ही शैया त्याग कर नित्य-नियम में प्रवृत हो जाती थीं इसलिए उस समय ब्राह्ममुहूर्त से पूर्व ही प्रभात-कालीन मंगल-वाद्य आरम्भ हो जाता था। राजमाता के तीर्थ यात्रा के लिए चले जाने पर इस नियम में शिथिलता आ गई थी। बालिका महारानी को ब्राह्ममुहूर्त में उठने का क्या आग्रह होता? जब भी उन के पलक खुल जाते, वही उन के शैया त्याग का समय होता परन्तु अलिन्दों में धूप की किरणें आ जाने पर बन्दियों ने आँगन में पिप्पणी और मृदंग पर मंगल गान आरम्भ कर दिया। हिता पात्र में ऊष्ण जल और पोंछने के लिए वस्त्र लिए महारानी की पलकें खुलने की प्रतीक्षा में पलंग के समीप खड़ी थी। वापी और उद्दाल अलिंद में खड़े बात कर रहे थे परन्तु सुधि उन की भी इधर ही थी।

अमिता का शरीर अंगड़ाई में धनुष की तरह तना और उसकी पलकें खुल गईं। हिता को सामने देख उसने अपनी छोटी-छोटी बाँहें उस की ओर बढ़ा दीं। हिता द्वार की ओर देख महारानी के तकिये पर झुक गई और महारानी के कान के समीप मुख कर उस ने धीमे से कहा—"आज महारानी आचार्य काका से अनुरोध करेंगी कि राजमाता को तीर्थ-यात्रा से तुरन्त बुलवा दें। महारानी आज नगर विहार से विनोद करेंगी।"

हिता ने बालिका को पलंग पर बैठाने के लिये अपनी बांहों का सहारा दिया परन्तु अमिता उछल कर खड़ी हो गई। उसने बाहें हिता के गले में डाल दीं और अलिंद की ओर देखकर ऊंचे स्वर में बोली—"हम आचार्य

काका को आदेश देंगे, अम्मा को शीघ्र बुलायें। हम आज नगर विहार करेंगे।"

"हाँ अम्मे महारानी ! महारानी नगर में जाकर आचार्य काका से अम्मा को बुलाने को कहेंगी।"—हिता ने अमिता का दुलार कर कहा, "अम्मे, जल ग्रहण करें मुख-हाथ धोयें !"

वापी और उद्दाल भी शयन-कक्ष में आ गये और उन्हों ने भूमि स्पर्श कर महारानी को प्रणाम किया। उद्दाल पिंजरे में एक मैना लिए हुए था। कंचुकी ने मैना को संकेत किया—"गौरा, जय हो !"

मैना बोल उठी—"परम भगवती महारानी की जय हो ! अन्नदाता का प्रताप अक्षय हो !" मैना यह शब्द दो बार दोहरा कर बोलने लगी—"बुद्धं शरणं गच्छ ! धर्मं शरणं गच्छ ! संघं शरणं गच्छ !"

अमिता हिता की गोद छोड़ कर मैना की ओर कूद गई और पिंजरे से मुख लगाकर उसे पुचकारने लगी—"गौरा, दूध भात खायगी ! गौरा को दूध भात दो !"

मैना गौरा अमिता के शब्द दोहराने लगी और अमिता भी पुलक-पुलक कर मैना की प्रतिद्वन्द्विता में वही शब्द दोहराने लगी।

वापी हिता के समीप आई थी। वह अमिता को मुख धुलाते बढ़ पलंग के नीचे रक्खी परात उठाने के लिये झुक गई। कंचुकी के कान से अपनी बात बचाने के लिये उसने बेटी के कान के समीप मुख ले जाकर कहा—"हाय तू मूर्ख, तू कल से क्या कर रही है ? महारानी को स्वयं माता की याद दिला रही है ?........

हिता ने झमक कर मुख फेर लिया, कुछ उत्तर न दिया। अमिता के मुख-हाथ धुलाकर हिता और वापी उसे कलेवा कराने ले गईं। खेल में लगी अमिता श्रीखंड और दूसरे पदार्थों से भरे पात्रों की ओर ध्यान नहीं दे रही थी। हिता ने फिर बालिका का दुलार किया—"अम्मे महारानी, कलेवा कर लें तो नगर-विहार के लिये जाकर आचार्य काका को माता को बुलाने का आदेश दें—"

अमिता की पीठ पीछे से वापी ने बेटी की ओर देख कर आंखों ही आंखों में प्रतारणा की—"यह क्या कर रही है तू ?"

उद्दाल समीप नहीं था हिता ने उपेक्षा से उत्तर दिया—"अम्मा, तू चुप रह। तुझे जाने क्या-क्या दिखाई देता रहता है !" और फिर अमिता को उत्साहित किया, "हां महारानी, कलेवा कर लें तो नगर विहार के लिये चलें।"

उद्दाल दिन के पहले पहर और संध्या समय सामन्त प्रताप को महारानी के विषय में समाचार देने जाता था। सामन्त यह जान कर संतुष्ट था कि बालिका महारानी विनोद में रमी रह कर राजमाता को अधिक स्मरण नहीं कर रही है बल्कि माता को भूलती जा रही है। ऐसा ही समाचार वह महामात्य को दे रहा था परन्तु उस दिन कंचुकी ने महारानी की नगर-विहार की इच्छा की सूचना देकर सामन्त प्रताप को बताया—महारानी ने शैया से उठते ही राजमाता को स्मरण किया और आचार्य महामात्य से राजमाता को तीर्थ से बुला देने के लिये आदेश देने की इच्छा प्रकट की।

प्रताप महारानी के नगर विहार के लिये पालकी प्रस्तुत की जाने की अनुमति देकर चिंता करने लगा। महारानी के मन में माता की स्मृति पुनः जाग उठने का क्या कारण ? क्या उन के विनोद में कुछ न्यूनता हुई ?………

राजपथ पर राजदंडधारी चारण घोषणा करता जा रहा था—"परम भगवती कलिंग की राजेश्वरी की जय हो ! प्रजा और पौरजन ससम्मान सावधान ! राजेश्वरी के लिये मार्ग दिया जाये !"

बालिका महारानी के राज्याभिषेक के पश्चात् राजमाता के चैत्य दर्शन अथवा महाविहार में जाते समय महामात्य के आदेश से रखी जाने वाली सतर्कता शिथिल हो चुकी थी। अब नगर में पहले की अपेक्षा भीड़ भी अधिक थी। नागरिक, पदाति, सैनिक और अश्वारोही सैनिक भी महारानी की पालकी आती देखकर सवारी से उतर कर दुकानों के साथ-साथ सिमिट कर पालकी के लिये मार्ग दे रहे थे और जयघोष कर, झुक-झुक कर उन का

अभिवादन कर रहे थे। अमिता जनसमूह को देखकर प्रसन्न हो रही थी। नगर में आकर सदा ही उसका मनोविनोद होता था।

महारानी की पालकी राजपथ पर एक गली के सामने से जा रही थी। एक छोटे बछड़े के ऊंचे स्वर में रम्भाने के स्वर ने उस का ध्यान आकर्षित किया।

अमिता ने देखा, एक आदमी एक छोटे से बछड़े को गले में बंधी रस्सी से खींच कर ले जा रहा था। बछड़ा आगे न जाने के लिये अड़ कर उछल-कूद कर रहा था।

"ठहरो! ठहरो!"—अमिता बछड़े की ओर देख कर पुकार उठी। पालकी रुक गई।

कितना प्यारा बछड़ा है!........"हम बछड़े को देखेंगे!"—अमिता ने कहा और स्वयं ही पालकी से उतरने का यत्न करने लगी। चंवर ले कर पालकी के साथ-साथ चलती हिता ने तुरन्त आगे बढ़ कर महारानी को पथ पर उतार दिया। महारानी को भूमि पर खड़े देख कर प्रजा ने पुनः झुक-झुक कर उन्हें प्रणाम किया। अमिता का ध्यान उस ओर नहीं था। वह बछड़े की ओर भाग चली और उस के पीछे-पीछे हिता, वापी, कंचुकी यवनियां और अंग-रक्षक भी।

अबोध बछड़ा कलिंग की राजेश्वरी की उपस्थिति का महत्व न जानने के कारण और भी जोर से रम्भा कर छूटने के लिये उछल-कूद करने लगा।

अमिता ने पूछा—"यह बछड़ा क्यों रो रहा है? इसे क्यों बांधा है? इसे खोल दो!"

साथ चलते अंग-रक्षकों के नायक ने निवेदन किया—"महारानी की जय हो। खोल देने से बछड़ा भाग जायगा।"

अमिता ने पूछा—"कहां भाग जायगा? बछड़ा क्या किसी से छीनता है? किसी को डराता है? किसी को मारता है? वह रो क्यों रहा है?"

हिता ने झुक कर महारानी के कान में बताया—"अम्मे महारानी, बछड़ा अपनी अम्मा के पास भाग जायगा। वह अपनी अम्मा के पास जाना चाहता है।"

अमिता बोल उठी—"बछड़े को मत बांधो ! उसे अपनी अम्मा के पास जाने दो ! हम देखेंगे । बछड़े को छोड़ दो ।"

महारानी के आदेश से बछड़े के गले की रस्सी खोल दी गई । बछड़ा कूदता हुआ और वेग से दौड़ने के लिए अपना सिर झुका कर पूंछ और पिछले खुर उछालता हुआ गली में भाग चला ।

गली संकरी होने के कारण महारानी की पालकी भीतर नहीं जा सकती थी । अमिता ने पालकी की ओर देखा भी नहीं । वह स्वर्ण-खचित वस्त्र का पांव तक लटकता अंगरखा पहने, प्रसन्नता में ताली बजा-बजा कर पांव-पैदल बछड़े के पीछे-पीछे गली में भाग चली । हिता, वापी, कंचुकी, यवनियाँ और अंग-रक्षक भी उस के पीछे-पीछे चले ।

अमिता पुकारती जा रही थी—"छोटा-सा बछड़ा कहां गया ? छोटा-सा बछड़ा कहां गया ?"

गली में आते-जाते लोग बालिका महारानी को पांव-पैदल भागती देख विस्मय से ठिठक जाते और सिर झुका कर एक ओर हट मार्ग देते जा रहे थे । बछड़ा छलांग लगा कर एक छोटे से घर का द्वार लांघ आंगन में चला गया ।

जिस समय अमिता आंगन में पहुंची बछड़ा पूंछ उठाये कूद-कूद कर अपनी माँ के स्तनों में मुंह गड़ा रहा था और स्नेहातुर गैया अपनी संतान को चाट-चाट कर प्यार कर रही थी । अमिता की आंखें फैल गईं । वह निर्वाक् रह गई और उस का नीचे का होंठ लटक गया । कुछ क्षण में उस के नेत्रों से आंसू झरने लगे । वह ऊंचे स्वर मे रो कर मां को पुकारने लगी—"हम अपनी अम्मा के पास जायंगे ।"

महारानी के दर्शन के कौतुहल से आंगन के भीतर और बाहर जुड़ आई भीड़ स्तब्ध खड़ी थी । हिता ने तुरन्त आगे बढ़ कर अमिता को गोद में उठा लिया और उस के आँसू अपने आंचल से पोंछ कर याद दिलाया—"भगवती महारानी आचार्य काका के सौध में सखी लेखा से खेलने जायंगी ।" वह मां को याद कर रोती हुई बालिका को गोद में लिये भीड़ को हटा कर राजकीय पालकी की ओर लौट चली ।

✽

महामात्य सुकंठ शर्मा राज्य के अन्नभंडार के अध्यक्ष आर्य विधु से सीमांत की सेनाओं के लिये अन्न भेजने के सम्बन्ध में परामर्श कर रहे थे। उन्हें आंगन से लोहे का बर्तन बजने की झंकार सुनाई दी। आचार्य का दाहिना हाथ उठ गया।

आर्य विधू को मौन रहने का संकेत कर आचार्य बोले—"आर्य कुछ पल के लिये दूसरे कक्ष में विश्राम करें।" और उन्हों ने कक्ष के एक कोने में खड़े बहरे दास की ओर देख कर हाथ से संकेत कर दिया। दास आर्य विधू को मार्ग दिखाता हुआ बाहर ले गया।

नगरपाल और दूसरे अधिकारियों द्वारा राज्य और नगर के सब समाचार तो साधारणतः महामात्य के पास पहुंचते ही रहते थे परन्तु मगध की सेनाओं के कलिंग की सीमा में बहुत दूर तक प्रवेश कर जाने के कारण महामात्य और भी अधिक सतर्क रहने लगे थे। उन्हें शंका थी कि चाणक्य कौटिल्य की नीति में विश्वास करने वाले मगध के लोग भेद-नीति से कलिंग के राज्य और नगर में उपद्रव खड़ा कर कलिंग की राजसत्ता को विश्रृंखल न कर डालें। इसलिये उन्होंने अपने विशेष विश्वस्त अनेक गुप्तचर भी नगर और राज्य में फैला दिये थे जो अधिकारियों के विषय में और राज्य और नगर की स्थिति के सम्बन्ध में सब समाचार सीधे महामात्य को देते रहते थे। यह चर किसी भी समय प्रतीक्षा किये बिना महामात्य के भवन के आंगन में पक्षियों के जल पीने के लिये रखे लोहे के बर्तन को बजा देते थे।

आचार्य के कक्ष से आर्य विधु के निकलते ही माथे पर चंदन लगाये, गले में रुद्राक्ष की माला पहने, एक हाथ में भाग्य बताने का पांसा और दूसरे में काठ की पटिया और गेरु लिये ज्योतिषी जान पड़ने वाले व्यक्ति ने प्रवेश कर आचार्य को प्रणाम किया।

महामात्य ने नेत्रों में प्रश्न का भाव लिये आगंतुक की ओर देखा। आगन्तुक ज्योतिषी ने अभयदान मांग कर निवेदन किया—"भगवती महरानी नगर विहार करते समय एक बछड़े को देख कर खेल में उसके पीछे हो गईं। बछड़े को मां का स्तन पीते और गैय्या को बछड़े को स्नेह से चाटते देख कर महारानी अपनी माता की याद से गली बाजार में रो रही हैं। कई लोग कह रहे हैं।"

—शिशु महारानी को छोड़ कर राजमाता का तप साधना के लिये जाना उचित नहीं हुआ। कोई ऐसा भी कह रहे हैं—शिशु महारानी के लिये आचार्य के मन में दया नहीं है। वे राजमाता को लौटने का संदेश क्यों नहीं देते? कोई ऐसा भी कह रहे हैं—महारानी गली बाजार में रोयेंगी तो चंड अशोक से कलिंग की रक्षा कौन करेगा? कोई ऐसा भी कह रहे है—भगवती महारानी की शिविका आचार्य की पौत्री भद्रे लेखा से खेलने के लिये आचार्य के सौध में जा रही है।"

आचार्य इस समाचार से प्रजा में राजसत्ता के सम्मान की हानि की चिंता कर उद्विग्नता से बोले—"क्या बुढ़ापे में सामन्त प्रताप अपनी बुद्धि और राज-प्रतिष्ठा का विचार खो बैठा है? बिना समाचार और आयोजन के राज्यसत्ता का पदार्पण किसी सौध में कैसे हो सकेगा?"....

आचार्य की दृष्टि कक्ष के बाहर द्वार के सम्मुख सिर झुकाये प्रतिहारी पर पड़ी। प्रतिहारी ने निवेदन किया—"स्वामी अभयदान हो। भगवती महारानी की शिविका सौध की ड्योढ़ी पर पहुंच रही है।"

आचार्य और कुछ न कह पाये। तुरंत ड्योढ़ी की ओर चल दिये। हवेली में व्यस्तता की आंधी-सी आगई। सब लोग भीतर-बाहर दौड़ने लगे। आचार्य ने चलते-चलते सम्मुख दिखाई पड़े अपने पुत्र और ड्योढ़ी के कारिन्दे को आदेश दिया—"महारानी के समुचित सत्कार का प्रबंध तुरंत हो।"

आंगन में दासियां और सेविकायें व्यस्तता से बहुत शीघ्र-शीघ्र आलेपन बनाने में लग गयी थीं। परिचर्या दासियां आचार्य की बधू और पौत्र-पौत्रियों को वस्त्राभूषण पहनाने लगीं। कुछ लोग अर्घ-पात्र, दीपक और नैवेद्य लिये ड्योढ़ी की ओर दौड़े जा रहे थे। बड़े भवन में महारानी के लिये सिंहासन का आयोजन किया जाने लगा।

जिस समय आचार्य घृत दीपों का पात्र लेकर ड्योढ़ी के द्वार पर महारानी की आरती उतार रहे थे अमिता अधीर होकर पुकार उठी—"आचार्य काका, हमारी अम्मा कब आयेगी? काका, हमारी अम्मा कब आयेगी? हमारी अम्मा को बुला दो!"

आचार्य ने उत्तर दिया—"परमभगवती, राजेश्वरी, राजमाता महारानी और राज्य के कल्याण के लिये तप साधना कर रही हैं।"

अमिता ने सिर हिलाकर आग्रह किया—"नहीं नहीं, अम्मा को शीघ्र बुला दो।"

महामात्य ने सिर झुकाकर उत्तर दिया—"परमभगवती राजमाता के तप और धर्म साधन में विघ्न पड़ने से राजमाता दुखी होंगी।

अमिता आचार्य के घुटनों से लिपट गई और मचल कर और भी अधिक आग्रह से अनुरोध करने लगी—"नहीं, नहीं काका, अम्मा को शीघ्र बुला दो!"

अमिता के होंठ रुलाई में फैल जाते देख कर आचार्य को शंका हुई कि महारानी फिर न रो पड़े। विवश होकर उन्होंने आश्वासन दिया—"परम भगवती सेवक ऐसा ही यत्न करेगा।"

महामात्य की पुत्र-वधू ने भी द्वार पर आकर महारानी की आरती उतारी और चरण-पूजा की। आचार्य कलिंग की राजेश्वरी को मार्ग दिखाते हुए हवेली के बड़े भवन में ले गये और उन्हें स्वर्ण-खचित वस्त्रों से ढके ऊंचे आसन पर बैठाया। अमिता ने आसन पर बैठ कर अनुरोध किया—"आचार्य काका भी हमारे साथ बैठें।"

महामात्य ने सिर झुका कर असमर्थता प्रकट की—"परमभगवती अन्न-दाता की कृपा है। आचार्य राजेश्वरी का सेवक है। सेवक को स्वामी के सम आसन पर बैठना शोभा नहीं देता।"

"तुम तो हमारे काका हो।"—अमिता ने विस्मय से आपत्ति की, "काका, तुम तो हमें गोद में लेकर खिलाते थे। अब दूर क्यों बैठाते हो?"

महामात्य के श्वेत दाढ़ी-मूंछ से ढंके होठों पर स्नेह की मुस्कान आ गई। उन्होंने उत्तर दिया—"तब परमभगवती शिशु अमिता थीं। अब महारानी कलिंग की राजेश्वरी हैं। आचार्य सुकंठ महारानी का आज्ञा-पालक सेवक है।"

अमिता को याद आ गया, वह कलिंग की राजेश्वरी है। राज्य तिलक के समय आचार्य काका ने उस से कहा था कि वह राजेश्वरी बन जायगी तो सब लोग उसके आदेश का पालन करेंगे। हिता ने भी प्रातःकाल ही कहा था—महारानी आचार्य काका को आदेश देंगी कि आचार्य अम्मा को शीघ्र बुला दें। अमिता अपने गुदगुदे हाथ की तर्जनी उंगली उठाकर बोल उठी—"आचार्य काका, हम आदेश देते हैं, आचार्य काका अम्मा को शीघ्र बुला दें।" और

उसी साँस में वह कहती गई—"आचार्य काका हम सखी लेखा के साथ खेलेंगे।"

हिता सिर झुकाये आसन के समीप खड़ी थी। अपने उत्तरदायित्व के कारण अमिता की बातों से उस पर आने वाले भय को वह बहुत यत्न से छिपाये खड़ी थी। अपने आप को वश में किये थी कि उसके शरीर की कंपकंपी से अथवा रोम कंटकित हो जाने से उसका भय प्रकट न हो जाये। अमिता को भूमि पर उतर आने के लिए सरकते देख कर वह महारानी को गोद में ले कर उतार देने के लिए तत्परता से आगे बढ़ आई परन्तु महामात्य ने आदर से स्वयं ही आगे बढ़ कर महारानी को भूमि पर उतार दिया।

महारानी के महामात्य की पौत्री को स्मरण करते ही आचार्य के पुत्र ने अपनी पुत्री और पुत्र को सेवा में प्रस्तुत कर दिया। बालक राजकीय शिष्टाचार की चिंता न कर एक साथ खेलते हुए हवेली के अन्तःपुर के उद्यान की ओर चल दिये। अंग-रक्षक और महामात्य के पुत्र उन की देखभाल के लिये साथ रहे।

महामात्य अवकाश पाकर अपने कक्ष की ओर चले गये। अनाभ्यस्त कार्य से वे इतने समय में ही थक गये थे। वे बालिका महारानी के बालोचित व्यवहार और राजसत्ता की प्रतिष्ठा के समन्वय के लिये चिंतित थे। मन में आ रहा था, महारानी के अनुरोध और आँसुओं से परास्त होकर उन्हें राजमाता को बुला देने के लिए हाँ कर देनी पड़ी। करुणा और ग्लानि से उनका मन क्षुब्ध हो उठा। वे एकान्त में गर्दन झुकाये मौन बैठे थे। द्वार पर कदमों की आहट का अनुमान कर आचार्य ने सिर उठाया। कक्ष के द्वार पर आंतरिक प्रतिहारी सिर झुकाये खड़ा था। महामात्य उस अवस्था में देखे जाना नहीं चाहते थे इसलिए प्रतिहारी ने उन्हें नहीं देखा।

स्वामी का ध्यान पाने के संकेत में आंतरिक प्रतिहारी ने हुंकारे का शब्द सुना और भूमि स्पर्श कर निवेदन किया—"अन्नदाता स्वामी, अभयदान हो! रणक्षेत्र से आया महासेनापति का दूत आदेश की प्रतीक्षा में है।"

युद्ध-क्षेत्र की अवस्था चिंताजनक थी। महासेनापति यथा-सम्भव मगध की सेना का प्रतिरोध कर रहे थे। महासेनापति के उदाहरण, प्रेरणा और आदेश से कलिंग के सैनिक मगध की सेना के प्रवाह को अडिग चट्टानों की

भांति रोक रहे थे परन्तु कलिंग का एक-एक सैनिक मगध के दस-दस सैनिकों को गिरा देने के पश्चात नदी की उस कगार के समान गिर पड़ता जिसके नीचे और दोनों ओर की धरती को नदी ने दूर तक काट दिया हो।

महामात्य ने सिर के संकेत से दूत के प्रवेश की अनुमति दे दी।



वापी का मन संध्या से ही भयंकर आशंका और दुष्चिन्ता में डुबकियाँ ले रहा था। दोपहर में नगर विहार से लौट कर महारानी को आहार के पश्चात विश्राम के लिए सुला दिया गया था। अमिता दोपहर की नींद से उठी ही थी और हिता उसका मुख धुला रही थी। तब प्रासाद के कर्मान्तधिष्टायक का प्रहरी संदेश लाया था कि महारानी के निद्रा-विश्राम के समय हिता सामन्त की सेवा में प्रस्तुत हो। सामन्त की आयु और उस का संयमित स्वभाव जानने के कारण वापी को हिता के लिए कुछ दूसरी चिंता न थी। वह बेटी के सामन्त के सम्मुख बुलाये जाने का कारण अनुमान कर सकती थी। नगर में राजमाता को याद कर महारानी ने असंयम का जो व्यवहार किया था और महामात्य के यहाँ पहले उचित सूचना दिए बिना महारानी के पहुंचने का सब उत्तरदायित्व उस की बेटी का ही तो था।

वापी बेटी को समझा कर थक गई थी कि महारानी के मन में माँ की स्मृति जगाने का मूर्खता-भरा अपराध न करे परंतु हिता ने उस की चेतावनी पर कान न दिया। पिछली बार बेटी दंडक के हाथों पड़ गई थी तो वापी ने महारानी को सम्मुख लाकर हिता को दंडक के कोड़ों से बचा लिया था। इस बार क्या होगा? जाने कितने कोड़े पड़ेंगे और उसके पश्चात इस राजसेवा के अयोग्य प्रमाणित होने पर जाने किस कठिन कार्य में माँ-बेटी को लगा दिया जाय?

रात के दूसरे पहर के आरम्भ में महारानी के सो जाने के पश्चात, हिता बुलाने आई एक यवनी के साथ सामन्त प्रताप के आँगन में गई थी। डेढ़ घड़ी बीत जाने पर भी बेटी न लौटी तो वापी का सिर चिंता से फटा जा रहा था और हृदय मुंह को आ रहा था। उसे जान पड़ रहा था, रात आधी से भी अधिक बीत गई है। बेटी शायद अब कभी लौटेगी ही नहीं। सम्भव है,

सामन्त ने उसके अपराध से क्रुद्ध होकर उसे अंधकूप में डाल देने का आदेश दे दिया हो अथवा क्या....?

वापी अमिता के पलंग के समीप अपनी कथरी पर पड़ी मुख आँचल में छिपाये और शरीर भी कथरी से ढके रो रही थी। रोने के शब्द से महारानी की नींद उचट जाने का भय तो था ही। ऋतु गरम होने के कारण महारानी के पलंग के सिराहने और पैताने खड़ी दो दासियाँ ताड़ के बड़े-बड़े पंखे डुला रही थीं। दासियाँ उसे रोते देख पातीं तो वह क्या उत्तर देती।

ऐसी गरमी में भी वापी को कथरी ओढ़े देख पंखा करने वाली एक दासी ने कौतूहल से उसके समीप झुक कर पूछ ही लिया—"अरी, इस गरमी में भी तुझे पंखे की वायु प्रिय नहीं लगती ? कथरी ओढ़ कर लेटी है। क्या जूड़ी आ रही है ?"

"हाँ बहन"—वापी ने स्वर को यथा-सम्भव संभाल कर उत्तर दिया, "जूड़ी आ रही है। पंखे की वायु से बड़ा जाड़ा लग रहा है। बेटी आ जाय तो यहाँ रहे। मैं अलिंद में जा लेटूं।"

लगभग आधी रात के समय हिता सजीव और सशरीर अमिता के शयन कक्ष में लौट आई तो वापी के प्राणों में प्राण आये। ढके हुए दीपक के प्रकाश में वापी बेटी के चेहरे की अवस्था ठीक से देख न पायी परन्तु अवस्था जानने के लिए अब क्षण भर प्रतीक्षा भी सम्भव न थी। मन में आशंका थी, जाने कितने कोड़े पीठ पर खा कर आई होगी। वापी हिता को बाँह से पकड़ कर तुरन्त अलिंद में ले गई। बेटी की पीठ, नितम्बों और बाहों को अपने हाथ फेर कर मार के चिन्हों के लिए टटोला और रुंधे हुए स्वर में पूछा—"क्या हुआ री ?"

"कुछ भी तो नहीं"

अंधेरे में वापी बेटी के मुख और नेत्रों का भाव नहीं देख सकती थी परन्तु हिता के स्वर की निर्भयता ने उस की आशंका दूर कर दी। आशंका का बोझ हृदय से उतरने पर उसे हिता के भय को जान बूझ कर आलिंगन करने की मूर्खता पर क्रोध आ गया। स्वर दबा कर बोली—"क्या हो गया तुझे ? क्यों अपना सिर कुल्हाड़ी के तले रखने का हठ कर रही है ?"

"मै क्या कर रही हूं"—हिता ने भी स्वर दबा कर उत्तर दिया, "तुझे जाने क्या-क्या दिखाई देता रहता है। सामन्त पूछ रहे थे, महारानी तो नगर-विहार करने गई थी, पालकी महामात्य की हवेली में ले जाने की अनुमति किसने दी थी ? मैं ने उत्तर दिया—महारानी नगर में पौरजन के सम्मुख सखी भद्रे लेखा से खेलने जाने का हठ कर रोने लगीं। मैं दासी क्या कर सकती थी ? सामन्त ने पूछा, महारानी तो राजमाता को भूल कर विनोद में लीन थीं। अब उन्हें क्यों याद करने लगीं ? मैंने उत्तर दिया—महारानी कई दिन से स्वप्न में मां को देखती हैं। चौंक-चौंक पड़ती हैं। इसी से दिन में वे माता को अधिक-अधिक याद करती हैं। स्वामी, सन्देह है किसी सन्तानहीना की कुदृष्टि का प्रभाव है, अथवा किसी दुष्ट कापालिक ने कोई उच्चाटन उपचार का प्रयोग किया होगा। महारानी के स्वप्नों पर तो दासी का वश नहीं हो सकता है।"

वापी ने चेतावनी दी—"तू बहुत दक्ष बनती है। सामन्त प्रतिहारी यवनियों से नहीं पूछेंगे ?"

हिता ने उपेक्षा के स्वर में उत्तर दिया—"तू मेरी बात का समर्थन करना। यवनियाँ समर्थन नहीं करेंगी तो कह दूंगी, ये लोग क्या जानें ! भित्ती के साथ खड़ी-खड़ी झपकी लेती रहती हैं........।"

वापी मुंह जोर बेटी के प्रति आशंका से अपने कांपते हुए हृदय को दोनों हाथों से मसोस कर रह गई। सोचती थी—इस मूर्खा को क्या हो गया। सामन्त प्रताप और महामात्य से होड़ ले रही है। जैसे कोई चींटी हाथी की दृष्टि में न पड़ सकने के अहंकार में हाथी से युद्ध करने की चुनौती दे। हाथी की एक ही फ़ुफकार में यह धूल के साथ जाने कहाँ उड़ जायगी। यह तो ऐसे निर्भय हो रही है जैसे अतल खाई के किनारे बहुत ऊँची कगार पर खड़ा अन्धा भय को अनुभव नहीं करता। यह आँखें मूंदे उस कगार पर नाच रही है तो पाँव कब तक नहीं फिसलेगा। हिता को निर्भयता और दृढ़ निश्चय से ग्रीवा उठाये, चलते देख माँ का हृदय आशंका से बिंध-बिंध कर आंखों में आ जाते।

परन्तु दूसरे दिन दूसरा पहर भी बीत न पाया था कि वापी हिता की अवस्था देख कर और भी व्याकुल हो गई। दोपहर में वापी और हिता

महारानी के भोजन का आयोजन कर रही थीं तभी यवनी मोहा अवसर देख हिता को संकेत से एक ओर बुला कर कान में कुछ कह गई थी। हिता महारानी को भोजन कराते समय भी अस्थिर-सी थी। बार-बार महारानी के लिए नई पुतली लाने की चिंता प्रकट कर रही थी और अपराह्न में महारानी के पलंग पर लेटते ही उसने उद्दाल से कहा और कंचुकी पालित को रक्षा के लिये साथ लेकर शीघ्र पुतली ले आने के लिये निकल गई। वापी और भी आशंकित हो गई। सोचा, जाने लड़की को क्या हो गया है, सुनती ही नहीं। शायद सुन ही नहीं सकती। इस में सन्देह नहीं था कि हिता मोह से मोद का संदेश पाकर ही गई है। कहीं बहुत विलम्ब कर दिया तो क्या होगा··· ···

हिता ने लौटने में विलम्ब नहीं किया। आधी-पौन घड़ी उस का मुख देखकर जान पड़ता था कि वर्ष-छः मास से किसी भयंकर रोग में पीड़ित है। रंग पीला हो गया था और आंखें रो-रो कर गुलाबी होकर सूज गई थीं। होंठ सिसकियों को दबाये रखने के प्रयत्न में भिंचे हुए थे। महारानी की नींद समाप्त होने की प्रतीक्षा में भी वह भित्ती की ओर मुख कर आंचल से आंसू पोंछ रही थी।

मां ने चिंता से पूछा—"क्या हुआ री ?"

हिता ने होंठ को दाँतों से काट कर गर्दन झुका ली कि रोने का शब्द मुख से न निकल जाये।

अमिता जाग उठी तो हिता आंचल से मुख पोंछ तुरंत सेवा में उपस्थित हो गई। बालिका भी पूछे बिना न रह सकी—"हितू, तू रो रही है! तुझे क्या हुआ ?"

हिता ने महारानी से अपने सिर में भयंकर पीड़ा होने के लिये क्षमा मांगी और सम्भल जाने का यत्न किया परन्तु उसकी अवस्था तो ऐसी थी कि जो भी देखता, पूछे बिना न रह सकता था। वह सभी से सिर में भयंकर पीड़ा होने का कारण बता रही थी। वापी जानती थी पीड़ा हिता के सिर में नहीं हृदय में थी। उसका रोम-रोम भय से कांप रहा था। दासी को अपनी इच्छा से रोने का क्या अधिकार परन्तु बेटी को कैसे समझाती ? वापी ने कंचुकी मामा उद्दाल से हिता के भयंकर सिर पीड़ा के कारण असहाय हो जाने की बात कह कर बेटी को एक ओर अलिंद में कथरी बिछा कर लिटा

दिया। परन्तु अमिता स्नेह से अधीर हो बार-बार हिता को पुकार लेती और उसके समीप गये बिना न मानती। हिता के सहसा सिर पीड़ा से रोगी हो जाने की बात अन्तःपुर भर में फैल गई।

वापी रात के दूसरे पहर में ही बेटी को समीप लिटा कर उसकी पीड़ा का कारण पूछ सकी। हिता ने आंखों में मुट्ठियां गड़ाये, सिसकियां लेते हुए बताया—"राजपुरुष 'उसे' पकड़ कर ले गये। कोई नहीं जानता कहां ले गये। किसी अंधकूप में जीवित है अथवा........"

राजपुरुषों द्वारा मोद के पकड़ लिये जाने का कारण मौसी ने हिता को बताया था कि बेचारे मोद ने कोई चोरी नहीं की है, किसी पर हाथ भी नहीं उठाया हैं। उसके स्वामी ने भी उस पर कोई आरोप शासन के लिये नहीं लगाया है। मोद नगर के देवालयों में शंख बजा कर ऊंचे स्वर में देवताओं से राजमाता महारानी के शीघ्र लौट आने का वरदान मांगता था और दूसरे लोगों से भी ऐसा ही करने को कहता था। वह दिन के पहले पहर और संध्या समय अनेक देवालयों में घूमता फिरता था। राजपुरुषों का ध्यान उसकी ओर गया। उन्होंने उसे कुछ दिन ऐसा करते देखा फिर एक दिन उसे पकड़ कर ले गये। तीन दिन से बिठ्ठल अपने कलाकार दास को ढूंढ़ता फिर रहा है। बिठ्ठल ने नगरपाल के द्वार पर जाकर प्रार्थना की—मेरा दास भाग गया है अथवा किसी ने उसे बांध कर रख लिया है अथवा किसी ने उसकी हत्या कर दी है। नगरपाल रक्षा करें।

नगरपाल ने हंस कर उत्तर दे दिया, तुम्हारा दास क्या स्वर्ण और रत्नों के आभरण पहने था जो कोई धन के लोभ में उसकी हत्या करेगा ? उसे बांध कर कोई क्यों रखेगा ? वह क्या कमनीय, लावण्यमयी दासी है जिसे अन्तःपुर में छिपाकर उसका भोग किया जा सकता है ? कहीं मद पीकर मत्त पड़ा होगा या जुए में बहुत कुछ हार कर भय से कहीं छिपा पड़ा होगा। भूख से व्याकुल हो कर वह स्वयं ही भागा आयगा। यदि वह भाग गया है तो उसे पकड़ कर लाओ। हम उस का कठोर शासन करेंगे।

बिठ्ठल ने सुना था कि मोद को राजपुरुष ही धर ले गये हैं परन्तु नगरपाल के सम्मुख यह बात कहने का साहस उसे न हुआ।

हिता को रात भर नींद न आई। राजमाता के लौटने का वरदान देवताओं

से मांगने के कारण मोद के धर लिए जाने पर उसे राजपुरुषों के अन्याय के प्रति क्रोध आया, जो देवता से अपनी इच्छा पूर्ण करने का वरदान भी नहीं मांगने देते। उसे सेठ सौमित्र के प्रति क्रोध आया जिसने मोद को देवालयों में शंख बजा कर ऐसा वरदान माँगने का परामर्श दिया था। हिता का सिर घूमने लगा—वह स्वयं भी तो सेठ के कहने से ही महारानी को बहका कर कितना उत्पात खड़ा किये दे रही है। उस दिन की ही घटनायें, महारानी का गाय और बछड़े को देख कर नगर पथ पर रो पड़ना और बिना सूचना के महारानी को महामात्य के यहाँ पहुंचा देना, क्या-क्या उसने कर डाला! यदि सामन्त प्रताप और महामात्य यह भेद जान पायें तो उस का सिर कंधों से पृथक हो जाने में कितना समय लगे?....हिता को कल्पना में दिखाई दिया कि एक बधिक उस की गर्दन पकड़ कर काष्ठ पर रख रहा है और दूसरा बधिक भयंकर कुलिश उसके सिर पर उठाये है। उस का शरीर पसीने से भीग गया।

हिता रात भर सोचती रही। जिस मार्ग पर वह इतना आगे बढ़ चुकी थी उस से लौट कर जाने में भी रक्षा नहीं थी। मोद यदि किसी अंधकूप में पड़ा बिसूर रहा है तो उस की रक्षा के लिए हिता केवल महारानी राजमाता से ही वरदान माँग सकती है। महामात्य के सम्मुख ऐसी प्रार्थना का अर्थ मोद और स्वयं उस की ग्रीवा का तत्काल बधिक के काष्ठ पर रखा जाना ही होगा। जिस पथ पर वह पाँव रख चुकी थी मोद के लिए अब उस से लौटना सम्भव नहीं था। अब चाहे जो हो, वह महारानी को राजमाता की स्मृति से व्याकुल कर महामात्य को, राजमाता को बुलवाने के लिए विवश करेगी ही। महामात्य से भयभीत नहीं होगी।

हिता के गुप्त सुझावों और प्रोत्साहनों से अमिता की माँ के लिए व्याकुलता बढ़ती ही जा रही थी। हिता ने इस विषय में अपनी विवशता प्रकट करने के लिए सामन्त प्रताप की सेवा में निवेदन किया—सम्भव है, स्थविरों के आशीर्वाद से बालिका का मन स्थिर हो जाने में लाभ हो, अथवा किसी ताँत्रिक के कवच से महारानी की सुधि उस ओर से हट जाये। सामन्त को दासी की बात उचित जंची। उन्होंने महाविहार में महास्थविर जीवक से महारानी के मन की शाँति के लिए पाठ किया जाने की प्रार्थना की। एक आचार्य को महारानी के मन की शांति के लिए प्रासाद में होम करने का आदेश दे दिया और एक तांत्रिक को उच्चाटन मंत्र के प्रभाव की शान्ति का

उपचार करने के लिए आदेश दे दिया। हिता एक ओर यह उपचार करवा रही थी और दूसरी ओर केवल अपने संकेतों से उन्हें व्यर्थ किए दे रही थी।

हिता ने अमिता के मन में पुतली के एक नये खेल के लिए कौतूहल उत्पन्न कर दिया था। अमिता के बार-बार पूछने पर एकान्त अवसर देख कर हिता ने अमिता के कान में सुझा दिया था—"महारानी, अम्मा के तीर्थ-तप से लौटने का खेल खेलें!"

अमिता 'बेटी-पुतली' को लिए अपने कक्ष में 'माता-पुतली' की प्रतीक्षा कर रही थी। हिता 'माता-पुतली' को छोटी पालकी में अलिंद से ला रही थी परन्तु पालकी आ ही नहीं रही थी। विलम्ब से उद्विग्न होकर अमिता झल्ला कर पुकार उठी—"हितू, पुतली की अम्मा को लाओ।........क्यों नहीं लाती ?"

महारानी की खिन्नता-भरी पुकार सुन कर हिता कक्ष में आ गई। उसने ठोढ़ी पर उंगली रख कर कातर स्वर में विवशता प्रकट की—"महारानी, पुतली की मां रुठ गई है। तीर्थ-तप से नहीं आती। कहती है, बेटी महारानी, बन गई है। बेटी हमें लेने आयेगी तभी हम आयेंगी।"

दासी की बात अमिता के मन में चुभ गई। हिता की बात समझ पाने के लिए वह अपने पांव हाथ में पकड़े, भोला मुख दासी की ओर उठा कर देखती रह गई। बाल बुद्धि से विचार कर उसके मुख से निकला—"हम भी अम्मा को लेने जायेंगे तो अम्मा तीर्थ यात्रा से आयेंगी ?"

हिता के सुझाव से अमिता 'बेटी पुतली' को लेकर अलिंद में 'माता-पुतली' को बुलाने गई और बेटी तथा माता पुतलियों का मेल हो गया। प्रातः या दोपहर के पश्चात अमिता को सुलाते समय कान के पास मुख ले जाकर अथवा उसके नींद से उठने पर यदि हिता अवसर देखती तो किसी न किसी प्रसंग से माता की याद दिला देती—महारानी स्वप्न में राजमाता को देखेंगी। अथवा........स्वप्न में अम्मा ने प्यार किया था न ?

अमिता दोपहर-पश्चात् नींद से उठी तो हिता ने धीमे से स्वर में पूछ लिया—"महारानी स्वप्न में अम्मा को तीर्थ यात्रा से बुलाने के लिये गई थीं न ?....महारानी अम्मा को बुलाने उत्तर द्वार जांयगी ?"

महारानी के नींद से जाग उठने की आहट पाकर कंचुकी उद्दाल ने कक्ष में प्रवेश किया। उसने सुना अमिता कह रही थी—"·········हम उत्तर द्वार जायंगे।" कंचुकी को देख अमिता फिर बोल उठी, "मामा, हम अम्मा को बुलाने उत्तर द्वार जांयगे। शिविका लाओ!"

हिता नींद से उठी महारानी का मुंह धो कर वस्त्र से पोंछ रही थी तब भी अमिता अपनी बात रटे जा रही थी—"हम अम्मा को बुलाने उत्तर द्वार जांयगे।·········हम उत्तर द्वार जांयगे शिविका लाओ।"

उद्दाल को समीप देख कर हिता अमिता को स्नेह से ससझाने लगी—"नहीं महारानी तीर्थ बहुत दूर है,··········· तीर्थ सौ योजन दूर है।·········मार्ग बहुत बीहड़ है।·········मार्ग में बहुत भालू और सिंह आदि हैं।"

अमिता उत्तर देती जा रही थी—"हम धनुष-भाले और अंग-रक्षकों को साथ ले जांयगे। हम बभ्रु को साथ ले जांयगे। बभ्रु सिंह को मार देगा!"

उद्दाल चिंतित था, क्या करे? महारानी के माता को तीर्थयात्रा से लौटा कर लाने के लिये, उत्तर-द्वार जाने की इच्छा के बाल-हठ की पूरी बात सामन्त प्रताप के सम्मुख निवेदन करने का उसे न साहस था न उसकी आवश्य-कता ही थी। महारानी की नगर विहार के लिये जाने की इच्छा बता देने से भी पालकी मंगवाने की अनुमति मिल सकती थी। उद्दाल ने सामन्त के सम्मुख जाकर महारानी की नगर-विहार के लिये जाने की इच्छा निवेदन कर दी।

बालिका महारानी प्रजा के सम्मुख जाकर राज-सम्मान और राज-गौरव के अनुकूल व्यवहार नहीं कर पाती थी। महामात्य ऐसी घटनाओं से खिन्नता अनुभव करते थे। उन्होंने सामन्त प्रताप को परामर्श दिया था—देवता और राजा का दर्शन प्रजा के लिये दुर्लभ सौभाग्य है। प्रजा ऐसे दर्शन का भार नित्य नहीं सम्भाल सकती। तब ऐसे अवसर की उपेक्षा और दर्शन की अवहेलना भी करने लगती है। प्रासाद में महारानी के विनोद के लिये कौन साधन दुर्लभ हैं? उन्हें राजप्रासाद से बाहर जाने की इच्छा ही क्यों हो? सामन्त यत्न करता था कि महारानी नगर में जाने की इच्छा ही न करें। उस की नगर विहार की इच्छा की बात सुनता तो बालिका को किसी दूसरे विनोद से बहला देने का आदेश दे देता।

सामन्त ने उद्दाल से महारानी की नगर-विहार की इच्छा का संदेश पाकर उसके विनोद के लिये नटों का कौतुक करवाने की आज्ञा दे दी परन्तु महारानी ने अपना हठ नहीं छोड़ा। वह नगर-विहार के लिये उत्तर-द्वार जाने का हठ किये रही। सामन्त को महारानी के लिये पालकी प्रस्तुत की जाने का आदेश देना ही पड़ा।

सामन्त प्रताप ने महारानी के उत्तर सिंह द्वार तक विहार के लिये पालकी प्रस्तुत करने का आदेश तो दिया परन्तु नगरपाल को भी संदेश भेज दिया कि महारानी अमुक मार्ग से उत्तर-द्वार तक विहार के लिये जा रही हैं। मार्ग में भीड़ अथवा उनके क्षुब्ध होने का अवसर न आये। उस समय महारानी की नगर-विहार की इच्छा से सामन्त विशेष रूप से आशंकित थे क्योंकि मगध की सेना कलिंग राज्य में कई योजन भीतर चली आई थी। प्रतिदिन सैकड़ों घायल सैनिक युद्ध क्षेत्र से लौट रहे थे। उत्तर से भागकर ग्रामीण प्रजा-जन कहीं भी शरण न मिलने पर राजपथ के दोनों ओर की हवेलियों के अलिन्दों में ही पड़े रहते अथवा चटाई का कोई टुकड़ा बिछा कर अपने बर्तन-भांड़े समीप रखे नगर पथ के एक ओर ही पड़े रहते। नगर की अवस्था बहुत विरुप हो गई थी।

नगरपाल की सावधानी से नगर के पथ पर केवल सशस्त्र सैनिक ही दिखाई दे रहे थे। महारानी की पालकी द्रुतगति से उत्तर सिंह-द्वार की ओर बढ़ती जा रही थी। पालकी के सम्मुख चलते राज-चिन्हधारी चारण की पुकार सुन कर सैनिक महारानी का जय-घोष कर और सिर झुका कर सम्मान प्रकट कर रहे थे। अमिता यह नया व्यवहार देख कर प्रसन्न हो रही थी और विस्मित भी। नगर के सिंह-द्वार पर और भी अधिक सैनिक थे। सैनिकों ने महारानी के प्रति विधिवत सम्मान प्रकट किया।

उसी समय महारानी को सिंह-द्वार के सामने पथ पर नगर की ओर आते यात्रियों का समूह दिखाई दिया। इस समूह में प्रायः सैनिक ही थे। इन सैनिकों के कपड़े फट कर चिथड़े हो रहे थे। कुछ लोग लाठी या बल्लम के सहारे लंगड़ा-लंगड़ा कर चल रहे थे। कोई दो-दो सैनिक कंधों पर मोटा बाँस लिए थे और बांस में चादर या धोती बंधी थी। उस चादर या धोती में भी वे किसी सैनिक को उठाए हुए थे। उन लोगों को देख कर अमिता पुकार उठी—"अरे, अरे यह कैसी शिविका है ?……हम उस शिविका पर बैठेंगे।"

महारानी की पालकी के साथ चलते अंग-रक्षकों के नायक ने समीप आकर महारानी को समझाया—"परमभगवती महारानी, वह घायल सैनिक की शिविका है। वह वाहन महारानी के योग्य नहीं है।"

अमिता कुछ क्षण विस्मय में मौन इस नई वस्तु को देख कर आग्रह से बोली—"हम इसे देखेंगे!"

नायक से संकेत पाकर अपने कंधों पर बाँस से बंधे कपड़े में घायल सैनिक को उठाए हुए दो सैनिक महारानी की पालकी की ओर बढ़ आये। सैनिकों के कंधों पर कपड़े में लटके सैनिक के फटे कपड़ों पर बहुत सा सूख गया रक्त लगा हुआ था। उस का सूख गये रक्त से भरा मुख सूजा हुआ था। नेत्र मुंदे थे। उस के सूजे हुए और खुले होठों से धीमे-धीमे कराहट निकल रही थी। सैनिक की ऐसी अवस्था देख कर बालिका महारानी का हृदय भय और करुणा से मुंह को आने लगा।

अमिता ने उस ओर से मुंह फेर लिया। वह दूसरे सैनिकों की ओर देखने लगी। समीप आ गये सैनिकों के समूह में अधिकांश लोगों के वस्त्र रक्त से भरे थे। कुछ के सिर पर बंधे कपड़ों में रक्त था और वे अपने साथ लाठी के सहारे चलते सैनिकों का सहारा लिए चल रहे थे। अमिता भय से पुकार उठी—"यह क्या है? इन्हें किसने मारा है?"

सिंह-द्वार के सैनिकों के नायक ने पालकी के समीप आकर और भूमि स्पर्श कर निवेदन किया—"महामहिमामयी परमभगवती राजेश्वरी, इन सैनिकों को आक्रमणकारी आततायी चंड अशोक ने मारा है।"

उत्तर का अभिप्राय न जान सकने के कारण बालिका के नेत्र गोल हो गये और ओंठ खुले रह गये। उसने पूछा—"अशोक कहां है?"

नायक ने पुनः भूमि स्पर्श कर उत्तर दिया—"परमभगवती अशोक दूर है.......। वह कलिंग पर आक्रमण करने आ रहा है।"

अमिता और भी विस्मित थी। उसने प्रश्न किया—"अशोक क्या करेगा?"

नायक ने फिर विनय से उत्तर दिया—"परम भगवती अशोक महा दुष्ट है। वह महारानी की प्रजा का धन छीनेगा और महारानी की प्रजा की हत्या करेगा।"

"तो उसे बाँध लो !"—अमिता ने पुकारा, "अम्मा ने आज्ञा दी है, किसी से छीनो मत ! किसी को डराओ मत ! किसी को मारो मत ! तुम अशोक को साँकल से बाँध दो।"

नायक ने भूमि स्पर्श कर निवेदन किया—"परमभगवती की आज्ञा से महासेनापति अशोक को बाँधने गये हैं।"

अमिता ने पूछा—"काका ठाकुर कब गये हैं ?"

"परमभगवती महासेनापति बहुत दिन पूर्व गए हैं।"—नायक ने उत्तर दिया।

अमिता ने आग्रह किया—"तो तुम भी जाओ। तुम अशोक को शीघ्र बाँध कर लाओ ! हम आदेश देते हैं।"

नायक ने सिर झुकाये निवेदन किया—"परमभगवती, अभयदान मिले। यह सैनिक आचार्य महामात्य के आदेश से यहाँ अशोक से युद्ध करने के लिए खड़े हैं।"

अमिता ने अधिक विस्मय से प्रश्न किया—"क्या अशोक यहाँ आयेगा ?"

सेनानायक सोच कर बोला—"परमभगवती यह तो दैव ही जानता है परन्तु यदि अशोक आयेगा तो महारानी के सेवक उस का वध करने के लिए प्राण दे देंगे।"

"नहीं-नहीं"—अमिता ने भय से सिर हिला कर अपनी घुंघराली अलकें छिटका कर निषेध किया, "नहीं, तुम किसी को मत मारना। अम्मा ने कहा था—किसी से छीनो मत ! किसी को डराओ मत ! किसी को मारो मत ! तुम किसी को मत मारना। दुष्ट अशोक आयेगा तो हम उसे बभ्रु की साँकल से बाँध देंगे। वह किसी से नहीं छीनेगा, किसी को नहीं डरायेगा, किसी को नहीं मारेगा।

सेनानायक नत-मस्तक हो मौन रह गया।

पालकी के साथ आये अंगरक्षकों के नायक ने हिता के समीप जाकर बात की और हिता ने अमिता के समीप आकर निवेदन किया--"परम भगवती महारानी सूर्यास्त का समय निकट है। अब महारानी प्रासाद की ओर चलें।"

अमिता ने हिता की प्रार्थना की ओर ध्यान नहीं दिया। उसने पालकी से उतारे जाने की इच्छा प्रकट की और भूमि पर उतार दी जाने पर सैनिकों के समूह की ओर बढ़ गई। घुटने पर चोट के कारण दूसरे सैनिक के कंधे का सहारा लेकर खड़े एक सैनिक की ओर मुख उठा कर उसने पूछा—"तुम्हें बहुत पीड़ा है ?"

सैनिक महारानी के आदर में भूमि का स्पर्श कर मौन रह गया।

अमिता ने फिर प्रश्न किया—"तुम्हारे घुटने पर किसने मारा ?"

सैनिक को उत्तर देने का साहस न हुआ परन्तु सिंह द्वार के नायक ने आगे बढ़ कर विनय से उत्तर दिया—"परमभगवती, अन्नदाता, इसका घुटना युद्ध में टूट गया।"

अमिता के मुख पर करुणा का भाव आ गया। उस ने सैनिक को सम्बोधन किया—"तुम युद्ध में क्यों गये थे ? तुम ऐसा खेल मत खेलो। तुम युद्ध में मत जाना। युद्ध में कोई न जाये।"

सैनिक कुछ उत्तर न दे सका। अमिता फिर बोली—"तुम्हें बहुत पीड़ा हो रही है ? तुम से चला नहीं जाता ? तुम शिविका पर बैठ जाओ !"

महारानी का आदेश सुन कर सैनिक भय से सिहिर उठा। उसने भूमि स्पर्श कर महारानी को प्रणाम किया और मौन खड़ा रहा।

अमिता फिर बोली—"तुम शिविका पर बैठो। हम दौड़ कर चलेंगे। हमारे पांव में पीड़ा नहीं हैं। हम बहुत वेग से भागते हैं। हिता हम से हार जाती है।"

सैनिक के निश्चल रह जाने पर अमिता ने अंग-रक्षक सैनिकों के नायक और हिता को आदेश दिया—"हम आदेश देते हैं, इस सैनिक को शिविका पर बैठा दो !"

नायक धर्म संकट में सिर झुकाये मौन रह गया। महारानी के आदेश का पालन न करना अधर्म था और महारानी की शिविका पर साधारण-जन को बैठा कर राजवाहन का अपमान करना भी अधर्म होता।

अमिता अपनी इच्छा पूरी होती न देख मचल कर हिता का आँचल

खींच कर पुकार उठी—"हितू, यह सैनिक हमारा आदेश नहीं मानता। तू उसे शिविका पर बैठा दे !"

अंग-रक्षकों के नायक ने देखा कि महारानी का अनुरोध पूरा न किया जाने से उन के नेत्र सजल हो आये थे। अनेक सन्तानों के पिता प्रौढ़ सेना नायक ने अनुमान किया -महारानी की इच्छा पूरी न होने से बालिका के नेत्रों से आँसू बहने लगेंगे। ऐसी घटना का संवाद पा कर सामन्त प्रताप और महामात्य अत्यन्त खिन्न होंगे। नायक ने मुख से कुछ न बोल भूमि स्पर्श कर महारानी की आज्ञा स्वीकार की और सैनिक को बांह से पकड़ कर महारानी की पालकी पर बैंठा दिया। किंकर्तव्य विमूढ़ और भय से कांपता हुआ सैनिक विवश हो कर पालकी पर लद गया।

अपनी इच्छा पूरी हो जाने से अमिता किलक कर हाथों से ताली बजाने लगी। उसने दूसरे आहत सैनिकों को भी पालकी पर बैठा देने का आदेश दिया। उस की आज्ञा से पालकी नगर के भीतर चल पड़ी।

राजकीय पालकी के सामने चलने वाला चारण रीति के अनुसार प्रजा को राजसम्मान के प्रति सावधान होने की चेतावनी देता जा रहा था—"परम-भगवती, महामहिमामयी कलिंग की राजेश्वरी की जय हो ! पौरजन और प्रजा महारानी की शिविका के लिए मार्ग दें…………।" परन्तु महारानी की पालकी पर घायल सैनिक बैठे हुए थे। बालिका महारानी पालकी के साथ-साथ उछलती-कूदती चली जा रही थी।

नगरपाल चित्ररथ राजपथ के किनारे के एक घर में इसी प्रजोजन से बैठा था कि सिंह-द्वार से महारानी की सवारी राजप्रासाद की ओर जाते समय पथ पर किसी प्रकार की भीड़ अथवा अव्यवस्था न होने पाये। चारण की पुकार सुन कर नगरपाल मार्ग पर आ गया।

राजकीय पालकी पर कई घायल सिपाहियों को बैठे और महारानी को पथ पर पांव-पैदल चलते देख नगरपाल के नेत्र क्रोध से लाल हो गए। चित्र-रथ ने इस अविनय, अनाचार और राजशक्ति के असम्मान के लिए पालकी के साथ चलते अंग-रक्षकों के नायक सामन्त पुत्र की भर्त्सना की। परन्तु सामन्त का उत्तर पा कर नगरपाल को मौन रह जाना पड़ा। इस दृश्य के चारों

और अधिक लोगों का ध्यान आकर्षित न करने के लिए उसने सवारी के आगे चलते चारण के राजकीय शिविका की घोषणा करने से निषेध कर दिया।

नगर के चौक और अधिक भीड़ से भरे भाग में पहुंचने से पहले ही नगरपाल ने महारानी के सम्मुख हाथ जोड़ कर निवेदन किया—"परम भगवती महारानी, इन सैनिकों के घर यहां ही हैं। यह अपने घर जायेंगे। अब राजेश्वरी शिविका पर आसन ग्रहण करें।"

नगरपाल का संकेत पा कर वाहकों ने पालकी पथ पर रख दी और सैनिक पालकी से तुरन्त उतर आने का उपक्रम करने लगे। यह देख अमिता पुकार उठी—"नहीं, नहीं! ऐसा नहीं होगा। हम इन घायल सैनिकों को प्रासाद में ले जायेंगे। हम इन्हें दूध-भात खिलाकर पलंग पर सुलायेंगे।"

नगरपाल निरुपाय हो गया। परिस्थिति न सम्भाल सकने की अपनी विवशता में उसने क्रोध से पालकी के साथ चलते कंचुकी और हिता की ओर देखा—यह सब क्या हो रहा है? हिता ने तुरन्त आगे बढ़ कर अमिता के कान के समीप झुक कर समझाया—"भगवती महारानी, सैनिक घर नहीं जायेंगे तो उनकी अम्मा रोयेगी।"

हिता के समझाने से अमिता पल भर के लिए सोच में पड़ गई और बोली—"इनकी अम्मा को यहां ही बुलाओ। हम इनकी अम्मा को देखेंगे।" और वह स्वयं घायल सैनिकों के समीप जाकर उन्हें पुचकार कर समझाने लगी, "तुम युद्ध मत करना।........किसी से छीनो मत। किसी को डराओ मत! किसी को मारो मत!....कोई युद्ध में न जाये। अम्मा कहती थी, युद्ध और हिंसा पाप है........"

नगरपाल ने इस परिस्थिति को शीघ्र समाप्त कर देने के लिए घायल सैनिकों के परिवार के लोगों को तुरन्त बुलाकर उन्हें ले जाने का आदेश दे दिया था। हिता बार-बार अमिता के कान में समझा रही थी—अम्मे महारानी, सैनिकों की माता इन की प्रतीक्षा में रो रही है। अब इन्हें अपनी अम्मा के पास जाने दें....।"

एक प्रौढ़ा और एक युवती अपने पुत्र और अपने पति के घायल हो कर लौटने का समाचार पाकर रोती बिलखती आ पहुंची। नगरपाल ने उन्हें

महारानी के सम्मुख विलाप न करने की आज्ञा दे दी परन्तु उनके आंसू बहते देख कर अमिता के भी आंसू झरने लगे।

सूर्यास्त हो चुका था। संध्या समय के कामकाज की भीड़ बाजारों में बढ़ रही थी। अंधेरे में महारानी का प्रासाद से बाहर रहना भी उचित न था। अमिता ने घायल सैनिकों के पालकी से चले जाने के बाद भी राजप्रासाद में लौट जाने के लिये पालकी पर बैठ जाना स्वीकार न किया। घायल सैनिकों की मां को अपने पुत्र का सिर गोद में लेकर रोते देख उसे फिर मां की याद आगई थी और वह अपनी माता को ढूंढने जाने का आग्रह कर रही थी। नगरपाल बहुत व्याकुल हो रहा था। इस सब व्यवस्था के लिये महामात्य उसे क्या कहेंगे? एसी अवस्था में वह अपने निर्णय से कर भी क्या सकता था? वह एक घोड़े पर सवार हो कर द्रुत-गति से महामात्य से आदेश पाने के लिये चला गया।

महामात्य नगर के एक गुप्तचर से बालिका महरानी के माता को याद कर प्रजा के सन्मुख रोने और अपनी बालवुद्धि से प्रजा को युद्ध में न जाने का आदेश देने की घटना का संवाद सुन रहे थे। ''''राज्य की रक्षा के लिये जिस युद्ध में महामात्य अपने एक मात्र पुत्र मयंक को यूथप बनाकर भेज चुके थे; वे अपना और राज्य का सर्वस्व अर्पण किये दे रहे थे, महारानी के उस युद्ध में योग न देने के लिये प्रजा को कहने के संवाद से वे अधीर हो उठे। महारानी बालिका थीं परन्तु थीं तो कलिंग की अधिपति राजेश्वरी! वे ही प्रजा को युद्ध में योग न देने के लिये कहेंगी और प्रजा के सम्मुख रोती कल्पती फिरेंगी तो क्या होगा? उसी समय उन्हें द्वार पर नगरपाल के उपस्थित होने का समाचार मिला।

नगरपाल के सेवा में उपस्थित होते ही महामात्य बोले—"शत्रु के आक्रमण के प्रतिरोध को निर्बल करने का कोई भी कारण नहीं होना चाहिये। राजशक्ति प्रजा की कातर करुणा पर निर्भर नहीं कर सकती। राजशक्ति को प्रजा का सम्मान और विश्वास चाहिये। इस समय कलिंग के राज्य और राजेश्वरी के प्रति यह कर्त्तव्य और यही धर्म है। अब युद्धकाल में महारानी का राजप्रासाद से बाहर आना उचित न होगा। सामन्त प्रताप को आदेश दिया जाये कि महारानी के प्रासाद में प्रवेश करते ही राजप्रासाद के द्वार

मुंद जायें और युद्धकाल में न खुलें। राजप्रासाद में महारानी के विनोद के लिये जो भी आवश्यक हो किया जाये परन्तु महारानी प्रासाद से नहीं निकलेंगी।"

नगरपाल ने सिर झुका कर शंकित स्वर में निवेदन किया—"महामति आचार्य के आदेश का पालन होगा परन्तु महारानी राजमाता के बिना प्रासाद में न लौटने का हठ किये बैठी हैं। उनकी इच्छा के विरुद्ध उन्हें प्रासाद में कैसे ले जाया जा सकेगा ?"

आचार्य के माथे पर चिंता की सदा बनी रहने वाली रेखायें और भी गहरी होगईं। पल भर वे नगरपाल के नेत्रों में देखते मौन रहे और फिर प्रतारणा के स्वर में बोले—"चित्ररथ इसी बुद्धि से नगर की व्यवस्था करता है ? नगरपाल एक बालिका के हठ का उपाय नहीं कर सकता ?"

महामात्य से आदेश और भर्त्सना पाकर जिस समय नगरपाल चिंता से सिर झुकाये राज-पथ के चौक में पहुंचा संध्या का अंधकार गहरा हो चुका था और महारानी की पालकी के चारों ओर भीड़ बढ़ गई थी। नगरपाल ने भीड़ से कुछ अन्तर पर ही अपने घोड़े को रोक लिया और संकेत से एक राजपुरुष को बुलाकर बहुत धीमे स्वर में बात की और फिर राजपुरुष को सवारी के लिये अपना घोड़ा दे कर राजप्रासाद की ओर भेज दिया। नगरपाल स्वयं दूरी और अंधकार के कारण श्यामल दिखाई देती राजप्रासाद की अट्टालिकाओं की ओर देखता खड़ा रहा।

प्रासाद के द्वार के तोरण पर मशालें जल गईं। प्रासाद में और भी कई स्थानों पर दीपक जलने लगे परन्तु अन्तःपुर के दक्षिण भाग की अट्टालिका के दूसरे तल्ले पर अंधकार ही था। राजमाता के तीर्थयात्रा के लिये जाने के पश्चात से प्रासाद के उस भाग में अंधकार ही रहता था। परन्तु नगरपाल के देखते-देखते राजमाता के कक्ष के गवाक्षों में भी कई दीपक जल उठे।

नगरपाल ने कुछ और राजपुरुषों और साधारण लोगों को समीप बुला-कर कुछ आदेश दिया। यह लोग तुरंत महारानी की पालकी के समीप आगये और विस्मय के स्वर में पालकी को घेरे अंग-रक्षकों को संबोधन करके बोले—"अरे देखो, आज राजमाता की अट्टालिका में प्रकाश हो रहा है। क्या राजमाता तीर्थ-तप से लौट आई हैं ?"

ऊँचे स्वर में कही गई यह बात अमिता ने भी सुनी। उसे भी माता

की अट्टालिका में दीपक जलते दिखाई दिये। अमिता हर्ष से ताली बजा कर पुलकित स्वर में पुकार उठी— "अम्मा आगई ! अम्मा आ गई !"

नगरपाल द्वारा भेजे हुए राजपुरुषों ने विनय से भूमि स्पर्श कर निवेदन किया—"परमभगवती आदेश दें तो पहले सेवक जाकर देखें ?"

"नहीं, नहीं !"—अमिता ने ऊँचे स्वर में पुकार कर उत्तर दिया, "हम जायंगे। हम पहले जायंगे। सबसे पहले अम्मा के पास जायंगे।" वह स्वयम् पालकी पर जा बैठी और पुकारने लगी, "जल्दी चलो ! अम्मा के पास जल्दी चलो !"

बालिका महारानी के लिये राजकीय पालकी के वाहक राजप्रासाद की ओर चल पड़े। हिता, कंचुकी, अंग-रक्षक, यवनियां सब पालकी के साथ भागते हुए चले जा रहे थे। पालकी के प्रासाद के मुख्य द्वार के आंगन में प्रवेश करते ही प्रासाद के विशाल कपाट मुंद गये और उनके न खुलने का आदेश दे दिया गया।"

×

## आचार्य की विवशता

कलिंग नगर के पूर्व भाग में प्राचीर के भीतर पुराना और जीर्ण शीर्ष दुर्ग खड़ा था। किसी समय यह दुर्ग नगर की प्राचीर से कुछ अंतर पर, बाहर था। उस समय दुर्ग समुद्री डाकुओं से नगर की रक्षा के लिये सैनिकों की चौकी थी। महाराज करवेल के पितामह महराज विशारख ने समुद्री डाकुओं का मूल नाश कर दिया था। नगर की बस्ती शनैः-शनैः बढ़ती गई। नगर की पुरानी प्राचीर को तोड़कर नई प्राचीर बनाई गई तो दुर्ग प्राचीर के भीतर आगया। दुर्ग के चारों ओर समुद्र से मछली पकड़ने वाले मछुओं की बस्ती बन गई थी। युद्ध आरम्भ होने के समय राज्य की उत्तरी सीमा से आये हुए शरणार्थियों ने दुर्ग में डेरा डाल लिया था। कुछ मास वे निर्विघ्न इस दुर्ग को अपना घर बनाये रहे परन्तु नगर में बलि-निषेध की घोषणा के परिणाम स्वरूप होगये उत्पात ने समय सैनिकों ने एक रात दुर्ग को घेर कर सब शरणार्थियों को खदेड़ दिया और दुर्ग पर पहरा लगाकर बैठ गये।

बलिनिषेध कांड के पश्चात् से महामात्य का परम विश्वासपात्र उप-सामंत यूथप एक सौ सशस्त्र पदांक सैनिकों को लेकर सदा दुर्ग को घेरे रहता था। कोई भी जन-साधारण दुर्ग के भीतर तो क्या दुर्ग के समीप भी नहीं जा सकते थे। प्रजा और पौर जन में दुर्ग के सम्बन्ध में कई प्रकार की रहस्यपूर्ण किवदन्तियां फैल गई थीं। कोई लोग कहते थे—चंड अशोक ने अट्ठानबे भाइयों की हत्या करदी है। उस के एक शेष रह गया भाई मगध से भाग कर कलिंग में शरणागत है। कुछ लोग कहते कि मगध के कुछ सेनापतियों को उत्तर सीमा पर युद्ध से बंदी बना कर महामात्य ने इस दुर्ग में रखा है। युद्ध के पश्चात् उन का न्याय होगा। कुछ लोगों का विश्वास था कि दुर्ग में कामरूप देश से आये महान तांत्रिक अशोक के विध्वंस के लिये यंत्र शक्ति की साधना कर रहे हैं। इस कल्पना का एक कारण भी था :—

दुर्ग के द्वार से केवल एक दासी पूजा के नैवेद्य का पात्र लिये दिन के पहले पहर निकलती थी और नगर के किसी देवालय अथवा चैत्य में नैवेद्य अर्पण करके लौट आती थी। वह दासी सम्भवत: गूंगी थी अथवा मौन-व्रत धारण किये थी। आसपास के लोगों ने उसे कभी किसी से बोलते नहीं देखा। महामात्य ने राजमाता को युद्धकाल के लिये दुर्ग में सुरक्षित कर उनकी सेवा के लिये उपयुक्त दास-दासी नियुक्त कर दिये थे। इन में से केवल दासी मातंगी को ही राजमाता की पूजा का नैवेद्य लेकर नगर में जाने की आज्ञा थी।

मातंगी आचार्यकुल की वंशक्रमागत दासी थी और महामात्य की विशेष विश्वासपात्र थी। मातंगी राजमाता की पूजा का नैवेद्य किसी देवालय अथवा चैत्य अर्पण कर लौटते समय प्रतिदिन अथवा दूसरे दिन आचार्य की हवेली में जाकर राजमाता का कुशलक्षेम कह आती थी।

शीष दुर्ग में विवश हो जाने पर राजमाता ने आत्म-सम्मान की रक्षा और मन के शत्रुओं काम, क्रोध, लोभ मोह को वश में करने के लिए चिर मौन धारण कर लिया था। वे बहुत समय तक ध्यान में बैठी रहतीं अथवा धर्म ग्रन्थों और सूत्रों का पाठ करती रहतीं। वे स्वयं कभी किसी को पुकार कर न बोलतीं। कोई प्रार्थना या निवेदन किया जाने पर संकेत से अथवा 'हां-ना' संक्षिप्त उत्तर दे देतीं।

मातंगी को महामात्य का आदेश था कि राजमाता के व्यवहार पर सतर्क

दृष्टि रक्खे। निरंतर राजमाता की ओर ही ध्यान रखने से उनके व्यवहार के कारण मातंगी के मन में उनके लिए श्रद्धा और अनुराग उत्पन्न होने लगा। राजमाता तो मौन रहतीं परंतु अपने ही संतोष के लिए मातंगी का मन चाहता कि राजमाता उसे कोई आज्ञा दें, वह उन की कोई सेवा कर सके। मातंगी के लिए नगर से लौट कर सदा मौन बने रहना कठिन था। वह अन्य दास-दासियों से कुछ कहती और संवाद राजमाता तक पहुंचता। इस से यह ही अच्छा था कि वह राजमाता के समीप ही सब कुछ कह कर उनका विश्वास पा सकती। इस प्रकार राजमाता की विश्वासपात्र बनती और महामात्य की विश्वासपात्र भी बनी रहती। कूटनीति के वातावरण में रह कर निरक्षर होते हुए भी मातंगी को कूटनीति के व्यवहार का ज्ञान था।

चार-पाँच वर्ष की बालिकाओं को देख कर मातंगी की स्मृति क्षुब्ध हो जाती थी। छब्बीस-सत्ताइस वर्ष पूर्व इसी आयु की उसकी बेटी किसी रोग के कारण उस की गोद सूनी कर गई थी। सन्तान के वियोग का दुख उस के मन से कभी दूर न हुआ। मातंगी ने नगर में माँ के वियोग से व्याकुल बालिका महारानी की मां को ढूंढ़ते फिरने की बात सुनी तो उस का अपना हृदय व्याकुल हो कर आँखों में आँसू आ गये। राजमाता के सामने बैठ कर वह संवाद उन्हें सुनाये बिना रहना मातंगी के लिए असंभव हो गया। इस से पूर्व वह राजमाता को महासेनापति के सेना लेकर सीमा पर कूच करने और आहत सैनिकों के बड़ी संख्या में नगर में आते रहने के संवाद सुना चुकी थी। शत्रु की सेना के नित्य राजधानी के समीप आते जाने के भयावह संवाद भी वह राजमाता को सुनाती रहती थी। राजमाता यह सब सुन कर नेत्र मूंद कर शरणागत मंत्र के जाप में लीन हो जाती थीं।

एक दिन देवालय में नैवेद्य अर्पण कर दुर्ग में लौट कर मातंगी ने राजमाता के सम्मुख निवेदन किया—"भगवती नगर में बहुत आतंक फैला गया है। सब ओर युद्ध से लौट कर आए आहत ही आहत दिखाई देते हैं। सब लोग कहते हैं, शत्रु राजधानी के बहुत समीप आ गया हैं। नगर में शत्रु के सैनिकों का बहुत भय है। कहते हैं, आचार्य महामात्य ने राजप्रासाद के द्वार मुंदवा दिये हैं और अनेक सशस्त्र प्रतिहारी राजप्रासाद को घेरे हैं। बालिका महारानी प्रायः एक पक्ष से नगर विहार के लिए भी नहीं आई।"

राजमाता ने उत्तर दिया—"भगवान रक्षा करेंगे।" और नेत्र मूंद कर कुछ पल तक मंत्र जाप करती रहीं। राजमाता ने नेत्र खोले तब भी मातंगी हाथ जोड़े उनके सम्मुख ही बैठी थी। राजमाता ने उसे सम्बोधन किया—"मातंगी तू एक काम करेगी ?"

मातंगी ने अनुमति में विनय से सिर झुका लिया।

राजमाता तथागत के धातु-पात्र की वेदी पर से एक सूखा हुआ श्वेत फूल उठा कर बोलीं—"यह पुष्प एक लाख मंत्र जाप की शक्ति से समर्थ है। तू इसे बेटी अमिता की दासी हिता को सौंप देना। वह इस पुष्प का कवच बना कर बेटी के शरीर पर बाँध दे। मंत्र का बल संकट में बालिका की रक्षा करेगा।"

मातंगी ने भूमि पर माथा रख कर राजमाता को प्रणाम किया और मन्त्र की शक्ति से सबल फूल को अंजलि में ले लिया।

दूसरे दिन मातंगी राजमाता की पूजा का प्रासाद लेकर शीष दुर्ग से चली तो नैवेद्य चैत्य में अर्पण कर पहले आचार्य की हवेली में गई। शीष दुर्ग में सब यथावत कुशल क्षेम होने का संवाद हवेली में दे कर राजप्रासाद के सम्मुख राजपथ पर पहुंची। पथ पर मातंगी की पुरानी परिचिता एक वृद्धा की दही बेचने की दुकान थी। वृद्धा की कुशल-क्षेम पूछ कर मातंगी ने नगर में फैले त्रास के प्रति चिंता प्रकट की और फिर बोली—सुना है, राजप्रासाद में नित्य रक्षा के लिए बड़ी भारी पूजा होती है। सहस्रों प्रसाद बांटे जाते हैं। कई सौ बालक नित्य क्रीड़ा के लिए प्रासाद में जाते हैं।"

वृद्धा मुंह फुला कर बोली—"कौन कहता है ? दूर जाकर बात बड़ी हो जाती है। हम तो यहाँ द्वार के सन्मुख ही रहते हैं। अब राजप्रासाद में है ही क्या ? अब तो प्रासाद के द्वार के कपाट भी नहीं खुलते। यही दस-पन्द्रह बालक-बालिका राजप्रासाद में जाते हैं। वही जो कुछ प्रसाद पाते हों।........"वह क्या" वृद्धा ने मार्ग पर जाती बालकों से घिरी हिता की ओर संकेत किया, "सामने बालकों के लिए महारानी की दासी हिता ही तो जा रही है। तू देख ले, कितने सैकड़ों बालक जा रहे हैं ! यही दासी तो महारानी के लिए चुन-चुन कर पुतलियाँ और बालक-बालिकाओं को ले जाती है।"—वृद्धा कहती गई, "अरे हमें क्या लेना है राजप्रासाद के प्रसाद से।

पहले दिन में धरण डेढ़-धरण का दही, मुरमुरा मिठाई, कुछ बिक ही जाता था, निर्वाह हो जाता था। जब से नगर सेठ की रखेल दासी ने पड़ोस में बुटी भाँग की दुकान खोल ली है, वह भी गया। वह मरी बुढ़ापे में भी छल चरित्तर·······"

मातंगी वृद्धा की बात आधी ही छोड़ घुटनों पर हाथ धर कर उठ गई और बोली—"चलूं ! हवेली में बच्चे मुझे पुकार कर रोने लगते हैं।"

मातंगी पहले धीमे और यथा-सम्भव द्रुतगति से हिता के पीछे चल दी। हिता के समीप पहुंच कर मातंगी बोल उठी—"बेटी देख, यह तेरा कार्षापण गिर गया। उतावली में इतनी बेसुध क्यों हो रही है !"

मातंगी ने भूमि की ओर झुक कर उठते हुए एक कार्षापण हिता की ओर बढ़ा दिया।

हिता के नगर-पथ पर आने पर कभी-कभी सेठ सौमित्र की कोई दासी किसी बहाने मिल कर बात कर जाती थी। वह महारानी की माता के लिये व्याकुलता का समाचार जान कर सेठ्ठी की ओर से कोई संवाद भी दे जाती।

हिता ने अपरिचिता वृद्धा दासी को देख कर अनुमान किया, यह सेठ की ही दासी है, कुछ कहना चाहती है। हिता ने मातंगी के हाथ से कार्षापण ले लिया और बोली—"जब आँचल से गिर गया तो यह मेरे पास नहीं रहना चाहता।" अपने साथ के कंचुकी को सम्बोधन कर बोली—"मामा, यह तुम्हारे ही भाग का है। प्यासे तो होंगे ही। मौसी की दूकान कौन दूर है ? वह देखो पीछे·······"

कंचुकी पालित की मद्य की प्यास कभी तृप्त नहीं होती थी। वह कार्षापण लेकर हिता को आशीर्वाद दे मौसी की दुकान की ओर लपक गया।

मातंगी हिता के साथ-साथ ही चल रही थी। हिता के कान के समीप मुंह ले जा कर बोली—"भगवती राजमाता का संदेश है। राजमाता को तुझ पर विश्वास है············"

"राजमाता तो तीर्थाटन के लिए गई हैं"—हिता ने विस्मय और संदेह प्रकट किया।

"इस बुढ़ापे में मुझे क्या लोभ है ?......क्यों झूठ बोलूंगी ?"—मातंगी बोली, "मेरा विश्वास कर। तुझ से कुछ माँग नहीं रही हूं। राजमाता श्रीष दुर्ग में हैं। तू उन्हें वहीं बन्दी समझ। मैं राजमाता की सेवा में नियुक्त आचार्य की हवेली की दासी हूं। समझी !"

अपना विस्मय वश कर हिता ने प्रश्न किया—"भगवती का क्या संदेश है ?"

मातंगी ने बताया—"राजमाता तप कर रही हैं परन्तु बेटी के लिए मां कैसे चिंतित नहीं होगी। राजमाता ने एक लाख मंत्र जाप से सशक्त कर एक पुष्प दिया है। इस पुष्प को कवच में रख कर संकट से रक्षा के लिए महारानी के शरीर पर बांधना होगा। ऐसी राजमाता की इच्छा है।"

हिता ने मातंगी के आँचल में रखा हुआ फूल का दोना आदर से अंजली में लेकर अपने आंचल में रख लिया और सजल नेत्रों से बोली--"महारानी सकुशल हैं परन्तु माता के लिए अति व्याकुल हैं। भगवान और देवता की दया ही सहाय है। परमभगवती को दासी का प्रणाम कहना।"

राजप्रासाद से बाहर नगर में जा सकने का अवसर न रहने से ही अमिता की माता के लिये व्याकुलता समाप्त नहीं हो गई। प्रासाद के कर्मान्तधिष्टायक सामन्त प्रताप इस कारण बहुत चिंतित थे। सामन्त ने हिता को बुलाकर कठोर चेतावनी दी—"तेरी सूझ-बूझ और बुद्धि को क्या हो गया ? तू अब राजसेवा के योग्य नहीं रही। बालिका को भी बहला नहीं सकती ? महारानी के व्याकुल होने का समाचार मिलने पर दासियों में ही अब परिवर्तन करना होगा"—सामन्त हिता को सुनाकर उद्दाल से दूसरी चतुर दासियों के सम्बन्ध में बात करने लगा और सिर झुकाये खड़ी हिता की ओर देखकर बोला—"इस के लिये दंडक को कोई दूसरे काम की व्यवस्था करने को कहो या इसे कुछ समय के लिये काल कोठड़ी में ही डाल दो। जब यह किसी प्रयोजन की नहीं तो इसे महारानी के पीछे-पीछे लगाये रखने का उपयोग क्या ?... अच्छा, अभी जाय। हम दूसरी दासी के सम्बन्ध में सोच लें।"

हिता लौट कर बहुत रोयी। उसे जान पड़ रहा था कि वह बहुत ऊँचे नारियल के वृक्ष पर लगे फल को पा लेने की आशा में, भय की चिंता न कर बहुत ऊंचे चढ़ गई परन्तु वृक्ष के ऊपर फल नहीं है, एक राक्षस बैठा मिला जो उसे धक्का देकर निर्ममता से नीचे फेंक रहा है। उस की कल्पना थी, राज्य, प्रजा और सब कुछ महारानी के लिये ही है। महारानी के दुख से परास्त होकर महामात्य को महारानी की इच्छा पूर्ण करना ही होगी। महारानी की इच्छा की नाव में छिपकर बैठे चूहे की तरह वह भी बाधाओं की नदी के पार पहुंच जायगी। परन्तु आचार्य महामात्य तो राक्षस से भी कठोर निकला। वह तो स्वयं ही राजा बन गया है। उसी ने मोद को बांध कर जंगली मार्गों पर बहंगी में युद्ध की सामिग्री ढोने के काम में लगा लिया है।

हिता को मौसी से रहस्य समाचार मिला था कि सहस्रों लोगों को, जिन से राजपुरुष अप्रसन्न हैं, पकड़-पकड़ कर युद्ध की सामग्री बहंगियों में रणक्षेत्र की ओर ले जाने के लिये लगा दिया गया है। ऐसे सहस्त्रों लोग नगर से रात-दिन शस्त्र और अन्न बहंगियों में ढोकर रणक्षेत्र से घायल सैनिकों को बंहगियों में उठा कर नगर में लाते हैं। इन लोगों के मार्ग में थक कर शिथिल हो जाने से राजपुरुष इन्हें कोड़े मार-मार कर शीघ्र चलने के लिये विवश करते थे।

हिता महारानी के लिये पुतलियों और पशुओं के चेहरे लेने के लिये बिठ्ठल के यहां गई और उसे मौसी से मिला समाचार बताकर पूछा—"क्या यह सत्य है?"

बिठ्ठल ने उदास स्वर में उत्तर दिया—"ऐसा ही सुना है। यह राज-पुरुष हल का काम सुई से ले रहे हैं। इनका क्या भला होगा? मुझ से कहते तो मैं मोद के स्थान पर इन्हें चार दास दे देता। वैशाली की नर्तकी की पालकी अधूरी ही पड़ी है परन्तु जाकर नगरपाल के सम्मुख कुछ कहूँ तो राज्य-कार्य में हस्ताक्षेप का अपराधी बनूं।"

मोद की अवस्था का अनुमान कर हिता का मन टुकड़े-टुकड़े हो जाता। उसने एक ही बार दंडक की अप्रसन्नता से एक कोड़े की चोट पीठ पर सही थी। उस स्मृति से ही उसके शरीर का रोम-रोम कांटों की तरह

खड़ा हो जाता था। न जाने वैसे कितने कोड़े मोद के शरीर पर पड़ते होंगे। मन ही मन सोचती—मेरा वश चलता तो मैं अपनी पीठ की ढाल बनाकर मोद को कोड़ों की चोट से बचा लेती। मेरे शरीर के टुकड़े-टुकड़े उड़ जाते तब भी मैं मोद पर चोट न आने देती। कोड़ों से बचने के लिये मोद को धूप और धूल में कितना बोझ उठाये दौड़ते रहना होता होगा ? थकान, प्यास और गरमी से उसकी क्या अवस्था होती होगी ? कितना पसीना उसके शरीर से बहता होगा ,.....जैसे सरोवर में डुबकी लेकर निकला आदमी जान पड़ता है। हिता का मन चाहता, सामंत प्रताप उसे भी दंडक के यहां कोड़ों से मारा जाने के लिये भेज दे। जिस पीड़ा को मोद सहता है, वह भी सहे। वैसे ही प्राण दे दे। यदि मोद की मृत्यु का समाचार मिला तो वह अवश्य प्राण दे देगी। प्रासाद की छत से कुंए में कूद कर प्राण दे देगी।

हिता को सेठ सौमित्र पर क्रोध आता—सेठ ने ही मुझे महारानी को माता की स्मृति से व्याकुल करने की मूर्खता सुझाई। सेठ ने ही मोद को देवालय में शंख बजा कर राजमाता के लौटने का वरदान देवताओं से मांगने के लिये कहा। इतने लोगों का सर्वनाश करके उस दुष्ट को क्या मिला ? नहीं तो नगर में जाकर मोद को देख आने का, उस से दो-चार बात कर पाने का संतोष तो मिलता ही था। भगवती राजमाता भाग्य से जब लौटतीं, देखा जाता। हम तो संतोष किये बैठे थे। इस दुष्ट सेठ्ठी ने ही आग लगा कर सब कुछ भस्म कर दिया।

सामंत प्रताप के क्रोध के सामने सिर झुका लेने के अतिरिक्त हिता और कर ही क्या सकती थी। परन्तु इतने दिन तक गुप्त उपायों से भड़काई हुई माता की स्मृति बालिका के हृदय से सहसा कैसे विलीन हो जाती। अमिता नींद से उठी तो उसने हिता से कहा—"हितू, आज अम्मा स्वप्न में नहीं आईं।"

हिता के मुख पर भय की छाया आगई। उसने कातर स्वर में अनुरोध किया—"भगवती अम्मे, माता को ऐसे याद नहीं करते। भगवती अब वयस्क हो गई हैं।"

हिता के मुख पर भय और उस के स्वर की कातरता से अमिता को विस्मय हुआ। उसने पूछा—"क्यों याद नहीं करते ?"

किसी दूसरे के आ जाने से पहले ही हिता ने दबे स्वर में तुरन्त समझाया—"लोग देखेंगे कि महारानी अम्मा को याद करती हैं तो दंडक दासी को कोड़ों से मारेगा।"

अमिता मौन रह गई परन्तु जब हिता उसे स्नान करा रही थी तो अमिता ने एकान्त देखकर फिर पूछ लिया—"हम अम्मा को याद करेंगे तो तुझे दंडक क्यों मारेगा ?"

हिता की आँखों में आंसू आ गए, बोली—"अम्मे भगवती, दासी का भाग्य ही ऐसा है। महारानी लोगों के सामने माता को याद न करें।"

हिता के दुखी होने का भय बालिका के मन पर बैठ गया। उसने किसी के सामने रहते माता को याद नहीं किया। याद आने पर वह उदास हो जाती और एकांत पाने पर केवल हिता से माता की बात करती। हिता अमिता को हृदय पर दबा कर आश्वासन दे देती—"अम्मे महारानी, दासी बलिहारी जाये। राजमाता एक दिन अवश्य आयेंगी"—और उसे कल्पना में दिखाई देता, राजमाता के आने पर वह मोद की रक्षा के लिए प्रार्थना करेगी। परिणाम जो भी हो, वह रो-रो कर प्रार्थना अवश्य करेगी।

अमिता का हिता से मां को एकान्त में याद करने का रहस्य-सम्बन्ध स्थापित हो गया। अमिता के लिए केवल हिता ही विश्वासपात्र हो गई। अमिता रहस्य रखना भी सीख गई। जब भी वह हिता से माता के सम्बन्ध में बात करना चाहती हिता को प्रमद-उद्यान में अथवा राजप्रासाद की छत पर चलने के लिय आग्रह करती। प्रासाद की छत पर जाकर हिता कई पल राजपथ की ओर दृष्टि लगए रहती, सम्भव है किसी अवसर से मोद दूर मार्ग पर दिखाई दे जाये।

विनोद के लिए महारानी के नगर में जाने का निषेध था। प्रासाद में उनके विनोद के लिए सभी सम्भव उपाय किये गये थे। इसके अतिरिक्त हिता नगर में जाकर कुछ बालक-बालिकाओं को महारानी के साथ खेलने के लिये ले आती थी। अब इसी बहाने वह कभी मौसी के यहाँ जाकर सुख, दुख की बात कर आती अथवा बिठ्ठल से मोद के विषय में संवाद पूछ आने की साध पूरी कर लेती। परन्तु संवाद तो कुछ था नहीं। उस दिन जब उसे मातंगी से राजमाता के सुदूर तीर्थ न जाकर श्रीष दुर्ग में ही होने का समाचार

मिला तो वह इतनी विक्षिप्त हो गई कि एक स्थान पर बैठ पाना असम्भव जान पड़ने लगा। अधीर हो कर वह बार-बार अमिता को गोद में ले हृदय से लगा लेती। अमिता ने हिता की व्याकुलता से विस्मित होकर पूछा—"क्या है हितू ?"

हिता ने रहस्य बताने से भयभीत होकर कहा—"अम्मे महारानी, कुछ नहीं। दासी महारानी पर बलि जाये।" परन्तु इतने बड़े रहस्य के बोझ से उसे श्वास म अवरोध-सा अनुभव हो रहा था। प्रासाद में यह बात वह किस से कहती ? मां से कहने पर मां केवल शिक्षा देती, तू चुप रह। तुझे क्या ? ऐसी बात फिर जिह्वा पर लायेगी तो जिह्वा को ही खो बैठेगी।"

सेठ सौमित्र के परामर्श से ही हिता ने सब संकट पाया था परन्तु यह रहस्य वह सेठ सौमित्र के अतिरिक्त और किसे बता सकती थी ? हिता कंचुकी पालित को रक्षा के लिए साथ ले कर महारानी के लिए पुतलियाँ लाने के काज से सेठ बिठ्ठल के यहाँ गई। बिठ्ठल हिता को देख कर मोद की हानि याद कर उदास हो जाता था परन्तु राजप्रासाद के लोगों की, चाहे वे दास ही हों, उपेक्षा कैसे कर सकता था। उसने दक्षिणा स्वरूप हिता के हाथ में आधा धरण और पालित के हाथ में कुछ कार्षापण रख दिए। हिता ने बिठ्ठल से पाया आधा कार्षापण भी पालित के ही हाथ में रख कर कहा—"मामा, तुम्हें कब अवसर मिलता है तुम मन भर पी लो ! मैं धरण का क्या करुंगी ? तुम्हारे आने तक बैठी हूं। शीघ्र आना।"

हिता ने पालित को मद्य की दुकान से शीघ्र लौट आने के लिए तो कहा परन्तु जानती थी, इतने कार्षापण पाकर पालित डेढ़-दो घड़ी से पूर्व नहीं लौटेगा। पालित के जाते ही वह द्रुत-गति से अकेली सेठ सौमित्र की हवेली की ओर चल दी। सेठ के कक्ष का द्वार-रक्षक सेवक हिता को पहचान गया। तुरंत ही सेठ ने उसे भीतर के कक्ष में बुलवा लिया।

हिता ने पहले आंसू बहा कर सेठ के परामर्श पर चलने के कारण मोद की दुरावस्था का हाल बताया और अपनी दुरावस्था भी सुनाई कि सेठ के परामर्श के कारण वह भी प्रासाद के कर्मान्तिधिष्टायक सामन्त के क्रोध का पात्र बन गई है। अब दासी क्या करे ?

सौमित्र मोद और हिता की दुरावस्था सुन कर बोला—"तू समझ,

आचार्य के अन्याय से कौन बचा है ? तू राजमाता की और महारानी की एक-मात्र विश्वस्त दासी है। तू यह नहीं करेगी तो कौन करेगा ? परन्तु देवता तो समय लेकर प्रसन्न होता है। देवता तप की परीक्षा लेता है ? तुझे देवता पर विश्वास नहीं है ? क्या आचार्य की दया पर विश्वास करेगी ?"

हिता अब अपना रहस्य और अधिक न छिपा सकी, बोली—"स्वामी जानते हैं, महारानी दूर तीर्थ में तप करने नहीं गई हैं। इसी नगर में श्रीष दुर्ग में हैं। दुर्ग को सशस्त्र प्रहरी घेरे हैं। वहां किसी का प्रवेश नहीं है।"

हिता से रहस्य की बात सुन कर सेठ कुछ पल विचार में मौन रहा और फिर अपनी आंखों को आधा मूंद, दृष्टि को तीव्र कर हिता के नेत्रों में देख कर बोला—"यह क्या तू नहीं जानती थी ? यदि तू उस दिन महारानी को उत्तर सिंह-द्वार पर न ले जाकर श्रीष दुर्ग ले गई होती तो क्या होता ? महारानी बालिका हैं तो क्या ?....उनके लिये कौन द्वार मार्ग रोक सकता है ?........मोद की रक्षा राजमाता के आदेश के अतिरिक्त और कौन कर सकता है ? राज आचार्य का नहीं, राजमाता का ही है। राजमाता जानती नहीं क्या अनाचार हो रहा है ? वे इतनी निकट हैं तो निराशा क्यों ?"

हिता ने निराशा से अपने दोनों हाथ फैला कर विवशता प्रकट की—"स्वामी, अब तो महारानी प्रासाद में बंदी हैं। प्रासाद के द्वार खुल ही नहीं सकते।....इस दासी का क्या समर्थ ?"

सेठ ने हिता की ओर झुक कर समझाया—"तू अपना सामर्थ्य नहीं जानती ? तेरी चतुरता से नगर में त्राहि-त्राहि मच गई है। तू जानती है यह आचार्य का भेद है। भेद को भेद ही काटता है। भेद का मार्ग खोजने में स्त्री से अधिक चतुर कौन हो सकता है ? आचार्य की बंदी बनी हुई बालिका महा-रानी की प्राण-रक्षा का भी क्या विश्वास ? और मोद की रक्षा भी राजमाता के आदेश के अतिरिक्त कौन कर सकेगा ?"

सामन्त प्रताप ने राजप्रासाद में विनोद के सभी सम्भव आयोजन प्रस्तुत कर दिये थे कि महारानी को नगर में जाने की इच्छा ही न हो। प्रासाद का सभा-भवन पुतलियों, दूसरे खिलौनों, फल-फूलों और मिठाइयों से भरा रहता। प्रासाद के भीतर बंदर-भालू का नाच कराने वालों और नटों के भी दल सदा बने रहते परन्तु बालिका महारानी का सब से प्रिय खेल

पशुओं की सभा में गीदड़ का राजतिलक उत्सव था। पशुओं का यह नाटक एक प्राचीन लोक-कथा के आधार पर था :—भूख से व्याकुल एक गीदड़ जंगल से गाँव में चला गया था। गांव के कुत्तों ने गीदड़ का पीछा किया। प्राण बचाने के लिए भागता हुआ गीदड़ एक ललारी के नील से भरे कुंड में गिर पड़ा। कुंड से निकलने पर गीदड़ का रंग नीला हो गया। नील से रंगा गीदड़ बन में लौटा तो दूसरे पशु उसे पहचान न सके और उस से डरने लगे। जंगल के राजा सिंह ने भय से डरते-डरते आकर नीले गीदड़ से पूछा—"हे विचित्र जीव, तू कौन है ?"

नीले गीदड़ ने अवसर देख कर गम्भीर स्वर में उत्तर दिया—"हे बन के पशुओ, मुझे भगवान ने स्वर्ग से भेजा है कि मैं पृथ्वी के बनों पर राज करूं।"

प्रासाद में इकट्ठे हुए सब बालक-बालिका और अमिता सिंह, चीते, हाथी, भालू, भैंसे, भेड़िये, कुत्ते आदि के चेहरे पहन लेते। जो बालक जिस पशु का चेहरा पहन लेता, वह उसी पशु की बोली भी बोलने लगता। स्वर्ग से राज करने आये नीले गीदड़ का चेहरा पहनने वाला बालक नीले रंग का चोला भी पहन लेता। नीले गीदड़ को राजगद्दी पर बैठा कर उस का राजतिलक किया जाता। तब हिता या वापी गीदड़ों की तरह हुआं-हुआं करके बोली बोलने लगतीं। नीला गीदड़ भी पुराने अभ्यास-वश वैसी ही बोली बोलने लगता। दूसरे बन-पशु पहचान जाते कि उनका राजा बन जाने वाला तो वास्तव में गीदड़ ही है। सब पशु नीले गीदड़ पर टूट पड़ते और उस का पीछा करके दौड़ते, भागते फिरते। अमिता को नीले गीदड़ के राजतिलक के उत्सव में बहुत आनन्द आता था। यह खेल कई बार होता और कई बालक बारी-बारी से नीला गीदड़ बनते रहते।

अमिता दोपहर की नींद से उठी तो हिता उस का मुख धुलाने और कुल्ला कराने के लिए गोद में उठा कर शयन-कक्ष के समीप स्नान के कक्ष में ले गई। अवसर देख कर हिता ने अमिता के कान से मुख लगा कर कहा—"अम्मे महारानी, राजमाता तीर्थ से नगर में लौट आई हैं। दुष्ट आचार्य और सामन्त उन्हें यहाँ आने नहीं देते। महारानी किसी से कुछ न कहें। जैसे दासी कहे, चुपचाप नगर में साथ चलें तो खेल के पश्चात सन्ध्या समय राजमाता के पास चले जायेंगे।"

अमिता हिता से रहस्य रखने की शिक्षा पा चुकी थी। उसने अपनी भोली आंखों से हिता को विश्वास दिलाया—"अच्छा!" वह रहस्य रखेगी और दासी के साथ नगर में जायेगी।

दोपहर के पश्चात बालक रंगे सियार के राजतिलक का खेल खेल रहे थे। खेल एक बार समाप्त हो जाने पर कई बार खेला गया। खेल समाप्त हो जाने पर बालक पशुओं के चेहरे पहने प्रमद-उद्यान में जाकर एक दूसरे को पहचानने का खेल खेलने लगे। अमिता अपने वस्त्रों के कारण पहचान ली जाने से चिढ़ रही थी। हिता ने उस के वस्त्र खेलने वाले बालकों में अदल-बदल दिये। बालक चेहरे पहने-पहने ड्योढ़ी के आंगन के बांई ओर के बड़े आंगन में जाकर आंख-मिचौनी का खेल खेलने लगे। सूर्यास्त का अंधेरा हो चला था परंतु खेल से अमिता का मन नहीं भरा था। हिता ने भी खेल समाप्त करने के लिए न समझाया। उद्दाल और वापी अवस्था के कारण थक कर एक ओर बैठ गये थे तब भी हिता बालकों को बाहर के आंगन में खिलाती ही जा रही थी।

सन्ध्या का झुटपुटा अंधेरा हो जाने पर हिता ने बालकों को पुकारा—"अंधकार हो गया। चलो, तुम्हें प्रासाद से बाहर छोड़ आऊं।"

बालक चेहरे उतारने लगे तो हिता बोली—"रहने दो, रहने दो। चेहरे घर ले जाओ। घर पर भी खेलना।"

चेहरे पहने और भिन्न-भिन्न पशुओं की बोलियां बोलते बालकों का झुंड अपने चारों ओर लिए हिता प्रासाद की ड्योढ़ी के सन्मुख के आंगन में आई और प्रासाद-द्वार की ओर चल दी। उस के दोनों हाथों में दो बालिकाओं के हाथ थमे थे। इनमें से एक कुत्ते का चेहरा पहने अमिता थी। सभी बालक अपने-अपने चेहरे की बोली बोलते, उछलते-कूदते हिता के साथ चले जा रहे थे।

प्रासाद के द्वार के तोरण पर संध्या की मशालें जल चुकी थीं। द्वार के समीप पहुंच कर बालक द्वारपाल सैनिकों को डराने के लिये ऊंचे स्वर में जीवों की बोलियां बोलने लगे। अमिता भी कुत्ते की तरह भौंक रही थी। द्वारपाल भी हंसने लगे। सैनिकों ने द्वार के मुंदे हुए विशाल कपाटों की बगल में एक छोटी खिड़की बालकों के बाहर जाने के लिये खोल दी।

हिता के रोम-रोम से पसीना छूट रहा था। यदि कुछ पूछ लिया जाता तो उसके मुख से शब्द न निकल पाता। वह दांतों से होंठ दबाये, महारानी

और एक दूसरी बालिका के हाथ अपनी मुट्ठियों में दबाये, अनेक बोलियों का कोलाहल करते बालकों से घिरी हुई, उन्हें कुछ दूर छोड़ आने के लिये उन के समूह में प्रासाद के मुंदे द्वार से बाहर होगई।

प्रासाद के द्वार से कुछ ही दूर तोरण पर जलती मशालों के धुंधले प्रकाश में, भीतर गये बालकों को लेने आये दास, सेवक अथवा सम्बंधी प्रतीक्षा में खड़े थे। वे बालकों के चेहरे छिपे होने के कारण उन्हें पहचान नहीं पा रहे थे। परन्तु बालक अपने-अपने चेहरे की बोली बोलते और हंसते हुए अपने आदमी का हाथ थाम कर चल दिये।

हिता अमिता का हाथ अपनी मुट्ठी मे लिये थी। उसके घुटने लड़खड़ा रहे थे। वह यथासम्भव शीघ्र गति से समीप की गली की ओर बढ़ती जा रही थी। उसे जान पड़ रहा था, वह स्वयं ही मृत्यु की खाई में कूदकर अतल की ओर गिरी जा रही है। अभी पीछे से प्रासाद के यूथप और दंडक की ललकार सुनाई देगी और उनके हाथों के खड्ग उस की पीठ में धस कर पेट से सन्मुख निकल जायेंगे।

राजप्रासाद से लगभग सौ कदम जाकर हिता अमिता का हाथ पकड़े पहली ही सकरी गली में चली गई। गली के अंधकार और एकान्त में उसने महारानी के मुखपर बंधा कुत्ते का चेहरा उतार कर फेंक दिया। गली में कुछ और कदम आगे जाकर एक साधारण गृहस्थ के घर का द्वार खुला देखकर वह अमिता को लिये उसी आंगन में चली गई।

गृहस्थ एक युवा स्त्री को अपनी बालिका का हाथ थामे अपने घर में प्रवेश करते देख ललकारने लगा—"तू कौन है?""क्या चाहती है? कहां चली आ रही है? यहां शरणार्थियों के लिये स्थान नहीं है! यह धर्मशाला अथवा देवालय नहीं है! जाओ बाहर जाओ!"

"सावधान! ससम्मान सावधान!"—"हिता ने चेतावनी दी, कलिंग की राजेश्वरी रात्रि में अपनी प्रजा की अवस्था देखने आई है। संयत होकर पहचानो!"

गृहस्थ कुछ क्षण के लिये काष्ठवत स्तब्ध हो गया और फिर उसने क्षमा याचना के लिये भूमि पर लेटकर महारानी को दंडवत प्रणाम किया। गृहस्थ की पत्नी अलिंद में खाट पर बैठी गोद में लिये शिशु को दूध पिला

रही थी। उसने भी शिशु के मुख से स्तन खींच शिशु को खाट पर रख दिया और आंगन में आ भूमि स्पर्ष कर, आंचल गले में डाल महारानी को प्रणाम किया।

शिशु सहसा मुख से स्तन छीना जाने और खाट पर रख दिये जाने से चीत्कार कर रो पड़ा। अमिता हिता का हाथ छोड़ कर शिशु की ओर बढ़ गई और उसे कौतूहल और ध्यान से देखने लगी और पुलक से पुकार उठी—"हितू देख, शिशु! कितना छोटा शिशु!"

अमिता को इतने छोटे शिशु को स्पर्ष करने और देखने का अवसर कभी न मिला था। वह उस से खेलने लगी।

गृहस्थ तुरंत जल का पात्र ले आया। उसकी पत्नी एक परात उठा लाई। वे खाट पर बैठी महारानी के चरण धोने लगे। हिता ने महारानी की ओर से गृहस्थ से प्रश्न किया—"महा-महिमामयी कलिंग की राजेश्वरी जानना चाहती है, प्रजा को कोई कष्ट तो नहीं है? प्रजा कोई प्रार्थना करे!"

गृहस्थ ने भूमि स्पर्ष कर प्रणाम से उत्तर दिया—"अन्नदाता की कृपा से सब कुशल-क्षेम है।"

अमिता रोते हुए छोटे शिशु को अपनी गोद मे ले लेने के लिये आतुर हो उठी। हिता को भय था कि अमिता के उठाने पर शिशु गिर न पड़े। हिता ने शिशु को अपने हाथों में लेकर अमिता के हाथों से छुआ दिया और समझाया—"अम्मे महारानी, शिशु भूखा है। दूध के लिये रो रहा है। वह माता का दूध पियेगा महारानी देखें।"

हिता ने शिशु को उसकी मां की गोद में दे दिया। मां का स्तन मुख में पाकर शिशु रोना भूल दूध पीने लगा। अमिता बहुत कौतूहल और विस्मय से उसी ओर नेत्र गड़ाये रही।

गृहस्थ की दूसरी सन्तान अमिता की ही आयु की बालिका थी। वह बालिका अलिन्द में एक ओर बैठी एक कटोरे में लिया भुना हुआ अन्न खा रही थी। सहसा आगन्तुकों के आ जाने और अपने माता-पिता को घबराकर दंडवत प्रणाम करते देख कर बालिका सहम गई थी परन्तु अमिता को अपने

छोटे भाई से खेलते देखकर उसका भय दूर हो गया और वह खाट के समीप आकर अमिता के सुथरे सुचिक्कण केशों और मुखको देखने लगी।

अपनी समवयस्का बालिका को अपने समीप खड़ा देखकर अमिता ने उसे सम्बोधन किया—"तेरा नाम क्या है ?"

बालिका ने उत्तर दिया—"माया।"

अमिता ने प्रश्न किया—"तेरे पास कैसी पुतली है, हम देखें ?"

माया तुरंत अलिंद के कोने से मिट्टी के दो खिलौने उठा लाई। और बोली—"पुतली है और हाथी है।"

अमिता खाट से नीचे भूमि पर उतर आई। दोनों बालिकाएं तुरंत सखी बन कर पुतली को हाथी पर बैठाने का खेल खेलने लगीं। गृहस्थ और उसकी पत्नी आदर से मौन बालिका महारानी का खेल देख रहे थे।

हिता बालकों को लेकर मुख्य-द्वार के आंगन में चली गई तो वापी चौंतरे पर से उठी और उसने उद्दाल को सम्बोधन किया—"मामा, बालक चले गये। उठो न!"

उद्दाल ने गठिये के कारण अपने जोड़ों में होने वाली पीड़ा को शाप दिया और फिर कुछ पल घुटनों को मलकर, कमर पर हाथ रख कर उठा और द्वार के आंगन की ओर जाती वापी से बोला—"उधर क्यों जा रही है। हितू महारानी को अन्त:पुर के आँगन में ही ले गई होगी। सीधे सामने के द्वार से ही चल।" दोनों भीतर के द्वार से ही अन्त:पुर के आंगन की ओर चल दिये।

अमिता के कक्ष में प्रकाश जल चुका था परन्तु भीतर कोई न था। अलिंद में खड़ी प्रतिहारी यवनी की ओर देखकर उद्दाल ने पूछा—"महारानी क्या प्रमद-उद्यान की ओर गई हैं।" और अनुमान कर लिया हिता महारानी को प्रमद-उद्यान की बावड़ी की शिला पर बैठाने ले गई होगी। अमिता को बावड़ी के थिथले जलकुंड में खेलना बहुत प्रिय था। संध्या समय हिता वहां ही महारानी के हाथ-मुख धुला देती थी। वापी ने स्नान के कक्ष में जाकर

पोंछने का वस्त्र और अमिता के जूते ले लिये और उद्दाल के साथ प्रमद-उद्यान की बावड़ी की ओर चल दी।

प्रमद-उद्यान की बावड़ी पर कोई नहीं था। वापी बोली—"तो अभी सभा-भवन में पुतलियों से खेल रही होगी।" और दोनों धीमे-धीमे कदम रखते अन्तःपुर और बाहिर के आंगन के बीच के सभा-भवन की ओर चल दिये। सभा-भवन के अलिंद में प्रकाश था परन्तु भवन के भीतर अंधकार। उद्दाल ने अलिंद में खड़ी यवनी से विस्मय में प्रश्न किया—"महारानी यहां नहीं आईं? प्रमद-उद्यान में भी नहीं हैं?"

यवनी ने विज्ञता से उत्तर दिया—"यहां-वहां ढूंढ रहे हो! जानते हो संध्या समय अन्तःपुर के पिछवाड़े बेला के झाड़ खिलते हैं। हिता पुतलियों के लिये मालाएं गुंथवाने के लिये महारानी को और कहां ले जायगी?"

उद्दाल और वापी फिर अन्तःपुर का आँगन लांघ कर पिछवाड़े पहुंचे। अंधकार में काली दिखाई देती बेला की झाड़ियों में नये खिले फूल आभाहीन हो रहे तारों जैसे जान पड़ रहे थे। चारों ओर सुगंध फैल रही थी परन्तु हिता और अमिता वहां भी न थीं।

उद्दाल खीझकर बोला—"यह तेरी चुड़ैल बिटिया हम बूढ़ों से भी आंख-मिचौनी खेलने लगी। महारानी को लेकर जाने कहां छिप गई है। पीड़ा करते जोड़ों पर मैं कहां तक भटकूंगा। तू ही उसे ढूंढ़! भंडार घर की ओर निकल गई होंगी और क्या?"

उद्दाल और वापी बेला की झाड़ियों की ओर से अन्तःपुर के आंगन में लौटे। जहां-तहां खड़ी यवनियों से पूछते भंडार घर की ओर गये। किसी ने भी महारानी और दासी को किसी ओर जाते देखने की बात स्वीकार नहीं की। उद्दाल को हिता की इस बालिश-क्रीड़ा पर बहुत क्रोध आ रहा था, ऐसी चंचलता भी क्या? वापी ने सुझाया—"अरे, नगर का प्रकाश दिखाने छत पर ले गई होगी? उद्दाल अलिंद की शिला पर बैठ गया और बोला, "मैं यहां बैठा हूं। तू छत पर जा कर लिवा ला।"

महारानी और हिता को छत पर भी न पाकर वापी का हृदय दहल गया, क्रोध भी आया—"हाँ, ऐसी चंचलता और हंसी भी क्या? मन ही मन चिंता

से कहा—लड़की में चंचलता तो इधर कई दिन से कहां रही थी ? उस का हृदय धड़क रहा था, जाने क्या हो गया है ?

महारानी के छत पर भी न होने की बात से उद्दाल आशंकित हो गया। वापी कंचुकी से भी अधिक व्याकुल हो गई। उद्दाल और वापी के आदेश और अनुरोध से सभी यवनियां और कंचुकी मशालें ले कर महारानी और हिता को ढूंढ़ने लगे। कुछ ही पल में अन्तःपुर और बाहर आंगनों के सब कक्ष, अलिंद और उद्यान खोज डाले गये। सभी से महारानी को अन्तिम बार देखने का समय बार-बार पूछा गया। यवनियां, कंचुकी, सेवक और प्रहरी घबरा गये। सभी सोच-सोच कर उत्तर देने लगे। एक बार कुछ कहते, दूसरी बार पूछा जाने पर घबराहट में कुछ और कह देते। महारानी को देख न पाने पर मौन रह जाना, उन का अपराध था।

सभी ने महारानी को कुछ ही समय पूर्व इधर या उधर जाते देखना स्वीकार किया। अन्तःपुर की ड्योढ़ी की यवनी प्रहरी ने कहा—"बालकों के खेल के पश्चात महारानी और दासी हिता अन्तःपुर में चली गईं। उन्हें फिर बाहर जाते नहीं देखा।" सभी यवनियों ने और प्रहरियों ने महारानी को हिता सहित भीतर की ओर जाते देखने की ही बात कही। महारानी को बाहर की ओर जाते देख कर वे इतने समय निश्शंक और मौन रह जाना कैसे स्वीकार कर लेते।

यवनियों, कंचुकियों और प्रहरियों के मुख पीले पड़ गये और हृदय धड़कने लगे। सभी का अनुमान था, अनजाने में सहसा कोई भयंकर दुर्घटना हो गई है। मुख से किसी ने कुछ नहीं कहा परन्तु प्रासाद के सभी कुओं में और बावड़ियों में, रस्सियों में मशालें बांध कर उतार कर भी देखा गया। वापी की आंखों से निरंतर आंसुओं की धाराएँ बह रही थीं। सब यवनियां, कंचुकी, सेवक और भीतर के प्रहरी सिंह से डर गई भेड़ों की तरह एक साथ खड़े थे। किसी को कोई उपाय या समाधान नहीं सूझ रहा था:—क्या हुआ ? क्या किया जाये।

इस परिस्थिति की सूचना प्रासाद के कर्मान्तिधिष्टायक सामन्त प्रताप को देना आवश्यक था। ऐसा समाचार सामन्त के सन्मुख ले जाने की अपेक्षा उद्दाल अपने पेट में कटारी भोंक कर प्राण दे देना ही सह्य समझता। उद्दाल के मुख से शब्द निकालना भी कठिन था। उस ने सभी यवनियों, कंचुकियों,

सेवकों और प्रहरियों से एक बार फिर पूरे प्रासाद में उद्यानों, वृक्षों के नीचे और कुओं के भीतर खोजने के लिये कहा। एक बार फिर खोज हुई परन्तु निष्फल। प्राय: दो घड़ी समय बीत गया। परन्तु प्रासाद के लोगों को जान पड़ रहा था वे महारानी को एक युग से खोज रहे हैं। वापी मूर्छित होकर गिर पड़ी। उद्दाल दोनों घुटनों पर कोहनियां रखे अपना सिर दोनों हाथों में लिए कई पल बैठा रहा और फिर आंसू भरी आंखों से मार्ग देखने में असमर्थ और हृदय तथा मस्तिष्क पर आघात से चलने में असमर्थ होने के कारण एक दास के कंधे का सहारा लेकर अपनी मृत्यु का सामना करने के लिए, साहस बटोर सामन्त प्रताप के आंगन की ओर चला।

युद्ध काल में सामन्त प्रताप केवल प्रासाद के ही प्रवन्ध में न लगे रह कर दिन के अधिकांश समय में प्रासाद से बाहर सैनिकों की भरती और उन्हें रणक्षेत्र की ओर भेजने के प्रबन्ध में भी सहयोग देता था। वृद्धावस्था के कारण घोड़े पर बहुत समय तक दौड़ने फिरने से सामन्त का शरीर चकना-चूर हो जाता था। अपने भवन में लौटने पर प्राय: एक घड़ी तक दासी उस का शरीर दबाती रहती थी तभी वह फिर उठने योग्य हो पाता। सामन्त की वृद्धा पत्नी आर्ये पृथा ने सुना कि कंचुकी उद्दाल सामन्त के दर्शन के लिए प्रस्तुत है। सामन्त को नगर से लौटे प्राय: आधी ही घड़ी समय बीता था। दासी सामन्त का शरीर दबा रही थी और सामन्त थकावट से औंघा गया था। आर्ये पृथा ने उद्विग्न होकर कह दिया—"कंचुकी अभी बाहर बैठे। आर्य पुत्र को भी कभी विश्राम की आवश्यकता होती है।"

सामन्त के दर्शन के अवसर से इन्कार सुन कर उद्दाल खड़ा न रह सका, आंगन में भूमि पर गिर सा-पड़ा और उंचे स्वर में रो उठा—"हाय भगवती महारानी!"—कंचुकी का विलाप सुन कर आर्ये पृथा का हृदय बैठ-सा गया। उन्हें पति को नींद से उठाना ही पड़ा।

उद्दाल ने रोते-रोते, बालकों से क्रीड़ा करने के पश्चात महारानी के प्रासाद में से अंतर्ध्यान हो जाने का समाचार सामन्त को सुना दिया। सामन्त जैसे आधे वस्त्र पहने था उसी अवस्था में आंगन में निकल पड़ा। सामन्त ने सब से पहले आदेश दिया, हिता की मां दासी वापी को यातना देकर रहस्य जाना जाय। सामन्त ने चार ज्योतिषियों और तान्त्रिकों को बुलाने के लिए अश्वारोही भेजने का भी आदेश दिया।

वापी मूर्छित पड़ी थी। दण्डक की आज्ञा से दो दास उसे उठा कर अनुशासन के आंगन में ले गये। उसे औषध सुंघा कर सचेत किया गया और यातना का भय दिखा कर उस से रहस्य पूछा गया, यातना भी दी गई। वह फिर मूर्छित हो गई। उसे फिर सचेत किया गया। सचेत हो जाने पर वह सौगन्धें खा-खा कर, बिलख-बिलख कर रोकर कहती रही—"मैं कुछ नहीं जानती" यातना पा कर वह फिर बेसुध हो गई।

सामन्त की आज्ञा से बहुत अधिक मशालें लेकर यवनियों, कंचुकियों, सेवकों और सैनिकों ने भी फिर से प्रासाद के सभी भागों, उद्यानों, कुओं, बावड़ियों को छाना। दासों और सैनिकों ने कुओं के जल के नीचे तल तक जाकर टटोला परन्तु सब निष्फल रहा।

सामन्त कुछ सशस्त्र सैनिकों और मशाल धारियों को लेकर प्रासाद के अन्तःपुर के-तहखाने में गुह्य मार्ग के द्वार पर गया। गुह्य मार्ग के कक्ष के द्वार को उन्होंने मशालों के प्रकाश में ध्यान से देखा। कहीं कोई चिन्ह नहीं था। वहां बनाये हुए गुप्त चिन्ह यथावत थे। द्वार मकड़ी के जाले से भी ढका हुआ था। सभी यवनियों, दासों, सेवकों और प्रहरियों को अन्तःपुर के आंगन में पंक्तियों में भूमि पर बैठा दिया गया। दण्डक के साथ कई यवन और हब्शी दास हाथों में कोड़े, सांकलें और लकड़ियाँ लिए और अनेक सैनिक खड्ग और भाले लिए खड़े थे। यवनियों और दास-दासियों पर कोड़े पड़ रहे थे। उन्हें रहस्योद्घाटन के लिए मुक्ति और धन का लोभ दिया जा रहा था। भयभीत और मूढ़ हो गये लोग जो कहा जाता उसी के लिए हामी भर लेते।

गुह्य मार्ग के द्वार का निरीक्षण कर सामंत लौटे तो ज्योतिषी और तांत्रिक आ गये थे। सामन्त ने उन्हें गणना करने के लिए कहा। एक तांत्रिक समाधिस्थ हो कर दिव्य-दृष्टि से महारानी को देखने का यत्न करने लगा। एक ज्योतिषी ने गणना कर विचार प्रकट किया—"महारानी मित्र का रुप धरे शत्रु के वश में हैं। महारानी किसी चौपाये की सवारी पर नहीं गई। किसी मनुष्य के कंधे अथवा बाहों में गई हैं। वे भित्ती में छिद्र के मार्ग से गई हैं। जिस मार्ग से गई हैं, उसी मार्ग से उन का लौटना संभव है। वे पूर्वाभिमुख जा रही हैं। पूर्व में सागर है इसलिए जल-यात्रा का भी योग हो सकता है। वे दूसरे की इच्छा के प्रभाव में हैं। वे इस सदन की परिधि से बाहर हैं

परन्तु अपने राज्य की सीमा में हैं। शत्रु महारानी द्वारा अपनी इच्छा पूर्ण कराने के लिए उन्हें ले गया है परन्तु महारानी की विजय की लग्न है। वे प्रसन्न और सकुशल लौटेंगी.......।

सामन्त ने तुरन्त दस सशस्त्र सैनिकों को मशालें ले कर राजप्रासाद की प्राचीर में छिद्र देखने के लिए भेज दिया।

तांत्रिकों ने विचार कर कहा—"महारानी को प्रासाद से शत्रुपक्ष के मंत्र-बली ने प्रस्थापन क्रिया द्वारा सशरीर स्थानांतरित कर दिया है। मंत्र प्रयोग करने वाला जब मंत्र का प्रभाव शिथिल करेगा अथवा मंत्र द्वारा क्रिया की शान्ति की जायगी तभी वे प्रासाद में लौटेंगी ?........"

सामन्त ने अधीर होकर प्रश्न किया—"गुरु, आकाश मार्ग से सशरीर स्थानांतरित कर देने की प्रबल सिद्धि की शक्ति किस सिद्ध में है।"

तांत्रिक ने रहस्य के स्वर में उत्तर दिया—"मगध में बड़े-बड़े तांत्रिक सिद्ध हैं। क्या स्वय कलिंग में महास्थविर जीवक को आकाश मार्ग से विचरण की सिद्धि नहीं है ?"

सामन्त ने पूछा—"क्या गुरू उस मंत्र योग को शिथिल करने में असमर्थ हैं ?"

तांत्रिक ने उत्तर दिया—"मैं नवम स्थान तक संचरण कर सकता हूँ परन्तु आकाश विचरण और स्थानान्तर प्रस्थापन दशमद्वार की क्रिया सिद्धि है। मुझे इस योग में एक वर्ष लगेगा।"

सामन्त ने पूछा—"महास्थाविर जीवक इस मंत्र योग को शांत करने की सामर्थ्य रखते हैं ?"

तांत्रिक ने स्वीकार किया—"हां, महास्थविर ऐसा कर सकते हैं।"

सामन्त मौन रह सोचता रह गया और सहसा बोल उठा—"मंत्रयोग करने वाले के जीवित न रहने पर उस के मंत्र का प्रभाव स्वयं शिथिल न हो जायगा ?"

तांत्रिक ने निषेध में सिर हिला दिया—"नहीं, कदापि नहीं। सिद्ध ने यदि महारानी को पशु योनि का रूप दे दिया है तो वे सदा उसी रूप में रह जायंगी।"

रात्रि का पहला पहर समाप्त हो चुका था। दूसरे पहर की भी

दो घड़ी बीत चुकी थीं। सामन्त जलहीन मीन की भांति व्याकुल हो रहा था। उसे यह संवाद तुरंत महामात्य को देना चाहिये था परन्तु ऐसा संवाद आचार्य को देने की अपेक्षा वह सूली पर चढ़ जाना ही श्रेयस्कर समझता। संवाद पाकर महामात्य क्या करेंगे ? परन्तु यह कर्त्तव्य तो था।

सामन्त तुरन्त दो अश्वारोही सैनिकों के साथ घोड़े पर चौकड़ी भरता महाविहार की ओर चल दिया। रात में महाविहार के द्वार के कपाट मुंदे हुए थे। कपाट खुलवाने में सामन्त को बहुत समय लग गया। सामन्त ने महा-स्थविर के दर्शन के लिये प्रार्थना की। एक भिक्षु ने उन्हें मार्ग दिखाकर एक स्थविर के सन्मुख उपस्थित किया। स्थविर निद्रा से जागकर आँख मल रहा था। सामन्त ने प्रार्थना की कि महारानी के संकट में महास्थविर के आशीर्वाद की आवश्यकता है।

नींद से भरे नेत्र मलते हुए स्थविर असंद ने उत्तर दिया--"सामन्त महारानी का कष्ट कहें।"

सामन्त ने उत्तर दिया -"भन्ते वह गुप्त संदेश है।"

स्थविर असंद ने विचार कर उत्तर दिया—"सिद्ध महास्थविर इस समय समाधि द्वारा आकाश मार्ग से निशाचरण के लिये स्थानान्तर में हैं। विहार में उन का शरीर नहीं है।"

सामन्त मौन रह गया। उसे विश्वास हो गया महास्थविर जीवक ही अपने मंत्र के बल से सब उत्पात कर रहा है परन्तु सामन्त प्रताप विवश था। विहार से निकल घोड़े की पीठ पर सवार होकर महामात्य को संवाद पहुंचा देने के अतिरिक्त और चारा नहीं था।

रात की पहली घड़ी समाप्त होते ही युद्धकाल के नियम के अनुसार भेरियों के गर्जन, और नरसिंहे के शब्द के साथ ललकार सुनाई दी—"महामहिमामयी कलिंग की राजेश्वरी की जय हो! प्रजा और पौरजन सुनें। राज्य और नगर की रक्षा के लिये महारानी का आदेश है, एक घड़ी रात से सूर्योदय से एक घड़ी पूर्व तक प्रजा और पौरजन अपने घर-द्वार से बाहर न निकलें। नगर-रक्षक

और राजपुरुष संदिग्ध अवस्था में दिखाई दिये व्यक्ति पर प्रहार करेंगे। प्रजा संदेह का कोई कारण देखे तो कांसा बजाकर राजपुरुषों को संकेत करे।

हिता ने अमिता की ओर से गृहस्थ को सम्बोधन किया—"अब परम-भगवती राजेश्वरी प्रजा की अवस्था देखने के लिये दूसरे स्थान पर जायंगी।"

हिता ने अमिता को गृहस्थ के घर से गली में लाकर उसका हाथ अपनी मुट्ठी में लिये बाजार की ओर चल दी। संकरी गली अंधियारी और निर्जन थी। हिता का हृदय कांप रहा था और पांव लड़खड़ा रहे थे। साहस पाने के लिये वह अमिता को समझाने लगी—"अम्मे महारानी, धैर्य धरें। हम अम्मा के पास जा रहे हैं। कोई जन अथवा राजपुरुष प्रश्न करेगा तो महारानी उत्तर देंगी—"महारानी राजप्रासाद से अपनी प्रजा की अवस्था देखने आई हैं।"

संकरी गली समाप्त कर हिता अमिता को लिये एक बाजार के मार्ग पर आ पहुंची। बाजार के दोनों ओर की दुकानें बंद थीं। एक दुकान के सामने बैठा कुत्ता अपरिचित लोगों को देखकर जोर-जोर से भौंकने लगा। हिता विवश थी। कुत्ते को महारानी के प्रजा की अवस्था देखने आने का कारण बताकर चुप नहीं कराया जा सकता था। वह अमिता को लिये पूर्व दिशा की ओर जाने वाला मार्ग पकड़ने के लिये चलती गई।

हिता को सामने और घूम कर देखने पर, पीछे भी कुछ दूर मार्ग पर जलती हुई मशालें दिखाई दीं। वह सौ कदम ही चल पाई थी कि ऊँचे कर्कश स्वर में ललकार सुनाई दी—"कौन है?........कौन है?" और एक सन-सनाता हुआ बाण हिता के सिर पर से चला गया।

हिता भय से कांप उठी। उसने अमिता को रक्षा के लिये अपने शरीर की आड़ में ले लिया और एक मुँदी हुई दुकान के कपाट के तख्तों के साथ लगा कर खड़ी हो गई और उसने भय से थरथराते कंठ से ऊंचे स्वर में पुकारा—" "कलिंग की महारानी........"

हिता अपना वाक्य पूरा नहीं कर पाई थी कि एक और बाण वेग से आकर उसके कंधे से बचता हुआ दुकान के कपाट के तख्ते में गड़ गया।

हिता अमिता को अपने शरीर से चिपकाये शक्ति भर ऊँचे स्वर में

पुकारने लगी—"महारानी की जय हो ! राजेश्वरी की जय हो ! सावधान ! परमभगवती की जय हो ? ससम्मान सावधान !

कुछ ही क्षण में शीघ्र गति से दौड़ने के कारण पीछे की ओर उड़ती हुई मशालों के बीच भागते हुए सैनिकों के कांपते हुए और धुंधले चेहरे और भाले दिखाई दिये। तुरंत ही सैनिकों ने उन्हें घेर लिया। सैनिकों के चेहरों पर संदेह और विस्मय दिखाई दे रहा था।

हिता ने अमिता को अपनी ओट से सैनिकों के सामने कर उन्हें सम्बोधन किया—"सैनिको पहचानो ! परमभगवती कलिंग की राजेश्वरी को पहचानो ! प्रजा की माता महारानी संकट-काल में प्रजा की अवस्था देखने आई हैं।"

सैनिकों ने बालिका महारानी को और महारानी की चंवरधारी दासी को भी पहचाना। सन्देहजनक परिस्थिति के कारण सैनिकों ने कुछ सम्भ्रम से भूमि स्पर्श कर महारानी का जय-घोष किया और सैनिकों के नायक ने सिर झुका कर विनय से प्रार्थना की—"परमभगवती राजेश्वरी का आदेश हो !"

अमिता ने हिता की बात का समर्थन किया—"हम नगर में प्रजा की अवस्था देखने आये हैं। हम प्रजा की माता हैं।"

नायक सिर झुका कर सेवा में प्रस्तुत हुआ। उस के आदेश से दो लम्बे भालों में कपड़ा बाँध कर महारानी के लिये पालकी बना दी गई। दो सैनिक मशालें लेकर पालकी के आगे और दो मशालधारी सैनिक पालकी के पीछे हो गये। सैनिकों ने खड्ग कोष से निकाल कर सम्मान में सामने उठा लिये और पालकी को घेर कर चलने लगे। हिता महारानी के शरीर पर हाथ धरे पालकी के साथ-साथ चलती रही। उस ने सैनिकों को महारानी का संदेश दिया—"महारानी श्रीष दुर्ग की दिशा में जायंगी।"

महारानी की पालकी के सम्मुख चलती मशालों के प्रकाश में श्रीष दुर्ग का ऊंचा द्वार दिखाई दिया। दुर्ग के द्वार के पट मुंदे हुए थे। द्वार की ओर से ललकार सुनाई दी—"कौन है ! सावधान ! आगे न बढ़ना !"

महारानी के साथ चलते सैनिकों ने हुंकार से उत्तर दिया—"कलिंग की महारानी की जय हो ! ससम्मान सावधान !"

द्वार के दोनों ओर दो अश्वारोही सैनिक भाले उठाये खड़े थे और सामने

भी कई सशस्त्र सैनिक खड्ग खींचे खड़े थे। द्वार के तोरण पर बैठे हुए सैनिकों ने धनुष पर बाण चढ़ा कर प्रत्यंचाएं खींच लीं। द्वार-रक्षक सैनिकों के नायक ने कुछ कदम आगे बढ़ कर गम्भीर स्वर में चेतावनी दी—"ठहरो! कौन है? महारानी की आज्ञा से दुर्ग के समीप आने का निषेध है।"

हिता ने अपने साथ आये सैनिकों को उत्तर दिया—"महारानी दुर्ग में प्रवेश कर राजमाता का दर्शन करेंगी।"

साथ चलते सेनानायक ने धीमे स्वर में हिता से पूछा—"भगवती राजमाता तीर्थाटन से लौट आई हैं?"

"राजमाता इस समय इसी दुर्ग में हैं। महारानी दुर्ग में प्रवेश करेंगी।" —हिता ने उत्तर दिया।

सेनानायक ने दुर्ग की ओर चार कदम बढ़ कर उत्तर दिया—"परम भगवती महारानी दुर्ग में प्रवेश करेंगी। दुर्ग का द्वार खोला जाये।"

दुर्ग-रक्षक यूथप ने एक और कदम आगे बढ़ कर ललकारा—"दुर्ग में प्रवेश का निषेध है। दुर्ग का द्वार नहीं खुल सकता।"

इस अवज्ञा से महारानी की सेवा में आये सेनानायक को क्रोध आ गया। उस का शरीर तत्परता की मुद्रा में तन गया। वह खड्ग को प्रहार के लिये उठाते हुए बोला—"कलिंग की राजेश्वरी का मार्ग कोई द्वार नहीं रोक सकता।"

दुर्ग-रक्षक यूथप ने उसी प्रकार उत्तर दिया—"राज्यादेश है। दुर्ग का द्वार नहीं खुलेगा।"

महारानी के साथ आये सेनानायक ने अपने खड्ग की मूठ को अपनी ढाल पर ठोका। उस के अनुकरण में उस के सभी सैनिकों ने खड्गों की मूंठें ढालों पर ठोकीं और उन के शरीर, आक्रमण के लिये पिछले पंजों पर सिमटे हुए सिंहों की भांति, तन गये।

इस ललकार के साथ ही दुर्ग-रक्षक सैनिकों के खड्ग भी अपनी ढालों पर बज उठे। आकाश लोहे पर लोहा बजने की झंकार से झंकरित हो झन्ना गया और उस झंकार को ऊंचे स्वर में भेदती हुई ललकारें सुनाई दीं—

"परमभगवती राजेश्वरी की जय!"
"कलिंग की महारानी की जय!"

"यह क्या है ? यह क्या हो रहा है ?"

शान्त स्वर में आकाशवाणी सुनाई दी।

सैनिकों के दोनों दलों की आंखें आकाश की ओर उठ गईं। विस्मय से फैली आंखों से उन्होंने देखा, दुर्ग के दूसरे तल्ले पर एक गवाक्ष खुल गया था। गवाक्ष के बाहर दीपक थामे एक हाथ दिखाई दे रहा था। दीपक के आलोक चक्र में राजमाता का चिंतित मुख था।

राजमाता के ओंठ हिले।

सैनिकों ने सुना—"रक्तपात नहीं होगा। हिंसा नहीं होगी। कलिंग के सैनिक कलिंग के सैनिकों का रक्तपात नहीं करेंगे।"

अमिता ने गवाक्ष से दीपक के प्रकाश में दिखाई देते मुख को पहचान लिया और दोनों हाथ गवाक्ष की ओर उठा कर पुकार उठी—"अम्मा ! अम्मा !"

अमिता की पालकी को घेरे सैनिकों ने अपने खड्ग उठा कर ऊंचे स्वर में जय-घोष किया—

"कलिंग की महारानी की जय ! राजमाता की जय !"

दुर्ग-रक्षक यूथप ने अपना खड्ग नीचा कर लिया और आगे बढ़ कर महारानी के साथ आये सैनिकों के नायक को सम्बोधन किया—"सेनानायक कुछ क्षण प्रतीक्षा करें। आचार्य महामात्य से आदेश लेना होगा।"

रक्षक यूथप ने एक अश्वारोही द्वारपाल का घोड़ा ले लिया और वह घोड़े को बहुत जोर से ऐड़ी लगा कर चौकड़ी भरते हुए, महामात्य की हवेली की दिशा में, अंधकार में लोप हो गया।



अशोक की अपार सेना कलिंग के सैनिकों को रण क्षेत्र में गिराती और पीछे धकेलती हुई कलिंग की राजधानी से केवल दो योजन पर आ पहुंची थी। अब कलिंग की सेना अडिग चट्टान की भांति जम गई थी। नगर से महामात्य द्वारा प्रतिदिन भेजे जाते सैनिक कलिंग की सेना की प्राचीर में बन जाते छिद्रों में समाते जाते थे।

अशोक को अपने चरों से समाचार मिला था कि कलिंग की सेना की संख्या क्षीण हो चुकी है। उन का अंतिम सैन्य-दल ही मोर्चे पर डटा है। अशोक की सेना का बल असीम था। मगध के विशाल साम्राज्य के सभी भागों से एकत्र किए गए नाना-वेश धारण किए और नाना प्रकार की भाषाओं में चीत्कार करते सैनिक कलिंग की सेना पर टूट-टूट पड़ते थे। कलिंग के शेष रह गये तीस सहस्र सैनिकों को दिन और रात्रि अपलक युद्ध करते एक सप्ताह बीत गया था। उनके धनुषों की प्रत्यंचाएँ टूट जाने पर दूसरी प्रत्यंचा लेने या तूणीर में बाण समाप्त हो जाने पर दूसरा तूणीर कंधे पर बाँध लेने और भाला या खड्ग टूट जाने पर दूसरा शस्त्र ले लेने का भी समय न मिलता था। कलिंग के श्रांत सैनिक मगध के असंख्य सैनिकों की बाढ़ के नीचे उसी भांति दबते जा रहे थे जैसे जंगल में आंधी के समय महा वृक्षों के गिरने पर कोमल पौधे कुचल जाते हैं।

कलिंग के महासेनापति की दृढ़ता से खिन्न होकर सम्राट अशोक ने अपने सेनापतियों को आदेश दे दिया था कि आक्रमण दिन और रात अविराम चले। कलिंग के इस अन्तिम सैन्य-दल को क्षण भर का भी विश्राम न मिले। अशोक ने प्रतिज्ञा की कि वह स्वयं भी रण के हाथी से नहीं उतरेगा। कलिंग के राजप्रासाद में जा कर ही शैय्या पर विश्राम करेगा। फिर भी कलिंग के महासेनापति भद्रकीर्ति नें पराजय स्वीकार न की और न पीछे हटे। अपनी सेना के भिन्न-भिन्न भागों में शीघ्र से शीघ्र पहुंच सकने के लिए उन्होंने सुविधा और सुरक्षा की सवारी हाथी का हौदा छोड़ कर घोड़े की पीठ पर ही आसन जमा लिया था। उन के लिये दिन और रात, प्रकाश और अंधकार का भेद नहीं रहा था। सवारी का घोड़ा थक कर शिथिल हो जाता तो वे घोड़ा बदल लेते परन्तु स्वयं न थकते।

उस दिन भी सूर्यास्त के दो घड़ी पश्चात तक लड़ते-लड़ते कलिंग के महा-सेनापति आर्य भद्रकीर्ति मगध की सेना के सन्मुख घोड़े से गिर पड़े और मूर्छित हो गये। हाथी की पीठ से सैन्य संचालन करते मगध के सेनापति के आदेश से, मगध के सैनिकों ने उन्हें तुरन्त दबा लिया और लोहे की सांकलों से बांध लिया। मगध का सेनापति आर्य भद्रकीर्ति को, मगध के सैन्य-दल के पीछे हाथी पर से युद्ध का निरीक्षण करते मगध-सम्राट के सन्मुख उपस्थित करने के लिए ले गया।

जिस समय आर्य भद्रकीर्ति के मुख पर जल छिड़का जाने और औषध सुंघाई जाने से उनकी मूर्छा टूटी, उन्होंने अपना शरीर लोहे की सांकलों से बंधा पाया। उन के चारों ओर बहुत-सी मशालों का प्रकाश था। बहुत से हाथी और घोड़े वृत्ताकार खड़े थे। कई हाथियों पर और नीचे भूमि पर भी चारों ओर कई मशालें जल रही थीं। हाथियों और घोड़ों पर मगध के सशस्त्र सैनिक, नायक, यूथप और सामन्त थे। इस बड़े वृत्त के बीचों-बीच बहुत बड़े हाथी पर हौदे में मगध का सम्राट अशोक सोने से मढ़ा कवच और शिरस्त्राण पहने उनकी ओर तीव्र दृष्टि से देख रहा था। अशोक की सवारी का विशाल गज सब ओर से लोहे के महीन सांकलों से बने जाल से ढका था और उसे मगध के सशस्त्र अश्वारोही सैनिक घेरे हुए थे। महासेनापति भद्रकीर्ति ने पीड़ा से फटता अपना मस्तक उठाकर अशोक के नेत्रों की ओर निर्भय दृष्टि से देखा।

कलिंग के सेनापति से नेत्र मिलने पर सम्राट अशोक ने अपने समीप दूसरे हाथी पर सवार महासेनापति की ओर देख कर सम्बोधन किया—"महा-बलाधिकृत आर्य रुद्र प्रताप, अब युद्ध की क्या अवस्था है ?"

मगध के महाबलाधिकृत रुद्रप्रताप ने सिर झुका कर उत्तर दिया—"सम्पूर्ण पृथ्वी के स्वामी, परमभागवत मगध सम्राट की जय हो ! सम्राट की अजेय सेना ने कलिंग के अवरोध को दल दिया है। कलिंग के स्त्री-शासित राज्य का दुस्साहसी सेनापति पराजित होकर परम भागवत मगध सम्राट के चरणों में उपस्थित है। कलिंग की सेना छिन्न-भिन्न हो चुकी है। कलिंग नगर तक, सम्राट के लिये कलिंग के सैनिकों के शवों से बिछा हुआ मार्ग प्रस्तुत है। सम्राट आदेश दें।"

अशोक ने कलिंग के सेनापति को सम्बोधन किया—"कलिंग के सेनापति ने स्त्री-शासित राज्य की रक्षा बहुत साहस और वीरता से की है। हम उसकी श्लाघा करते हैं परन्तु सम्राट अशोक वीरों को अपनी आज्ञा और सेवा में ही देखकर प्रसन्न होता है, अपने विरोध में नहीं। कलिंग ने सम्राट की आधीनता का विरोध करने का दंड पाया। आधीनता स्वीकार करने पर सम्राट युद्ध के नियमों के अनुसार कलिंग को अभयदान देंगे। सम्राट की अवज्ञा और विरोध वीरता नहीं अपराध है। कलिंग का सेनापति अपनी रानी को सम्राट की

आधीनता स्वीकार करने का सन्देश भेजे तो सम्राट कलिंग के सेनापति, कलिंग की रानी और नगर को अभयदान दें।"

कलिंग के सेनापति ने अपना माथा और भी ऊँचा उठा कर उत्तर दिया—"कलिंग के सेनापति ने पराजय स्वीकार नहीं किया है। वह रणक्षेत्र में आहत हो गया है। वह रण में खेत रह सकता है परन्तु पराजय स्वीकार नहीं करेगा। कलिंग की देवरक्षित, परमभगवती राजेश्वरी अजेय हैं। कलिंग राज्य का शरीर क्षत-विक्षत हो जाने पर भी उसकी आत्मा अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करेगी। कलिंग की प्रजा का सिर आततायी के सम्मुख झुक नहीं सकता।"

सम्राट अशोक ने कलिंग के सेनापति की ओर से मुंह फेर लिया और मगध के महाबलाधिकृत को आज्ञा दी—"महाबलाधिकृत, सैन्यदल कलिंग नगर पर अधिकार करे। नगर का धन मगध की सेना के लिये पुरस्कार हो। राजप्रासाद को घेर कर रानी को बन्दी बनाया जाये।"

सम्राट का अभिप्राय समझ कर लोहे की सांकलों में बंधे कलिंग के महा सेनापति को सम्राट के सामने से हटा दिया गया।



वह रात कलिंग के लिये महासंकट की थी। दिन में, दोपहर से पूर्व ही महामात्य को समाचार मिला था कि कलिंग की सेना पत्तंग पत्तन पर भी शत्रु को न रोक सकी। आर्य भद्रकीर्ति को, शत्रु की सेना से घिर जाने और राजधानी से आयी सेना से सहायता पा सकने के लिये, नगर से दो ही योजन पर एक उपत्यका में आजाना पड़ा था। महामात्य ने संकटकाल में नगर की रक्षा के लिये केवल दस सहस्र सेना रखकर शेष सब सेना महासेनापति की सहायता के लिये भेज दी थी। महाविहार मठ के प्रति अपनी विरक्ति का दमन कर उन्होंने महास्थविर जीवक के पास भी संदेश भेजा कि नगर की रक्षा करने के लिये राज्य को नगर के प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकता है। विहार के एक सहस्र भिक्षु राजधानी को हिंसा से बचाने में सहयोग दें। दोपहर बाद रणक्षेत्र से मिले समाचारों से उन्हें निश्चय हो गया कि शत्रु का अवरोध अब सम्भव नहीं है।

दोपहर बाद रणक्षेत्र से चले दूत ने संध्या समय राजधानी में पहुँचकर महामात्य को और भी चिंताजनक समाचार दिया। डेढ़ पहर रात बीतने पर भी आचार्य अपने अत्यन्त विश्वासपात्र और योग्य तीन सेनापतियों के साथ परामर्श कर रहे थे। जब एक लाख सैनिक रणक्षेत्र में बलिदान करके भी चंड अशोक को रोक सकना सम्भव न हुआ तो केवल दस सहस्र सैनिकों को लेकर क्या किया जा सकेगा ? नगर और दस सहस्र सैनिकों को भी ध्वंस कर और स्वयं ध्वंस हो जाने से कलिंग की राजसत्ता की रक्षा नहीं हो सकेगी। उन का प्रयोजन ध्वंस हो जाना नहीं, कलिंग की राजसत्ता और स्वतंत्रता की रक्षा करना था।

महामात्य का विचार था कि शेष सेना कलिंग की बालिका राजेश्वरी और राजमाता को ले कर दक्षिण की पर्वत श्रेणियों और बनों में चली जाये। कलिंग के राजवंश के मूल की रक्षा की जाये। जब तक राजा जीवित है राज्य का अन्त नहीं होता। जब तक पराजय स्वीकार न किया जाये, स्वतंत्रता बनी रहती है। जब तक कलिंग का एक भी सैनिक जीवित है, कलिंग पराजय स्वीकार नहीं करेगा। कलिंग की भूमि के कणों में, कलिंग के बनों के पत्तों में, कलिंग की वायु में कलिंग की राजसत्ता जीवित रहेगी और फिर मूर्त रूप ग्रहण करेगी। वे विश्वासपात्र सेनापतियों से परामर्श कर रहे थे कि जब तक आर्य भद्रकीर्ति मगध की सेना को रोके हैं, नगर को आतंकित किये बिना वे बालिका महारानी, राजमाता और सेना को नगर से निकाल ले जायें।

चरम संकट के समय महामात्य की हवेली की सुव्यवस्था और नियम शिथिल हो गये थे। आचार्य ने अधिकांश दासों और सेवकों को शस्त्र धारण कराकर सैनिक बना दिया था। अब प्रत्येक द्वार पर प्रहरी अथवा कंचुकी नहीं थे। संवाद लाने वालों दूतों को एक-एक करके क्रमशः प्रस्तुत नहीं किया जाता था। आंगन के द्वार खुले देख दूत संवाद के महत्व के विचार से स्वयं ही भीतर चले जाते थे। आचार्य सेनापतियों से गुप्त परामर्श करते-करते भी दूतों को संकेत से समीप बुला कर संवाद सुन रहे थे।

नगर से आये एक चर ने समाचार दिया—शत्रु का सैन्यदल राजधानी के समीप आ पहुंचने के त्रास से महाविहार के अनेक भिक्षु नगर त्याग कर गये हैं और शेष भिक्षु परित्राण-दिवा-सेना का पाठ करने बैठ गये हैं। महास्थविर जीवक दैवी शक्ति के चमत्कार द्वारा रक्षा के लिये समाधिस्थ हो गये हैं।

महामात्य ने कुछ उत्तर न दे चर को चले जाने का संकेत कर दिया। दूत के कक्ष से निकल पाने से पूर्व ही सामंत प्रताप ने प्रवेश किया। सामंत के घुटने श्रान्ति और उद्वेग से कांप रहे थे। वस्त्र स्वेद से लथपथ थे। वह आचार्य को प्रणाम कर खड़ा न रह सका। सिर झुकाये भूमि पर बैठ गया। सामंत ने लज्जा और परिताप के कारण मुख को दोनों हाथों से ढक कर आचार्य की अनुमति की प्रतीक्षा किये बिना ही निवेदन किया—"स्वामी, सेवक जिस दंड के योग्य हो, दिया जाये।""महारानी प्रासाद में नहीं हैं।"

आचार्य की गर्दन सहसा सीधी हो गई। उन के मुख से निकला—"महा-रानी प्रासाद में नहीं हैं?""महारानी कहां हैं?"

सामन्त प्रताप ने सिर झुकाये ही उत्तर दिया—"महारानी प्रासाद में नहीं है। प्रासाद का कोना-कोना और वृक्ष-वृक्ष खोज लिया गया। बावड़ी, कूप, तड़ाग भी खोज कर देख लिये गये। महारानी और दासी हिता सूर्यास्त के एक घड़ी पश्चात तक प्रासाद में थीं। इस के पश्चात नहीं हैं। किसी संदिग्ध जन ने प्रासाद में प्रवेश नहीं......"

आचार्य के माथे पर भृकुटी गहरी हो गई। उन्होंने प्रश्न किया—"दासी हिता भी नही है? दासी का शरीर भी नहीं है?"

सामंत ने सिर झुकाये ही स्वीकार किया—"दासी का शरीर भी नहीं है। सेवक की बुद्धि असमर्थ है। ज्योतिषी ने गणित करके कहा है, महा-रानी शत्रु के प्रभाव से प्राचीर में छिद्र से गई हैं। प्राचीर में कहीं छिद्र नहीं है। प्रासाद के द्वार दो पक्ष से नहीं खुले। तान्त्रिक का विचार है, महारानी मंत्र-बल द्वारा प्रस्थापन क्रिया के योग से आकाश मार्ग द्वारा स्थानांतरित हुई हैं। वे मंत्र के प्रभाव में हैं...."

आचार्य ने तीक्ष्ण स्वर में टोक दिया—"दासी हिता भी मंत्र-बल द्वारा प्रस्थान क्रिया से स्थानांतरित हुई है? शत्रु दासी को क्या जानता है? शत्रु के लिये दासी का क्या महत्व है? प्राचीर में छिद्र नहीं है? प्रासाद के द्वार दो पक्ष से नहीं खुले। प्रासाद में सैनिकों का और तुम्हारा आवागमन भी आकाश मार्ग से होता है?"

सामन्त ने नेत्र आचार्य की ओर उठा कर क्षीण स्वर में उत्तर दिया—

"स्वामी, प्रासाद का द्वार नहीं खुलता। द्वार के बाहु में क्षुद्र उपद्वार ही खुलता है।"

"उपद्वार ही छिद्र है''—आचार्य क्रोध से बोले, "यह छल है। यह दासी का छल है। यह दासी को वश कर लेने वाले का छल है। संध्या से तीन घड़ी तक सामन्त कहां था ? तत्काल समाचार क्यों नहीं दिया ? क्या नगर में भी खोज की गई है ? नगरपाल ने............"

कक्ष के द्वार पर शीघ्र पदों की आहट सुन कर आचार्य मुख का वाक्य नहीं पूरा कर पाये। कक्ष के द्वार पर श्रीष दुर्ग का रक्षक उपसामन्त यूथप पदांक, अत्यन्त विक्षिप्त अवस्था में, अभिवादन के लिये सिर झुकाये खड़ा था।

दुर्ग-रक्षक यूथप को कक्ष मे आने की अनुमति देने के स्थान पर आचार्य ने ऊंचे स्वर में पूछ लिया—"क्या राजमाता भी श्रीष दुर्ग मे नहीं हैं ?"

पदांक ने हाथ जोड़ कर उत्तर दिया—"स्वामी अभयदान हो ! भगवती राजमाता दुर्ग में हैं परन्तु परमभगवती राजेश्वरी सैनिकों के एक दल के साथ दुर्ग द्वार पर उपस्थित हैं। महारानी दुर्ग में प्रवेश का आग्रह कर रही हैं।"

महामात्य उत्तेजना में तख्त से उठ कर भूमि पर खड़े हो गये। उन के मुख से निकला—"महारानी सैनिकों के दल सहित दुर्ग द्वार पर उपस्थित हैं ?"

एक क्षण मौन रह कर उन्होंने पूछा—"सैनिकों का दल ? कैसे सैनिक ? कहां के सैनिकों का दल ?"

यूथप पदांक ने उत्तर दिया—"स्वामी,महारानी के साथ कलिंग के सैनिकों का, नगर-रक्षक सैनिकों का दल है। महारानी राजमाता के दर्शन के लिये दुर्ग में प्रवेश की इच्छा करती हैं।"

आचार्य, पदांक यूथप की ओर देखते हुए पुनः तख्त पर बैठ गये और उन्होंने प्रश्न किया—"महारानी दुर्ग तक कैसे आई हैं ?"

पदांक ने उत्तर दिया—"स्वामी, महारानी राजकीय शिविका पर नहीं, सैनिकों के कंधों पर हैं।"

आचार्य ने माथे की त्योरियां गहरी कर प्रश्न किया—"क्या बालिका महारानी अकेली प्रासाद से आई हैं ?"

यूथप ने उत्तर दिया—"स्वामी, केवल चंवरधारी दासी साथ है। स्वामी, राजमाता ने कोलाहल सुन कर दुर्ग के दूसरे तले के गवाक्ष से आदेश दिया है, रक्त पात न हो। कलिंग के सैनिक कलिंग के सैनिकों का रक्तपात न करें।"

आचार्य ने नेत्र मूंद कर दो पल विचार कर सामन्त प्रताप को सम्बोधन किया—"समझे, यह इस दासी का छल है! सामन्त तुरंत श्रीष दुर्ग जाय!"

आचार्य की दृष्टि पदांक की ओर गई—"सामंत, महारानी और राजमाता को तुरंत प्रासाद में पहुंचाया जाये। दो स्थानों की अपेक्षा एक स्थान की ही रक्षा की जाये।"

आचार्य के समीप पीढ़ी पर बैठा सेनापति सोमनाथ सम्भ्रम बोल उठा—"भगवन आज्ञा दें!"

आचार्य ने सोमनाथ की ओर देखा। सेनापति ने निवेदन किया—"भगवन, महारानी के समीप ऐसी छलिया दासी का रहना सदा भय का कारण होगा।'

आचार्य की दृष्टि सामन्त प्रताप की ओर गई। सामन्त के नेत्रों में रक्त भर आया था। उस ने उत्तर दिया—"स्वामी, अनुमति दें। छलिया दासी का सिर दुर्ग के द्वार पर ही गिरेगा।"

आचार्य ने दाहिने हाथ के अंगूठे और मध्यमा से दोनों कनपटियों को दबा कर पल भर सोचा और बोले—"अभी दासी का वध न किया जाये। छल दंडनीय है परन्तु....यदि दासी शत्रु की दूति नहीं है;....वह महारानी को सिंह-द्वार की ओर न ले जा कर श्रीष दुर्ग क्यों ले गई?........यदि दासी शत्रु की दूति नहीं है तो संकटकाल में उसकी बुद्धि उपयोगी होगी। स्वामी-भक्त, बुद्धिमान दास सब से बड़ा धन है। दास का अपना विरोधी स्वार्थ न होने से उस की बुद्धि स्वामी का धन है। दासी का प्रयोजन जाना जाये! यदि वह शत्रु की दूति नहीं है तो सामन्त उस की सहायता से महारानी की रक्षा करे। उस की इच्छा पूर्ण करना अनुचित हो तो सूर्योदय के समय अनुमति ले कर उस का वध किया जाये। सामन्त महारानी, राजमाता, चंवरधारी दासी और दस विश्वस्त दासों और कंचुकियों सहित गुह्य-मार्ग से प्रासाद छोड़ने के लिये प्रति क्षण सन्नद्ध रहे।"

आचार्य ने सेनापतियों से परामर्श करने के लिये दृष्टि दूसरी ओर कर ली।

सामन्त प्रताप और पदांक सिर झुका कर आदेश पालन के लिये चले गये।

×

## अमिता की करनी

राजमाता श्रीष दुर्ग से रात्रि के तीसरे पहर के आरम्भ में राजप्रासाद लौटीं तो बालिका महारानी उन की गोद में थीं। अमिता ने नौ मास से अधिक समय के पश्चात मां को पाया था। इतनी रात बीत जाने पर भी बलिका की आंखों में नींद नहीं आई। उसने मां को अपनी सभी पुतलियां दिखाईं। हिता द्वारा सिखाये पुतलियों के नये-नये खेल बताये। बभ्रु की उच्छृंखलताएं भी बताईं। तब भी मां के गले से बाहें हटा लेने के लिये उस का मन न चाहा।

राजमाता ने बेटी को अपनी गोद में ही लिटा लिया। उनका रोम-रोम बेटी के स्नेह की तृप्ति ग्रहण कर रहा था। वे समाधि की अवस्था से पृथ्वी पर उतर आई थीं परन्तु समाधि की अवस्था से भी अधिक तन्मय थीं। वे दो घड़ी तक अपने अशीश के हाथ बेटी के शरीर पर रखे मौन बैठी रहीं और फिर निद्रा में बेसुध हो गई बेटी को हिता की गोद में देकर, तथागत ने जिस चमत्कार से उन्हें बंधन मुक्त किया था उस के प्रति कृतज्ञता के लिये ध्यान मग्न हो गईं।

राजमाता अभी ध्यानमग्न ही थीं, बन्दी ने आंगन में ब्राह्ममुहूर्त के आगमन के संकेत में वीणा पर उद्बोधन आलाप आरम्भ कर दिया। राजमाता निद्रा का समय बीत गया जान कर नित्य-नियम के अभ्यास के अनुसार फिर ध्यान मग्न हो गईं।

सामन्त प्रताप और पदांक शिथिलता की कोई सम्भावना शेष न रहने देने के लिये महारानी के शयन-कक्ष के सन्मुख आंगन में स्वयं उपस्थित थे। एक प्रयोजन यह भी था कि महारानी पलंग पर निद्रागत हो जायें तो महामात्य के आदेशानुसार छलिया दासी हिता की समस्या का निपटारा किया जाये।

दासों के अनुशासन के आंगन में वधिक कुलिश और काष्ठ लिये सामन्त के आदेश की प्रतीक्षा में बैठा था। सामन्त प्रताप और पदांक ने प्रासाद में पहुंचते ही दूसरे दासों को भय और लोभ दिखाकर हिता के रहस्य के सम्बन्ध में प्रश्न किये। वे मोद के प्रति हिता के अनुराग का रहस्य जान गये थे। वापी को भी यह रहस्य स्वीकार कर लेना पड़ा। वे परस्पर धीमे स्वर में तर्क-वितर्क कर रहे थे — दासी महारानी को लेकर नगर-द्वार अथवा विठ्ठल के घर द्वार पर नहीं गई। श्रीष दुर्ग के द्वार पर ही पहुंची ? उस का क्या स्वार्थ सम्भव है ?......राजमाता के प्रति अनुराग अथवा कुछ और ?....कलाकार दास के श्रीष दुर्ग में होने की क्या आशा थी ?.......वह क्या शत्रु की दूति है ?

श्रीष दुर्ग से राजमाता और महारानी को पालकी में लेकर राजप्रासाद पहुंचने के पश्चात हिता राजमाता की सेवा में खड़ी थी। किसी से अपनी मां के सम्बन्ध में पूछने अवसर का नहीं मिला था। निद्रागत अमिता को उस के शयन-कक्ष में लाकर और पलंग पर सुलाकर हिता ने कक्ष में पंखा लिये खड़ी व्यजन-दासी के कान से मुंह लगाकर पूछा — "मेरी मां कहां है ?"

व्यजनदासी ने मौन रह कर अज्ञान प्रकट करने के लिये हाथ हिला दिया। दासी सामन्त के क्रोध की भाजन वापी के विषय में बात नहीं करना चाहती थी।

हिता अलिंद में खड़ी यवनी से मां के विषय में पूछने के लिये अलिंद में गई। सहसा दो यवनियों ने उसे बाहों से थाम लिया और मौन रहने का संकेत कर आंगन में ले गईं। कुछ ही कदम पर अंधकार में चेहरे को काले वस्त्र से ढके कोई व्यक्ति हिता के सम्मुख आगया। हिता भय से सिहर उठी। उस ने सहायता के लिये अपनी दोनों बाहों को पकड़े यवनियों की ओर देखा। यवनियां अदृश्य हो गई थीं। काले वस्त्र से चेहरा ढके व्यक्ति का धीमा कोमल स्वर सुनाई दिया—"चतुरा दासी धैर्य रखे। मगध के दूत के लिये क्या संदेश है ? प्रासाद में मगध के सैनिक प्रस्तुत हैं।"

हिता की चीख निकल गई—"छल !"

हिता दूसरी बार चीख न सकी। एक कटार लगभग उसके मुख को बेंधती उसके होंठों से आ लगी। उसे गिरते-गिरते चार-हाथों ने थाम लिया।

हिता भय के कारण बहुत जोर से हांफ रही थी । उसे अपने मुख पर जल के छींटे पड़ते अनुभव हुए ।

"हितू, हितू, धैर्य !"—उसे उद्दाल का परिचित स्वर सुनाई दिया ।

दूसरे कान में सुनाई दिया—"धैर्य, दासी धैर्य ! यह परीक्षा थी । धैर्य !" वह सामन्त ताप का स्वर था ।

हिता ने नेत्र मूंद लिये । उसने सुना—"सच-सच कह दे, तूने महारानी को प्रासाद से बाहिर ले जाने का छल क्यों किया था ?"

श्वास के वेग के कारण वह प्रश्न को सुन न सकी। मुख से शब्द निकलना भी सम्भव न था । उस के हृदय की धड़कन समीप खड़े लोगों को सुनाई दे रही थी । उद्दाल ने जल का पात्र उस के होठों से लगा दिया । हिता ने कुछ घूंट जल पी लिया । उसे आंगन की भूमि पर लिटा दिया गया । आंखें मूंदे उसे जान पड़ा कोई उसे पंखा झल रहा है ।

लगभग घड़ी के चौथे भाग तक हिता उसी अवस्था में भूमि पर पड़ी रही । आखें खोलने पर उसे समीप बैठे उद्दाल का मुख दिखाई दिया । उद्दाल ने फिर वही प्रश्न किया—"सच कहदे, तूने महारानी को प्रासाद से बाहिर ले जाने का छल क्यों किया था ?"

हिता ने गर्दन झुकाकर पल भर सोचा और क्षीण स्वर में उत्तर दिया—"महारानी माता के लिये बहुत व्याकुल थीं ।.........महारानी कल रात्रि स्वप्न में माता को याद कर रो रही थीं........"

"दासी, राजमाता और आचार्य महामात्य तेरी स्वामी-भक्ति से प्रसन्न हैं । तू जो वर चाहे मांग"—हिता ने घूम कर देखा, सामंत प्रताप उस की पीठ पीछे खड़ा उसे सम्बोधन कर रहा था ।

हिता ने तुरंत उठ कर सामंत के सामने अपना सिर भूमि पर रख दिया । सामंत ने फिर कहा—"दासी, मन चाहा वर मांगे !"

हिता ने भूमि पर सिर रखे ही निवेदन किया—"भगवती महारानी दीर्घायु हों । राजमाता सकुशल रहें । स्वामी का मंगल हो !"

सामंत बोला—"तू कलाकार दास मोद को पाना चाहती है । मोद जहां भी हो, राज-रक्षा में कुशल लौटेगा । तू उसे पायेगी, यह राज्यादेश है । यह

संकटकाल है। दासी, तू महारानी और महामात्य की विश्वासपात्र है। तू निद्रा और आलस्य त्याग कर निष्पलक सजग रह कर प्रतिक्षण महारानी की सेवा में प्रस्तुत रहेगी। संदेश पाते ही तू महारानी और राजमाता को ले कर प्रासाद से प्रस्थान करेगी। अन्त समय तक तू इस रहस्य की रक्षा करेगी।"

सामंत के वचन सुन कर हिता के मस्तिष्क और शरीर की सम्पूर्ण क्लांति और श्रांति दूर हो गई।

गत रात्रि राजप्रासाद में कोई भी नहीं सो सका था। केवल तीसरे पहर के अंत में, महारानी के प्रासाद से लोप हो जाने और फिर लौट आने की घटनाओं के पश्चात व्याकुलता और व्यग्रता का शमन हो सका था। तब भी दास-दासियां, यवनियां, कंचुकी, सेवक और प्रहरी सामंत प्रताप और पदांक के बार-बार इधर-उधर आने-जाने के कारण निश्चिन्त नहीं हो सके थे। ऐसी अवस्था में ही आकाश में प्रभात की धवलिमा छाने लगी। दास-दासियां और सेवक शरीरों में भरी नींद और थकान के कारण आती जमुहाइयों को दबा कर फिर अपने नियमित कामों के लिये तत्पर होने लगे। उन के शरीरों में भरे शैथिल्य और थकावट की चिंता न कर सूर्य की किरणें चारों ओर फैल गईं। अमिता बहुत विलम्ब से सोने के कारण अभी अपनी शैया पर अचेत पड़ी थी। हिता निष्पलक और सजग समीप खड़ी थी। उसे चिंता थी, महारानी की निद्रा पूर्ण हो सके और यह भी कि महारानी को प्रतिक्षण यात्रा के लिये प्रस्तुत रखना है।

बालिका महारानी की निद्रा आंगन में धूप आ जाने पर टूटी। हिता तुरन्त उस का मुंह-हाथ धुला कर वस्त्र पहना देने का उपक्रम करने लगी। अमिता पुकार उठी—"हम पहले अम्मा के पास जायंगे! पहले अम्मा को देखेंगे!" और वह राजमाता के कक्ष की ओर दौड़ चली। अपने कक्ष में ग्रंथ पाठ करती माता से आशीर्वाद पाकर और उन के हाथ से पवित्र जल का आचमन करके ही अमिता ने मुंह धुलवाना स्वीकार किया।

माता के लौट आने के उत्साह में अमिता हिता के वश में भी कठिनता से आ रही थी। हिता को चिंता थी, महारानी गुह्य-मार्ग के कक्ष के समीप ही आंगन में खेलें परन्तु बालिका को हिता की बात दुलख कर मनमानी बात करने से ही संतोष हो रहा था।

सहसा नगर से धां ! धां ! धां ! का विचित्र भयावह गम्भीर नाद सुनाई पड़ा। मानो नगाड़े गला घुट जाने के कारण कराह उठे हों। कुछ पल पश्चात वह नाद बार-बार सुनाई देने लगा। उस शब्द से भय, अशुभ और आशंका की चेतावनी रक्त में दौड़ जाती थी। हृदय मुंह को आ जाता था। प्रासाद के दास-दासी इस अपरिचित अशुभ नाद का अभिप्राय: जानने के लिये प्रासाद की छत पर चढ़ कर देखने लगे। नगर के पथों, चौराहों पर नगाड़ों को कपड़े से ढक कर उन पर बार-बार तीन चोटें दी जा रही थीं और पथों, मार्गों पर लोग अपनी गठड़ी-मुठड़ी लिये चले जाते दिखाई दे रहे थे।

मोटे वस्त्रों से ढके नगाड़ों पर विश्रृंखलित चोटों का शब्द नगर की भूमि के रुद्ध हाहाकार के समान था। शब्द की दारुणता ही उस का अभिप्राय कह रही थी:—प्राण-रक्षा के लिये भागो ! शत्रु नगर में प्रवेश कर रहा है।

प्रासाद के दास-दासियों के हृदय दहल और डूब रहे थे। जो दास-दासी प्रासाद में अधिकार और आदर पाये हुए थे वे चिंतित और भयभीत थे। वे स्वामी के लिये प्राण दे देने का अवसर आ गया समझने लगे। जिन दासों का उपयोग बोल सकने वाले दो पांव के पशुओं की भांति होता आया था वे भी चिंतित और भयभीत थे, जाने अब भाग्य में क्या आयेगा ? उन के लिये भाग जाने का भी अवसर नहीं था। भय से उन के अंग शिथिल हो गये। वे भय की प्रतीक्षा में भित्तियों का सहारा लेकर बैठ गये।

एक सेनापति ने दो सौ सशस्त्र सैनिकों सहित प्रासाद में प्रवेश किया और राजमाता के कक्ष में निवेदन करने के लिये प्रस्तुत हुआ। सामंत प्रताप ने कुछ समय पूर्व तैयार की गई पालकियों और वाहकों को प्रासाद के गुह्य-मार्ग के समीप पहुंच जाने का आदेश दे दिया।

सूर्योदय के कुछ ही समय पश्चात आचार्य महामात्य को रणक्षेत्र से संदेश मिला था कि महासेनापति भद्रकीर्ति लगभग मध्य रात्रि के समय मगध की सेना को रोकने के प्रयत्न में धराशायी हो गये हैं। सेनापति दिगनाथ अब भी युद्ध कर रहा है।

महामात्य जानते थे दिगनाथ मगध की सेना को अधिक समय तक नहीं रोक सकेगा। एक दिन पूर्व ही उन्होंने दस सहस्र सैनिक दक्षिणापथ की ओर भेज दिये थे कि दुर्ग को महारानी के लिये सुरक्षित रखें। दूत के आने के

कुछ घड़ी पश्चात ही मगध की सेना आ पहुंचेगी। महामात्य ने अपने विश्वस्त सेनापति सोमनाथ को तुरन्त दो सौ सैनिक ले कर प्रासाद में भेज दिया कि विलम्ब किये विना महारानी और राजमाता को पालकियों पर ले कर गुह्य-मार्ग से वनों में चले जायें और वनों के मार्ग से दक्षिणापथ दुर्ग में शरण लें। वे स्वयं एक सहस्र सैनिक ले कर दक्षिणापथ के मार्ग की रक्षा के लिये तुरन्त राजधानी से चल दिये।

सेनापति सोमनाथ अन्त:पुर में आ कर महारानी के कक्ष के द्वार पर उपस्थित हुआ। उसने भूमि स्पर्श से अभिवादन करके राजमाता के सम्मुख महामात्य का संदेश निवेदन किया।

महारानी ने विचार में नेत्र मूँद लिये और कुछ क्षण मौन रह कर सोम-नाथ को धीमे और स्थिर स्वर में उत्तर दिया—"सेनापति, धैर्य रखो! भय-अभय मनुष्य के मन की अवस्था से होता है। रक्षक केवल भगवान हैं। वे चाहेंगे तभी दक्षिणापथ में रक्षा हो सकेगी। भगवान की कृपा से यहां भी रक्षा हो सकेगी। महामात्य के शस्त्र और सैनिक रक्षा नहीं कर सकते। रक्षा महास्थविर जीवक के सिद्धि चमत्कार और भगवान की कृपा से होगी। सेना-पति तुरन्त महाविहार में महास्थविर के सम्मुख प्रार्थना करें, उपासिका दर्शन की कृपा चाहती है। हम महास्थविर के उत्तर की प्रतीक्षा में हैं।"

सेनापति सोमनाथ को दुविधा में देखकर राजमाता फिर बोलीं—"सेना-पति धैर्य रखो। हम भय का उपाय कर रहे हैं।"

सोमनाथ ने सिर झुकाकर और हाथ जोड़ कर निवेदन किया—"भगवती राजमाता का आदेश और धर्मनिष्ठा शिरोधार्य है परन्तु परिस्थिति विकट है। महामात्य दक्षिणापथ की ओर प्रस्थान कर चुके हैं। शत्रु के मार्ग में अब कोई बाधा शेष नहीं है। किसी पल भी शत्रु का नगर प्रवेश करना सम्भव है।

राजमाता को सोमनाथ का विरोध अप्रिय लगा। उन्हों ने दृढ़ता से आदेश दिया—"सेनापति, भगवान महास्थविर की सेवा में संदेश ले जाये। उपासिका गुरु भगवान से आदेश पाये बिना नगर से प्रस्थान नहीं करेगी।"

सोमनाथ विवश हो राजमाता के कक्ष से आंगन में आया। उसने चार अश्वारोही सैनिकों को आदेश दिया; एक घोड़ा महास्थविर की सवारी के लिये साथ लेकर चौकड़ी भरते हुए महाविहार जायें और महास्थविर को घोड़े

पर बैठा कर राजप्रासाद में ले आयें। सेनापति विवशता में अन्त:पुर के द्वार पर खड़ा प्रतीक्षा करने लगा। उसका हृदय महारानी और राजमाता के शत्रु के हाथ पड़ जाने की आशंका में डूबा जा रहा था।

सभा-भवन में पुतलियों से खेलते-खेलते अमिता को फिर माता की याद आ गई। उस ने हिता से कहा—"हम अम्मा के पास जायंगे" और राजमाता के आंगन की ओर दौड़ चली।

राजमाता नेत्र मूंदे समाधि की मुद्रा में बैठीं बुद्धवचन का पाठ कर रही थीं। अमिता उन से जा लिपटी। राजमाता ने पाठ में विघ्न न पड़ने देने के लिये बेटी के स्पर्ष से उमड़ आये स्नेह के पुलक को वश में कर गम्भीरता से आशीर्वाद दिया—"तेरा कल्याण हो, धर्म में तेरी अटूट श्रद्धा हो, भगवान तेरी रक्षा करें।" और आदेश दिया दिया, "जाओ बेटी आंगन मे खेलो।" राजमाता फिर नेत्र मूंद वचन पाठ करती हुई महास्थविर के उत्तर की प्रतीक्षा करने लगीं।

राजमाता के कक्ष से अपने आंगन की ओर आते हुए अमिता ने अलिंदों और आँगन में अनेक सशस्त्र सैनिक देखकर हिता से प्रश्न किया—"हितू, आज यहां इतने सैनिक क्यों हैं ?"

हिता और उद्दाल के मन आने वाले भय की आशंका से कांप रहे थे। इसी लिये दोनों सामन्त के आदेश के अनुसार महारानी को अपनी बाहों की पहुंच से दूर नहीं होने दे रहे थे। परन्तु बालिका महारानी को भयभीत करना उचित नहीं था। हिता ने उत्तर दिया—"अम्मे भगवती, सैनिक महारानी और राजमाता को प्रणाम करने आये हैं।"

अमिता की दृष्टि अलिद से कक्ष के पिछवाड़े एक आम के वृक्ष से लटकते झूले पर पड़ गई। उसने आग्रह किया—"हम झूला झूलेंगे।"

हिता और उद्दाल ने महारानी को सुरक्षित स्थान में रखने के लिये अपने कक्ष में अथवा सभाभवन में पुतली से खेलने का ही सुझाव दिया परन्तु बालिका के आग्रह से विवश होकर उसे समीप ही लटकते झूले की ओर ले गये।

चरम संकट और उत्कट भय के उस क्षण में राजप्रासाद में कई घटनाएं एक साथ हो रही थीं।

अमिता शरत के प्रभात की हलकी धूप में पावस का गीत गाती हुई आम के पेड़ से लटके झूले पर झूला झूल रही थी।

राजप्रासाद में भर गये आतंक से विक्षिप्त होकर दास सूप बभ्रू को खाना देना भूल गया था। बभ्रू भी सब और भय और आतंक सूंघ रहा था। वह अपनी पूरी शक्ति लगा उसे बांधे रखने वाले खूंटे को उखाड़, पीछे लटकती सांकल को भूमि पर घसीटता हुआ, अमिता को खोजकर उस के पास आ पहुंचा और उस की रक्षा के लिये सतर्क बैठ गया।

राजमाता दृढ़ विश्वास से वचन पाठ करती हुई भगवान जीवक के चमत्कार द्वारा रक्षा करने की प्रतीक्षा कर रही थीं।

सेनापति सोमनाथ अन्तःपुर के द्वार पर अत्यंत विकलता से महाविहार में स्थविर जीवक को लाने के लिये गये सैनिकों की प्रतीक्षा कर रहा था। उस का मन भय से डूबा जा रहा था कि इस विलम्ब के कारण शत्रु से लड़ते हुए प्राण देकर भी वह राजमाता और महारानी की रक्षा नहीं कर सकेगा। सहसा उसे ऊंचे स्वर में नरसिंहे और नगाड़ों के बज उठने का शब्द सुनाई दिया।

इस नरसिंहे और नगाड़े का शब्द कलिंग के नरसिंहे और नगाड़े से भिन्न था। सोमनाथ ने जान लिया कि मगध की सेना नगर में प्रवेश कर रही है। सेनापति के लिये अब और प्रतीक्षा करना असम्भव हो गया परन्तु महास्थविर जीवक को लेने गये सैनिक तब भी न लौटे थे।

सोमनाथ ने पुनः राजमाता के कक्ष-द्वार पर उपस्थित होकर प्रार्थना की—"परमभगवती, अब प्रतीक्षा के लिये समय नहीं है ........"

मौन वचनपाठ में समाविस्थ, नेत्र मूंदे राजमाता ने कोई उत्तर न दिया, न वे सेनापति की ओर अभिमुख हुईं।

सेनापति ने दूसरी बार अधिक ऊंचे स्वर में प्रार्थना की। महरानी फिर भी मौन और निरपेक्ष रहीं। सोमनाथ ने तीसरी बार और ऊंचे स्वर में प्रार्थना की। इस बार राजमाता ने मंत्र समाप्त कर, भगवान को प्रणाम कर सेनापति की ओर ध्यान दया।

सेनापति ने बहुत अनुनय से प्रार्थना की—"भगवती राजमाता, शत्रु नगर में प्रवेश का तूर्य बजा चुका है। उसे मार्ग में कोई बाधा नहीं है। वह राज

प्रासाद की ओर ही आ रहा है। गुह्य-मार्ग पर शिविका प्रस्तुत है। भगवती शिविका की ओर पधारने की कृपा करें ?"

राजमाता ने प्रश्न किया—"भगवान गुरु आये ?"

सेनापति ने उत्तर दिया—"चार सैनिक महास्थविर के लिये अश्व लेकर गये थे। वे अभी तक नहीं आये।"

राजमाता ने उत्तर दिया—"उपासिका भगवान गुरु की अनुमति के बिना प्रासाद नहीं छोड़ेगी।" और राजमाता ने फिर नेत्र मूंद लिये।

सेनापति को जान पड़ा उसके पांव तले धरती फट गई है और वह अतल में गिरता चला जा रहा है। वह निरुपाय था। इस स्थिति का उपाय करने के लिये सोमनाथ ने आंगन में आकर अपने साथ आये सैनिकों को आदेश दिया—"एक अश्वारोही तुरन्त जाकर देखे, महाविहार में गये अश्वारोही क्यों नहीं लौटे ! पचास धनुर्धारी सैनिक तुरन्त प्रासाद की छत पर जा कर शर-संधान करें। एक सौ सैनिक अन्तःपुर को घेर कर रक्षा करें। पचास सैनिक गुह्य-मार्ग की रक्षा करें।"

जिस समय सेनापति सोमनाथ प्रासाद में अंतिम आमरण संग्राम की तैयारी कर रहा था, अमिता अपने कक्ष के समीप आम के पेड़ से लटका झूला झूल रही थी। कुछ-कुछ पल पश्चात कोई यवनी अथवा सैनिक आकर हिता के कान में संदेश दे जाता, महारानी गुह्य-मार्ग पर आने के लिये सन्नद्ध रहें।

झूला झूलते समय अमिता की दृष्टि आकाश की ओर गई। उसे दिखाई दिया कि बहुत समीप अंतरिक्ष से काले-काले बादलों के समूह आकाश की ओर उठ रहे हैं और उन बादलों के बीच में लाल लपटों जैसी निःशब्द बिजलियां लपक रहीं हैं। हिता ने विस्मय से पूछ लिया—"हितू, हितू ! आकाश में वह क्या है ?"

विराट परिमाण में आकाश की ओर उमड़ता धुआं और लाली देख कर हिता, वापी और कंचुकी सिहर उठे। नगर की ओर से एक अस्पष्ट आर्त, द्रावक कोलाहल शब्द सुनाई दे रहा था। उद्दाल ने भय को और छिपाने का उपाय न देख निवेदन किया—"भगवती महारानी, भयंकर संकट सिर पर है। शत्रु ने नगर मे आग लगा दी है। महारानी रक्षा के लिये कक्ष में चलें।"

अमिता ने उद्दाल की बात सुनी ही नहीं। वृद्ध के भय की अपेक्षा आकाश में उठते धुयें और लाली ने ही उस का ध्यान आकर्षित किया। बालिका किलक कर बोली – "मामा, हम प्रासाद की छत पर जाकर देखेंगे। यह तो बहुत सुन्दर है। हम छत पर जा कर देखेंगे।" अमिता प्रासाद की छत पर जाने वाली चौड़ी सीढ़ियों की ओर दौड़ चली।

हिता, वापी और उद्दाल महारानी के पीछे-पीछे दौड़ रहे थे और पुकार रहे थे—"नहीं-नहीं! अम्मे महारानी ऐसा न करें। प्रासाद की छत पर न जायें।" अमिता को और सब लोगों को उस के पीछे दौड़ते देख कर बभ्रु दौड़ कर अमिता के साथ हो गया। अमिता अपने सेवकों की चेतावनी की उपेक्षा कर पुकारती जा रही थी—"हम छत पर जायंगे हम छत पर से देखेंगे।"

अमिता के सीढ़ियों पर पांव रखते ही बभ्रु उस से भी आगे-आगे लपक कर अपने गले की सांकल सीढ़ियों में घसीटता हुआ छत की ओर दौड़ चला। बभ्रु के पीछे-पीछे अमिता और अमिता के पीछे हिता, अपनी बाहें महारानी की ओर फैलाये दौड़ी जा रही थी और उस के पीछे वापी और उद्दाल शरीर की पीड़ाओं को भुला कर चढ़े चले जा रहे थे।

ठीक उसी समय सेनापति सोमनाथ ने देखा, महास्थविर को बुलाने गये चारों अश्वारोही अपने घोड़े बाहर आंगन में छोड़ कर अन्तःपुर में प्रवेश कर रहे हैं। सोमनाथ सैनिकों की ओर बढ़ कर पुकार उठा—"महास्थविर?"

सब से आगे आते सैनिक ने उत्तर दिया—"स्वामी, महास्थविर प्रातः ही नगर त्याग कर कहीं चले गये हैं।"

सोमनाथ चारों सैनिकों को लेकर दौड़ता हुआ फिर महारानी के कक्ष के द्वार पर पहुंचा। शीघ्रता से भूमि स्पर्श कर बहुत ऊंचे स्वर में वह पुकार उठा—"परमभगवती, अब विलम्ब न करें। महास्थविर की सेवा में संदेश ले कर गये यह सैनिक संवाद देते हैं कि महास्थविर नगर में नहीं है। नगर का त्याग कर गये है।"

सोमनाथ की बात सुन कर राजमाता के मुख पर से दृढ़ता का भाव जाता रहा। उन्होंने संवाद लाने वाले सैनिकों की ओर जिज्ञासा से देखा।

सैनिक ने भूमि स्पर्श कर असफलता के लिये अभयदान मांग कर निवेदन किया, महाविहार के सब स्थानों को देखा गया। महाविहार से अधिकांश भिक्षु चले गये हैं। एक अत्यंत वृद्ध कातर भिक्षु ने विलाप करते हुए समाचार दिया कि महास्थविर प्रात: ही पीला चीवर त्याग कर, एक कौपीन मात्र पहन और शरीर पर भभूत रमा कर औघट वेश में विहार से प्रस्थान कर गये हैं। सैनिक ने यहा भी कहा—नगर शत्रु के सैन्यदल से भर गया है। शत्रु लूट-पाट कर नागरिकों के घर जला रहा है। शत्रु का अश्वारोही दल राज-पथ से उन के पीछे-पीछे ही प्रासाद की ओर चला आ रहा था। शत्रु अश्वा-रोहियों के पीछे हाथियों का दल है। वे इस समय प्रासाद के द्वार से दूर नहीं होंगे........।

संवाद सुन कर महारानी ने पल भर के लिये नेत्र मूंद लिये और फिर नेत्र खोल, गहरा श्वास लेकर सेनापति सोमनाथ को अधीर स्वर में सम्बोधन किया—"सेनापति, बालिका महारानी की, बेटी अमिता की रक्षा करो।"

सोमनाथ ने राजमाता के सम्मुख आदेश की स्वीकृति में तत्परता से सिर झुका कर सैनिकों को आदेश दिया—"परमभगवती महारानी तुरन्त दासी हिता और कंचुकी उद्दाल सहित गुह्य-मार्ग के कक्ष में पधारें। गुह्य-मार्ग पर शिविकाएं प्रस्तुत हैं।"

सैनिक महारानी के कक्ष की ओर दौड़ पड़े। सोमनाथ ने फिर राज-माता को सम्बोधन किया—"सेवक परमभगवती को गुह्य-मार्ग का मार्ग दिखाता है पधारें!" राजमाता सेनापति के दिखाये मार्ग से सीढ़ियां उत-रने लगीं।

जिस समय सेनापति सोमनाथ के आदेश से महारानी को सुरंग द्वार पर लाने के लिये चारों सैनिक अन्त:पुर के आंगन से जा रहे थे उन्हें राजप्रासाद के बाहर के आंगन से 'कलिंग की राजेश्वरी की जय!' और 'देव प्रिय मगध सम्राट की जय!' का घोष और धातु की ढालों पर खड्ग और भाले पड़ने की झंकारें सुनाई दीं। महारानी के कक्ष के सम्मुख अब भी कर्त्तव्य तत्परता में खड्ग लिये खड़ी यवनी से उन्होंने जाना, महारानी कौतूहल से प्रासाद की छत पर दौड़ गई हैं। सैनिक महारानी को लाने के लिये प्रासाद की छत की ओर दौड़ पड़े।

अमिता से अनेक कदम पहले छत पर पहुंच कर बभ्रु ने वहां बहुत से सशस्त्र सैनिकों को धनुषों पर बाण चढ़ाये देखा। वह आशंका में जोर से भौंकने लगा। अमिता छत पर पहुंची तो बभ्रु बालिका की रक्षा के लिये उस के चारों ओर घूम-घूम कर भौंकने लगा। अमिता ने ऊंची छत पर आ कर देखा कि नगर में अनेक स्थानों पर धुयें के काले बादल और अग्नि की गगन-चुम्बी लपटें उठ रही थीं। नगर का आकाश, जलने की चरचरी गंध और भयातुर चीत्कारों से भरा हुआ था। नगर के पथों और वीथियों पर बहुत से लोग अपनी गठड़ी-मुठड़ी उठाये इधर-उधर भागते दिखाई दे रहे थे। दूसरे लोग हाथों में भाले और खड्ग लिये भागते लोगों का पीछा कर उन की गठड़ी-मुठड़ी छीन कर उन्हें मार कर भूमि पर गिरा दे रहे थे।

इस दारुण दृश्य से अमिता व्याकुल हो गई। वह पुकार उठी—"वह क्या है ? वहां क्या हो रहा है ? यह कौन लोगों से छीन रहा है ? यह कौन लोगों को मार रहा है ?"

सोमनाथ की आज्ञा से महारानी को ढूंढ़ते चारों सैनिक भी प्रासाद की छत पर आ पहुंचे। बभ्रु सशस्त्र सैनिकों को महारानी के समीप आते देख, सामने हो उन्हें दूर रहने के लिये ललकारने लगा। सैनिकों ने महारानी के आदर के लिये भूमि स्पर्श कर कंचुकी उद्दाल और हिता को हाँफते हुए सम्बोधन किया—"महा भय है। शत्रु प्रासाद के आंगन में पहुंच गया है। सेनापति का आदेश है, महारानी रक्षा के लिये तुरन्त गुह्य-मार्ग के कक्ष में पधारें।"

अमिता ने सैनिकों की ओर ध्यान न देकर उद्दाल को फिर सम्बोधन किया —"मामा, यह कौन प्रजा से छीन रहा है ? यह कौन प्रजा को डरा रहा है ? यह कौन प्रजा को मार रहा है ?"

कंचुकी ने उत्तर दिया—"परमभगवती महा भय है। अम्मे भगवती, तुरन्त गुह्य-मार्ग के कक्ष में चलें।"

अमिता ने मचल कर आग्रह किया—"नहीं, बताओ, यह कौन प्रजा से छीन रहा है ? यह कौन प्रजा को डरा रहा है ? यह कौन प्रजा को मार रहा है ?"

कंचुकी ने उत्तर दिया—"परमभगवती, यह चंड अशोक महारानी की प्रजा से छीन रहा है, प्रजा को डरा रहा है, प्रजा को मार रहा है। अम्मे

महारानी दुष्ट अशोक शिशुओं के प्रति निर्दय है। वह शिशुओं की हत्या करता है। महारानी तुरन्त गर्भ-कक्ष में चलें। राजमाता महारानी को·······"

महारानी ने अपने केशों के कुंडल छिटका कर आग्रह किया—"नहीं नहीं, दुष्ट अशोक को बांध लो! वह किसी से क्यों छीनता है? किसी को क्यों डराता है? किसी को क्यों मारता है?"

कंचुकी ने महारानी को गोद में उठा लेने के लिये बांहों में समेटते हुए समझाया—"अम्मे महारानी, गुह्य-मार्ग के कक्ष में पधारें। अशोक राक्षस के समान क्रूर है। उसे कोई नहीं बाँध सकता।"

प्रासाद की छत पर खड़े सैनिकों ने देखा कि शत्रु सैनिक अन्त:पुर के द्वार से भी भीतर घुसने का यत्न कर रहे हैं। वे पुकार उठे—"महारानी शीघ्र, अति-शीघ्र पधारें।"

अमिता ने कंचुकी की बांहों से परे हट कर हठ किया—"क्यों नहीं बांध सकता? आचार्य काका कहां है? महासेनापति काका कहां हैं?"

घबराये हुए सैनिकों ने उत्तर दिया—"परमभगवती, कलिंग की सेना परास्त हो गई। आचार्य महामात्य रणक्षेत्र में हैं। महासेनापति रणक्षेत्र में मारे गये। वे जीवित नहीं हैं।"

भयभीत स्वर में अमिता ने पूछा—"काका को किस ने मारा?"

"महारानी उन्हें दुष्ट अशोक ने मारा। महारानी शीघ्र गुह्य-मार्ग पर पधारें। राजमाता पुकार रही हैं।"—कंचुकी ने समझाया।

अलिंद से गुह्य-मार्ग की ओर जाती हुई राजमाता अन्त:पुर के द्वार पर शत्रु और प्रासाद के सैनिकों की भिड़न्त के कोलाहल से आतंकित हो कर पुकारने लगीं—"शीघ्र लाओ! बेटी को शीघ्र लाओ!"

अन्त:पुर के आंगन में खड़े सैनिक भी महारानी को प्रासाद की छत पर देख कर राजमाता के अनुकरण में पुकारने लगे—"परमभगवती तुरंत ही पधारें।"

परन्तु प्रासाद की छत पर खड़ी अमिता किसी की गोद में न जाने का हठ कर रही थी। अमिता के चारों ओर क्रोध में भौंक-भौंक कर चक्कर काटते बभ्रू के कारण सैनिक बालिका को स्पर्ष करने में असमर्थ थे। अमिता

हठ से मचल कर पुकार रही थी—"नहीं, नहीं, हम दुष्ट अशोक को बांधेंगे, हितू, बभ्रू की सांकल हमें दो ! हम चंड अशोक को बांधेंगे।"

नीचे अन्त:पुर के द्वार पर दोनों ओर के सैनिकों में भयंकर संघर्ष हो रहा था। शत्रु के सैनिकों की संख्या बढ़ती जा रही थी। हिता कोई उपाय न देख महारानी को संतुष्ट कर, सीढ़ियों से नीचे ले जाने के लिये कुत्ते को पुचकार कर, उस के गले से सांकल खोल कर अमिता के हाथ में दे दी और कातर स्वर में अनुरोध किया—"अम्मे महारानी, दासी की गोद में नीचे चलें।" अमिता ने हिता की गोद में आना भी स्वीकार न किया।

नीचे आंगन से सोमनाथ की ललकार सुनाई दी—"महारानी तुरंत पधारें!"

छत पर आये सैनिकों को सेनापति की पुकार का उत्तर देना पड़ा—"महारानी न आने का हठ किये हैं। महारानी सांकल लेकर अशोक को बांधने जा रही हैं।"

उसी समय अन्त:पुर के द्वार से शत्रु सैनिकों ने प्रवेश किया। शत्रु सैनिकों के सब से पहले दल के साथ अशोक द्वारा कलिंग के राजप्रासाद पर अधिकार करने के लिये भेजा गया सेनापति गोपाल था। गोपाल ने प्रासाद की छत से आती पुकार सुनी "....महारानी सांकल लेकर अशोक को बांधने जा रही हैं।" गोपाल को अपने कानों पर विश्वास न हुआ परन्तु उसके कानों ने फिर प्रासाद की छत पर से कलिंग के सैनिक को पुकारते सुना—"महारानी सांकल लेकर अशोक को बांधने जा रही हैं।"

मगध सेनापति गोपाल का हृदय दहल गया। वह अपने सैनिकों को द्वार पर छोड़ उल्टे पांव लौट पड़ा। राजप्रासाद के द्वार पर लौटकर गोपाल ने देखा, जितने समय में मगध के सैनिक कलिंग के राजप्रासाद के सैनिक को गिरा कर अन्त:पुर तक पहुंच पाये थे, अनेक सशस्त्र सामन्तों से घिरा अशोक का विशाल गज नगर के सिंह द्वार से राजप्रासाद के द्वार तक आ पहुंचा था। सम्राट के प्रासाद में प्रवेश करने के लिये उस के हाथी को बैठाया जा रहा था।

सेनापति गोपाल ने सम्राट के हाथी के सामने आदर से सिर झुका कर

सम्राट को रुके रहने का संकेत करने के लिये दोनों हाथ उठा दिये और आतंकित स्वर में पुकारा—"सम्राट अभयदान दें। सम्राट प्रतीक्षा करें।"

सम्राट अशोक के माथे पर बल पड़ गये। क्रुद्ध स्वर में सम्राट ने प्रश्न किया—"अजेय सम्राट अशोक के लिये भय ?"

भयभीत सेनापति ने सिर झुकाकर संकोच से उत्तर दिया—"महिमामय सम्राट, कलिंग की उन्मत्त रानी सम्राट को बांधने के लिये सांकल लेकर आ रही है।"

अशोक ने विद्रूप और तिरस्कार के स्वर में प्रश्न किया—"क्या अभी कलिंग की रानी का अहंकार शेष है ? अजेय अशोक ऐसी दुस्साहसी रानी का दर्प अपने पांव तले रौंद कर चूर्ण करेगा।"

सम्राट ने हाथी से उतरने के लिये भूमि की ओर देखा। छोटी सीढ़ी लेकर साथ चलते सैनिक ने तुरंत सीढ़ी प्रस्तुत कर दी।

शंका से विह्वल सेनापति ने एक बार फिर चेतावनी दी—"महिमामय देवानांप्रिय सम्राट, कलिंग की शस्त्र-शक्ति चूर्ण हो चुकी है परन्तु प्रेत शक्ति तंत्र शक्ति.......।"

अजेय अशोक मनुष्य, देव अथवा प्रेत किसी से आशंकित नहीं है।" —अशोक क्रोध में दांत पीस कर बोला और उसने हाथी से उतर कर आदेश दिया—"मार्ग दिखाया जाये !"

अशोक के सैनिकों ने नरसिंहें और भेरी बजा कर सम्राट के प्रासाद में प्रवेश करने की सूचना दी।

अशोक ने खड्ग खींच कर अपने अंग-रक्षक सामन्तों सहित राजप्रासाद के द्वार में प्रवेश किया और अन्तःपुर की ओर बढ़ चला।

अमिता सैनिकों, कंचुकी अथवा हिता की भी गोद में जाना स्वीकार न कर बभ्रू की सांकल हाथ में लिये अपने पांव सीढ़ियां उतर कर नीचे आंगन में पहुँची। अलिंद में सीढ़ी के सामने प्रतीक्षा में छटपटाते सोमनाथ और राजमाता ने हिता को गोद में उठाकर सुरंग मार्ग की ओर ले जाने का प्रयत्न किया। अमिता निषेध में हठ से सिर हिलाती हुई चिल्ला उठी—"नहीं, नहीं ! हम दुष्ट अशोक को सांकल में बांधेंगे। वह बभ्रु की भांति दुष्ट है। हम उसे बांधेंगे।"

प्रासाद के द्वार पर मगध के नरसिंहे और भेरी के बजने का स्वर और उस के साथ ही मगध के सैनिकों का जय-घोष—"देवानांप्रिय मगध सम्राट की जय !" सुनाई दिया। अमिता के अतिरिक्त सभी लोगों के हृदय स्तब्ध रह गये। कलिंग और मगध के शेष बचे, अभी तक युद्ध करते सैनिकों के शस्त्र उठाये हाथ रुक गये।

अमिता हाथ में कुत्ते की सांकल लिये अन्तःपुर से बाहर जाने के द्वार की ओर बढ़ती जा रही थी। उस के पीछे लोहे की सांकल से मुक्त परन्तु स्नेह की सांकल में बंधा बभ्रु भी शत्रु को सूंघता, बालिका स्वामिनी की रक्षा के लिये तत्पर सहस्रों खड्गों की भी चिंता न कर चला जा रहा था। हिता भी विवश पुकारती चली आ रही थी:—"अम्मे महारानी उधर नहीं, उधर नहीं·······?"

सोमनाथ अब भी शत्रु के हाथ से महारानी की रक्षा कर पाने के लिये पुकार रहा था—"भगवती राजेश्वरी इस ओर पधारें !"

राजमाता भी पुकार रही थीं—"बेटी, अमिता, अम्मे !······"

सहसा अन्तःपुर के द्वार से कवच और शिरस्त्राणधारी चार मगध सामंतों ने प्रवेश किया और उन के मार्ग देने पर स्वर्ण से मढ़ा और रत्नों से जड़ा कवच और शिरस्त्राण पहने, हाथ में रत्न जड़ी मूठ की तलवार लिये अशोक ने प्रवेश किया।

अमिता के पीछे खिचे आते हिता सोमनाथ, राजमाता, सैनिकों और दास-दासियों की जीभ दांतों तले आ गई और श्वास रुक से गये मानो बालिका महारानी उन की आंखों के सामने व्याघ्र के पंजे के नीचे चली गई परन्तु अमिता अब भी आगे बढ़ती जा रही थी और अशोक भी अपनें सामंतों के बीच आंगन में बढ़ता आ रहा था। दो पल ऐसा ही जान पड़ा कि अशोक का ध्यान इतनी छोटी बालिका की ओर नहीं गया और अमिता ने अभी विक-राल, सर्वग्रासी राक्षस को नहीं देखा इसीलिये निर्भय है।

सहसा आतंक की निस्तब्धता में और पत्थर के आंगन पर बहुत से पैरों की आहट में बालिका के कोमल कंठ की ऊंची पुकार सुनाई दी—"सुनो, तुम कौन हो ?"

अमिता के प्रश्न की पुकार को सर्वनाश के लिये आह्वान समझ कर कलिंग के प्रासाद के लोगों ने भय से सांस रोक लिये। अशोक यह पुकार सुन कर विस्मय में मौन खड़ा हो, अपनी कमर से नीचे छोटी बालिका की ओर तीव्र दृष्टि से देखने लगा।

अमिता ने विजयी सम्राट की तीव्र दृष्टि से भयभीत न हो कर फिर पुकारा—"तुम कौन हो ? तुम बहुत सुन्दर हो ! ... तुम्हारे वस्त्र बहुत सुन्दर हैं। तुम्हारा खड्ग बहुत सुन्दर है। तुम हमारे साथ आओ। हम चंड अशोक को बांधने जा रहे हैं।" अमिता ने अपने हाथ में थमी कुत्ते की सांकल अशोक को दिखाई।

अमिता की बात सुन कर उसके पीछे आते लोगों के नेत्र भय से झपक गये और हृदय मुंह को आ गये। अशोक निश्चल और मौन अमिता की ओर देखता रहा।

अशोक की स्तब्ध मौन मुद्रा को उपेक्षा और अवज्ञा समझ कर अमिता खिन्नता से बोली—"तुम हमारा आदेश नहीं मानोगे? हमारा आदेश सब को मानना चाहिये। हम कलिंग की राजेश्वरी हैं। हम प्रजा की माता हैं। तुम हमारे साथ आओ ! हम अशोक को बांध कर लायें।"

अशोक के होंठ विस्मय में खुल गये और विस्मय से दबा उस का स्वर सुनाई दिया—"तुम कलिंग की महारानी हो ?"

सिर झुका कर अमिता ने स्वीकार किया—"हां, हम कलिंग की महारानी हैं। तुम हमारेसाथ आओ। हम दुष्ट अशोक को बांधने जा रहे हैं। अशोक प्रजा से छीनता है, प्रजा को डराता है, प्रजा को मारता है।"

विजयी सम्राट फिर दो पल काष्ठवत मौन खड़ा रहा। उसकी निश्चलता से विस्मित होकर अमिता ने विस्मय से पूछा—"तुम कौन हो ?"

अशोक ने मंत्र-मुग्ध की भांति उत्तर दिया—"मैं सम्राट अशोक हूं।"

अमिता के नेत्र बाल विस्मय से फैल गये और वह बोली—"तुम अशोक हो ? तुम तो बहुत सुन्दर हो ? तुम प्रजा से क्यों छीनते हो ? तुम प्रजा को क्यों डराते हो ? प्रजा को क्यों मारते हो ? तुम्हें क्या चाहिये ?"

अशोक निश्चल और निरुत्तर रहा। अमिता अशोक की ओर एक कदम बढ़ गई और आग्रह के स्वर में बोली—"क्या तुम्हारे पास खाने के लिये

नहीं है ? क्या तुम्हारे पास वस्त्र नहीं है ? क्या तुम्हारे पास खिलौने नहीं क्या चाहिये ? हमारे पास सब कुछ है। आओ हम तुम्हें देंगे !"

अमिता एक कदम और आगे बढ़ गई। उस ने अशोक का हाथ पकड़ लिया और उसे रास्ता दिखाती ले चली। दुर्दान्त सम्राट अमिता के पीछे-पीछे रस्सी में बंधे पालतू पशु की भांति चलने लगा और उस के पीछे, मगध के दर्प से उन्मत्त सामंतों का समूह विस्मय से और उन के पीछे कलिंग के प्रासाद के लोग बालिका के प्रति भय और चिंता से अधीर खिंचे चले जा रहे थे।

अमिता अशोक का हाथ अपने हाथ में पकड़े उसे खींचती हुई आंगन से अलिंद में ले गई, अलिंद से दीर्घिका में और दीर्घिका से फिर अलिंद में आकर सूने राजसभा-भवन में जा पहुंची।

राजसभा-भवन में उस समय भी सिंहासन के चारों ओर कई पुतलियां पड़ी हुई थीं। दीवारों के साथ भी कई प्रकार के खिलौने, फल, मुर्झाए हुए फूल और बर्तनों में मिष्टान्न रखे हुए थे। अमिता अपनी बांह फैला कर चारों ओर पड़े इस धन की ओर संकेत कर अशोक से बोली—"बोलो, तुम्हें क्या चाहिये ? फल चाहिये, मिष्टान्न चाहिये या खिलौने चाहिये ? जो चाहिये लो। यहां सब कुछ है। हम तुम्हें सब कुछ देंगे। तुम किसी से छीनो मत ! किसी को डराओ मत ! किसी को मारो मत। तुम्हें क्या चाहिये बोलो !"

मगध का दुर्दान्त सम्राट अमिता के सामने मंत्र-मुग्ध की भांति विवश, असहाय और मौन खड़ा था। सम्पूर्ण पृथ्वी को विजय करने की प्रतिज्ञा करने वाले अशोक ने, एक बालिका के प्रश्न से परास्त होकर, अपनी विजय-यात्रा अपूर्ण छोड़ देने के लिये ही दो बार सैन्य दल लेकर कलिंग पर चढ़ाई नहीं की थी। सम्राट ने अपना सम्मोहन दूर करने के लिये अपना मस्तिष्क हिलाया। पलक झपक कर सोचा और राज-सिंहासन की ओर संकेत कर उत्तर दिया—'हमें कलिंग का राज-सिंहासन चाहिये !"

अशोक की मांग सुन कर कलिंग की बालिका महारानी पल भर के लिये सोच में पड़ गई और फिर विरोध में सिर हिला कर बोली—"नहीं, नहीं ! राज-सिंहासन तुम ले जाओगे तो हम पुतली का राजतिलक कैसे करेंगे ?" अमिता आधे पल के लिये चिंता में मौन हो गई और फिर दूसरे स्वर में

बोली—"अच्छा तुम मांगते हो तो ले जाओ !·········क्या तुम्हारे पास राज-सिंहासन नहीं है ?·········अच्छा तुम इसे ले जाओ। हम दूसरा बनवा लेंगे।"

सम्राट के पीछे खड़े मगध के सामंतों और कलिंग के प्रासाद के लोगों के चेहरों पर से कठोरता और भय मिट कर कोमलता का भाव आ गया। मगध का सम्राट निश्चल, निर्वाक रह गया। सोना मढ़े लोहे के कवच से ढका उस का पत्थर का हृदय, जो एक लाख से भी अधिक सैनिकों के रक्त से भी न भीज पाया था, छलछला गया। सम्राट ने अपने हाथ में थमा खड्ग भूमि पर डाल दिया और झुक कर अमिता को गोद में उठा कर बोला:—

"कलिंग की महारानी, मगध का विजयी सम्राट हार गया। तुम ने विजय पाई। तुम दुष्ट अशोक को बांधने जा रही थी।" अशोक ने अमिता के हाथ से लटकती कुत्ते की सांकल अपने गले में डाल ली और बोला:—"कलिंग की महारानी, सम्राट अशोक बंध गया। अशोक तुम्हारा बंदी है। अशोक ने जो मांगा, तुम ने दिया। अब तुम अशोक से मांगो ! कलिंग की महारानी आदेश दे, क्या चाहती है ?"

अमिता ने पुलकित स्वर में उत्तर दिया—"हमें-कुछ नहीं चाहिये। हमारे पास सब कुछ है।"

अशोक ने पल भर सोचा और बोला—"महारानी सत्य कहती है परन्तु महारानी आदेश दे। अपने बंदी अशोक को आदेश दे।"

अमिता ने उत्साह से उत्तर दिया—"हमारा आदेश है, किसी से छीनो मत ! किसी को डराओ मत ! किसी को मारो मत !"

बभ्रु अपनी स्वामिनी को अपरिचित व्यक्ति की गोद में देख व्याकुलता से उस की ओर मुख उठाये कूं-कूं कर रहा था। अमिता ने बभ्रु की ओर देख कर सम्राट से कहा—"यदि तुम किसी से छीनोगे, किसी को डराओगे, किसी को मारोगे तो हम तुम्हें बभ्रु की भांति बांध कर रखेंगे।"

अशोक ने स्वीकार किया—"सम्राट अशोक प्रतिज्ञा करता है, वह किसी से छीनेगा नहीं, किसी को डरायेगा नहीं, किसी को मारेगा नहीं। अब अशोक हिंसा और युद्ध से विजय की कामना नहीं करेगा। वह कलिंग की विजयी महारानी की भांति निश्छल प्रेम से संसार के हृदयों को विजय करेगा।"

× × ×

# अशोक का शिला-लेख

अशोक कलिंग को विजय कर, अपनी विजय-यात्रा के मार्ग से ही मगध की ओर लौटा। जिस ओर उस की दृष्टि जाती, देश नरमुंडों और कंकालों से ढका दिखाई देता। सब ग्राम और नगर, उजड़ी और जली हुई बस्तियों के आधे जले शवों की भांति जान पड़ते थे। जहां कहीं मनुष्य दिखाई देते वे बहुत त्रस्त और दुखी थे। केवल शवों पर मंडराते गीध, गीदड़, लकड़बघ्घे, कौए ही प्रसन्न थे। इन दृश्यों को न देखने के लिये सम्राट हाथी की सवारी छोड़कर पर्दों से ढकी पालकी में बैठ कर चलने लगा। सड़ते हुए शवों की दुर्गन्ध से पेट की आंते मुख को आने लगतीं और मस्तिष्क चकराने लगता। अशोक के दास-दासी उसके आगे-पीछे अनेक प्रकार की सुगंध लेकर चलते परन्तु उस दुर्गन्ध से मुक्ति न मिलती। इस लम्बी दुखद यात्रा में अशोक की ग्रीवा निष्फल हिंसा के परिताप और पश्चाताप से झुकी ही रही।

मगध की राजधानी पाटलीपुत्र में लौट कर अशोक ने दूसरों का देश और धन न छीनने की और किसी को न डराने और न मारने की प्रतिज्ञा की और युद्ध की हिंसा से पश्चाताप की व्यापक घोषणा कर दी। यह प्रतिज्ञा विस्मृत न हो जाने देने के लिये अशोक ने अपने साम्राज्य भर में इस प्रतिज्ञा को शिलाओं पर इस प्रकार अंकित करवा दिया:—

"अभिषिक्त होने के आठवें वर्ष देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा ने कलिंगों को जीता। यहां से डेढ़ लाख प्राणी बाहर ले जाए गए, एक लाख आहत हुए और उससे अधिक ( संख्या में ) मरे। इस के अनंतर जीते हुए कलिंगों में देवताओं के प्रिय का खूब धर्म विस्तार, धर्म कामना और धर्मानुष्टि हुई। इस पर कलिंगों को जीतने वाले देवताओं के प्रिय को बड़ा पछतावा होता है, ( क्योंकि ) जहां लोगों का वध, मरण या देश-निकाला हो उस देश को मैं जीतने पर भी नहीं जीता हुआ मानता हूं।

यह ( वध आदि ) देवताओं के प्रिय को अत्यन्त दुःखद और भारी जान पड़ता है। यह देवताओं के प्रिय को और भी भारी जान पड़ता है (क्योंकि) वहाँ सर्वत्र ब्राह्मण, श्रमण तथा दूसरे धर्म वाले और गृहस्थ रहते हैं, जिनमें सब से पहले भरण-पोषण विहित है, जिनमें माता पिता की शुश्रूषा, गुरु की

शुश्रूषा, मित्र, परिचित, सहायक संबंधी तथा नौकर चाकरों का उचित आदर और (उनकी ओर से) दृढ़ भक्ति का विधान है। ऐसे लोगों का वहां घात, वध, या सुख से रहते हुओं का देश निकाला होता है। जिन सुव्यवस्थित लोगों का स्नेह नहीं घटा है उनके मित्रों, परिचितों, सहायकों तथा कुटुंबियों को दुःख होता है, ( इसलिए ) उनके भी अपघात होता है। यह दशा सब मनुष्यों की है, पर देवताओं के प्रिय को यह अधिक दुःखद जान पड़ती है।

कोई ऐसा जनपद नहीं है जहां ब्राह्मण और श्रमण आदि के अनंत संप्रदाय न हों। ऐसा कोई जनपद भी नहीं है जिसमें मनुष्यों को किसी न किसी धर्म में प्रीति न हो। जितने मनुष्य कलिंग विजय (प्राप्ति) के समय आहत हुए, मारे गए और बाहर निकाले गए उनका सौवाँ तथा हजारवां भाग भी ( यदि ) आहत होता, मारा जाता या निकाला जाता तो आज देवताओं के प्रिय को भारी दुःख देने वाला होता। देवताओं के प्रिय का मत है कि जो अपकार करता है वह भी क्षमा के योग्य है यदि वह क्षमा किया जा सके।

जो वन-निवासी देवताओं के प्रिय के विजित देश में है उनको भी वह मनाता और उनका ध्यान रखता है कि जिस में देवताओं के प्रिय को पछतावा न हो। वे अपने कर्मों पर लज्जित हों और नष्ट न हों। देवताओं का प्रिय सब जीवों की अक्षति, संयम, समचर्या तथा प्रसन्नता चाहता है। जो धर्म की विजय है वही देवताओं के प्रिय की मुख्य विजय है। यह विजय देवताओं के प्रिय को यहां ( अपने राज्य मे ) तथा सब सीमांत प्रदेशों में छः सौ योजन तक जिस में अंतियोकस नाम का यवन राजा तथा अन्य चार राजा—तुरमय, अंतकिन, मग, तथा असिकसुदर ( के राज्य ) हैं तथा जिससे दक्षिण की ओर चोड़, पांड्य, ताम्रपर्णी वाले हैं, प्राप्त हुई। यहां विप, वृज्जि, यवन, कंबोज, नाभितियों, भोजों, पैठनिकों, अंध्र, पुलिंद आदि सब ( के ) देशो में देवताओं के प्रिय का धर्मानुशासन माना जाता है। जहां देवताओं के प्रिय के दूत नहीं जाते वहां के लोग भी देवताओं के प्रिय के धर्मवृत, धर्मविधान और धर्मानुशासन को ( अपने राज्य में सुनकर उसका अनुसरण करते हैं और ( बराबर ) करेंगे।

अब तक (इस प्रकार की) जो विजय प्राप्त हुई है—उस प्रेम की विजय से आनंद होता है पर यह आनंद हलका है। देवताओं का प्रिय उस (आनंद)

को महाफलदायक मानता है जो परलोक से सम्बन्ध रखता है। इसीलिए मैंने यह धर्म लिपि लिखवाई कि जिसमें मेरे पुत्र और प्रपौत्र शस्त्रों द्वारा प्राप्त नई विजय को प्राप्त करने योग्य न मानें। शांति और लघुदंडता में रुचि रखें और धर्म की विजय को ही विजय समझें, ( क्योंकि ) वह इस लोक और परलोक ( दोनों ) में फल देने वाली होती है। उद्यम में रति ही सब प्रकार की जीत है। (क्योंकि) वह इस लोक और परलोक ( दोनों ) में फल देने वाली है।"*

* अशोक की धर्म लिपियों के शिला लेखों में से तेरहवें प्रज्ञापन का यह अनुवाद राय बहादुर गौरीशंकर हीराचंद ओझा और बाबू श्यामसुन्दर बी० ए० द्वारा किया गया है और काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित है। अनुवाद का उपयोग करने के लिये लेखक सभा के प्रति आभारी है।